कपासिका

वार्षिक हिंदी कृषि पत्रिका 2025



भा.कृ.अनु.प–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान

पोस्ट बैग नंबर 2, शंकर नगर पोस्ट ऑफिस, नागपुर 440010

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान

वर्धा रोड, नागपुर (महाराष्ट्र)

कपासिका

(वार्षिक हिंदी कृषि पत्रिका)

(चतुर्थ अंक – 2025)

वर्ष : 2025 अंक : चतुर्थ



संरक्षक एवं प्रकाशक

डॉ. विजय नामदेव वाघमारे

निदेशक

भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर

प्रधान संपादक

डॉ. रचना पाण्डे

वरिष्ठ वैज्ञानिक

भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर

संपादक

श्रीमती रमा अय्यर

निजी सचिव

भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर

संपादक

श्रीमती स्वाती दीक्षित

मुख्य तकनीकी अधिकारी एवं प्रभारी, हिंदी अनुभाग

भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर

संपर्क सूत्र

संपादक

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर

पोस्ट बैग क्र. 2, शंकरनगर पोस्ट ऑफिस, नागपुर–440010 (महाराष्ट्र)

दूरभाष–(07103) 275536 / 38 फैक्स : (07103) 275529

ई मेल : cicrnagpur@gmail.com वेब साइट : http://www.cicr.org.in

■ प्रकाशन : दिसंबर, 2025 ■ आवृत्ती : चतुर्थ

ISBN : 978-93-93826-54-1

सर्वाधिकार : भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर

ISBN : 978-93-93826-54-1

–: केवल विभागीय उपयोग हेतु :–

नोट – पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के निजी है, संस्थान अथवा संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं हैं।



निदेशक की कलम से

कपास विश्व की प्रमुख नगदी एवं रेशेदार फसलों में से एक है, जो वैश्विक वस्त्र उद्योग की आधारभूत कच्ची सामग्री प्रदान करती है। यह न केवल कृषि क्षेत्र में आय का महत्वपूर्ण स्रोत है, बल्कि अंतरराष्ट्रीय व्यापार और औद्योगिक अर्थव्यवस्था में भी अहम भूमिका निभाती है। यह किसानों की आजीविका और ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार है। एक छोटे से बीज से लेकर रुई बनने तक कपास की पूरी प्रक्रिया किसान की मेहनत, प्रकृति की शक्ति और वैज्ञानिक ज्ञान के संतुलन को दर्शाती है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान की स्थापना सन 1976 में दिनांक 1 अप्रैल को की गई। हमें यह बताते हुए प्रसन्नता है कि हमारा संस्थान आगामी वर्ष में 50 वर्ष पूरे करने जा रहा है। इस दौरान हमारा संस्थान लगातार कपास फसल की प्रगति के लिए कार्य कर रहा है। भविष्य में आनेवाली कठिनाईयों के प्रति सजग रहकर नई तकनीकों, पद्धतियों का विकास कर रहा है। साथ ही विभिन्न कार्यक्रमों, कार्यशालाओ, किसान मेला/प्रदर्शनी एवं प्रशिक्षणों द्वारा किसानों का मार्गदर्शन भी कर रहा है, जिससे किसानों की समस्या का समाधान कर फसल की उत्पादकता एवं गुणवत्ता बढ़ाई जा सकें।

*संस्थान के स्थापना दिवस के स्वर्णिम अवसर पर प्रकाशित कृषि पत्रिका **'कपासिका'** का यह अंक कपास अनुसंधान, ज्ञान–विस्तार एवं किसानों के प्रति हमारी निरंतर प्रतिबद्धता का प्रतीक है। वर्तमान समय में कपास की खेती कई चुनौतियों का सामना कर रही है। ऐसे में आवश्यक है कि कपास उत्पादन में पर्यावरण संतुलन और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर भी ध्यान दिया जाए। कपासिका पत्रिका का उद्देश्य कपास की खेती से जुड़ी उपयोगी और विश्वसनीय जानकारी पाठकों तक पहुँचाना है।*

*कृषि पत्रिका **'कपासिका'** का यह अंक प्रशंसनीय होने के साथ–साथ जानकारी से परिपूर्ण है। इस अंक में कपास की नई किस्में एवं प्राकृतिक रंगीन कपास, वर्षा आधारित खेती, सघन तथा उच्च घनत्व रोपन के तहत मृदा प्रबंधन, रसचूसक कीट, गुलाबी सूंडी, कीट प्रबंधन, मधुमक्खी पालन तथा अन्य सामान्य लेख शामिल किये गये है। अंत में, मैं इस अंक के प्रकाशन में शामिल लेखकों, संपादक, सह संपादक मंडल तथा राजाभाषा कार्यान्वयन समिति के सभी सदस्यों को हार्दिक बधाई देता हूँ।*

डॉ. विजय नामदेव वाघमारे

निदेशक

भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर



प्रधान संपादक की कलम से

कपास एक ऐसी महत्वपूर्ण फसल है जो मानव जीवन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई है। यह प्राकृतिक रेशा प्रदान करती है, जिससे बने वस्त्र हल्के, और दैनिक उपयोग के लिए अत्यंत उपयुक्त होते हैं। इसके अतिरिक्त, चिकित्सा क्षेत्र में पट्टियाँ, रुई और अन्य स्वच्छता उत्पादों के निर्माण में इसका विशेष महत्व है। कपास की खेती ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाती है तथा कृषि आधारित उद्योगों को निरंतर कच्चा माल उपलब्ध कराती है।

*हमारे संस्थान द्वारा प्रसारित दिशानिर्देश, हमारी महत्वपूर्ण उपलब्धि और गौरव की गाथा है। जो संस्थान की निरंतर यात्रा को दर्शाता है। प्रस्तुत हिन्दी कृषि पत्रिका **'कपासिका–2025'** का यह अंक ज्ञान, अनुभव, अनुसंधान के साथ–साथ हिन्दी की निरंतर यात्रा को समर्पित है।*

हमें विश्वास है कि यह अंक पाठकों के ज्ञान में वृद्धि करेगा तथा कपास की खेती को अधिक समझदारी, संतुलन और लाभ के साथ अपनाने में सहायक सिद्ध होगा। हम निदेशक महोदय डॉ. विजय नामदेव वाघमारे जी का हार्दिक धन्यवाद करते हैं, जिनके मार्गदर्शन से यह हिंदी कृषि पत्रिका सफलतापूर्वक प्रकाशित हो सकी। हम संपादक मंडल का भी ह्रदय से आभार व्यक्त करते है जिनके योगदान से यह प्रकाशन सम्भव हो पाया। हमें आशा है कि आगे भी आपका सहयोग एवं समर्थन निरंतर प्राप्त होता रहेगा।

डॉ. रचना पाण्डे
प्रधान संपादक (कपासिका),
भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर



संपादक की कलम से

कपास का खेत हर मौसम में किसान को कुछ नया सिखाता है–कभी धैर्य, कभी समझदारी और कभी सही निर्णय का महत्व। आज की खेती केवल परंपरा पर नहीं, बल्कि जानकारी, अनुभव और समय के अनुसार बदलाव को अपनाने पर आधारित है। ऐसे दौर में कपास से जुड़ा सही मार्गदर्शन अत्यंत आवश्यक हो गया है। इसी क्रम में आने वाला वर्ष हमारे संस्थान के 50 वर्ष पूर्ण होने के साथ–साथ संस्थान के सतत अनुसंधान एवं किसान सेवा का अहम पड़ाव भी है।

'कपासिका–2025' का यह अंक, कपास की खेती को जमीनी हकीकत के साथ प्रस्तुत करता है। इसमें खेत की तैयारी से लेकर फसल की देखभाल तक, उन पहलुओं को शामिल किया गया है जो किसानों के रोजमर्रा के निर्णयों को आसान बनाते हैं। लेखों में शोध के निष्कर्षों के साथ–साथ व्यवहारिक अनुभवों को भी स्थान दिया गया है, जिससे जानकारी केवल पढ़ने तक सीमित न रहे, बल्कि उपयोग में लाई जा सके।

हम सब संस्थान के निदेशक डॉ. विजय नामदेव वाघमारे जी का आभार व्यक्त करते हैं, जिनसे हमें मार्गदशन प्राप्त हुआ, इस प्रकाशन की सफलता में हम लेखक–सहलेखकों का भी धन्यवाद करते है जिन्होंने अपने लेख प्रकाशन हेतु भेजे। सहयोग देने वाले सभी योगदानकर्ताओं का मनपूर्वक आभार व्यक्त करते हुए मैं आशा करती हूँ कि 'कपासिका' पत्रिका पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

श्रीमती रमा अय्यर
संपादक द्वय (कपासिका),
भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर



संपादक की कलम से

हिंदी भाषा कृषि ज्ञान को जन–जन तक पहुँचाने का एक सशक्त माध्यम है। समय के साथ हिन्दी ने साहित्य, पत्रकारिता, शिक्षा, विज्ञान तथा तकनीक जैसे विविध क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है। यह केवल परंपराओं की संवाहक ही नहीं, अपितु आधुनिक युग की सशक्त और समर्थ अभिव्यक्ति भी है। इसकी समृद्ध शब्द–संपदा और भावपूर्ण शैली इसे विशिष्ट पहचान प्रदान करती है। जब वैज्ञानिक विचार सरल, स्पष्ट और व्यवहारिक हिंदी में प्रस्तुत किए जाते हैं, तभी उनका वास्तविक लाभ खेत तक पहुँच पाता है।

'कपासिका–2025' पत्रिका का यह अंक हिंदी के प्रचार–प्रसार के उद्देश्य को ध्यान में रखकर तैयार किया गया है। पत्रिका का यह अंक ज्ञान, विस्तार और किसान हित में किए जा रहे निरंतर प्रयासों को उजागर करता है। हमें विश्वास है कि यह हिंदी कृषि पत्रिका हिंदी पाठकों के लिए उपयोगी, ज्ञानवर्धक एवं प्रेरणादायक सिद्ध होगा।

अतः इस प्रयास में सहयोग देने वाले सभी लेखनकारों को धन्यवाद देती हूँ। साथ ही, पत्रिका के प्रकाशन हेतु निरंतर प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए संस्थान के निदेशक ***डॉ.*** *विजय नामदेव वाघमारे जी के प्रति विशेष धन्यवाद एवं कृतज्ञता प्रकट करती हूँ और आशा करती हूँ की भविष्य में आनेवाले अंक को ऐसा ही प्रतिसाद हमे प्राप्त होता रहेगा।*

श्रीमती स्वाती दीक्षित,
संपादक द्वय (कपासिका),
भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., नागपुर

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	कृषि/लोकप्रिय लेख	लेखक	संस्थान का नाम	पृष्ठ संख्या
1.	कपास उत्पादन में नवीन किस्मों की भूमिका	विजय नामदेव वाघमारे	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	1
2.	उत्तर भारत के परिप्रेक्ष्य में देसी कपास का संकर ओज(हेटेरोसिस) प्रजनन	सुभाष चन्द्र, सुरेंदर कुमार वर्मा, विजय नामदेव वाघमारे, ऋषि कुमार, जोगिन्दर बेनिवाल, अमरप्रीत सिंह, सतीश कुमार सैन	भा.कृ.अनु.प. – केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, सिरसा, हरियाणा भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	8
3.	कपास में कम आनुवंशिकता वाले जटिल लक्षणों के लिए सर्वश्रेष्ठ लीनीयर निष्पक्ष प्रेडिक्शन (बी. एल.यू.पी.) आधारित चयन	के. भाग्यलक्ष्मी के.सुभश्री	भा.कृ.अनु.प–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, कोयंबटूर, तमिलनाडु	12
4.	कपास में तीव्र आनुवंशिक विकास और एलईडी लाइट्स का उपयोग	जयंत मेश्राम राहुल फुके अब्दुल वसीम अर्जुन तायडे विजय नामदेव वाघमारे	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	15
5.	रंगीन कपास : प्राकृतिक रंगों की अनोखी धरोहर	दिलीप कुमार वर्मा, रविन्द्र पंवार उपेन्द्र चौधरी	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान क्षे.के. इन्दौर, मध्यप्रदेश	19
6.	वर्षा आधारित क्षेत्रों में उच्च धनत्व और सघन रोपण के तहत कपास उत्पादकता बढ़ाने हेतु मृदा का प्रबंधन	मणिकंडन ए., के. वेलमुरूगन, अर्जुन तायडे विजय नामदेव वाघमारे	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	22
7.	महाराष्ट्र के कपास उत्पादन प्रणाली एवं फसल उत्पादकता का व्यापक परिदृश्य सर्वेक्षण (एल.डी. एस.)	रामकृष्ण जी. आय., आर. जया कुमारवरदन, शैलेश पी. गावंडे, राहुल एम. फुके, शुभम् गौत्रे, रितेश आवारे, मनीष पांडव अर्जुन तायड़े	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	30

8.	वर्षा आधारित कपास की खेती में उच्च घनत्व रोपण प्रणाली अपनाने के लाभ	आर. जयकुमार वरदन, रवि पत्थिया, रामकृष्ण जी. आय., के. शंकरनारायणन, अर्जुन तायडे, एन. प्रताप रेड्डी	भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं, नागपुर, महाराष्ट्र कृषि विज्ञान केन्द्र मेदक, तेलंगाना भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं, क्षे. के., कोयंबटूर, तमिलनाडु	38
9.	क्या हमें संरक्षण जुताई की जरूरत है?	आशुतोष मिश्रा	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	41
10.	भातरत में कपास यंत्रीकरण एवं भविष्य की संभावनाएँ	नारायण बोरकर, रामकृष्णा जी. आय., अर्जुन तायडे	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर	44
11.	कपास के तनों का पुनः उपयोग : री–जेनेरेटिव कृषि में मिट्टी सुधार और संसाधन सृजन के लिए नए दृष्टिकोण	प्रतीक्षा मेहरा, रचना पाण्डे	डब्ल्यूडब्ल्यूएफ – इंडिया, नागपुर, महाराष्ट्र भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	51
12.	"कपास फॉरेस्ट की संकल्पना : योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी), नागालैंड का एक मॉडल"	एच. जी. केंचरड्डी, ज्योतिवी वस्त्रद, रामकृष्णा जी. आय., संजीव कुमार सिंह	कॉलेज ऑफ कम्युनिटी साइंस, सीएयू(आय) तुरा, मेघालय भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र भाकृअनुप – राष्ट्रीय मिथुन अनुसंधान केंद्र, केवीके फेक, पोर्बा, नागालैंड	55
13.	उत्तरी भारत में नरमा–कपास की अगली फसल में गुलाबी सुण्डी के प्रकोप को कम करने के लिए लकड़ीयों का प्रबन्धन	सतपाल सिंह, ऋषि कुमार, अमरप्रीत सिंह, सुभाष चन्द्र, सज्जन कुमार पूनियां, राहुल कुमार, अवनीन्द्र सिंह, महेन्द्र सिंह	भा.कृ.अ.प.– भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं., क्षे. केन्द्र, सिरसा, हरियाणा	64

14.	गुजरात में बीटी कपास में रस चूसक कीटों का प्रतिरोधकता प्रबंधन	पटेल आर. डी., उघरेजा अमिषा आर., पिपरीया प्रतीक्षा आर., देसाई एच. आर., चौहान एम. एम., भंडेरी जी. आर., पटेल एम. सी.	मुख्य कपास संशोधन केंद्र, नवसारी कृषि यूनिवर्सिटी, अठवाँ फार्म, सूरत, गुजरात	68
15.	समागम व्यवधान (रुकावट) की तकनीक से कपास में महत्वपूर्ण कीट, गुलाबी इल्ली का नियंत्रण एवं व्यवस्थापन	पटेल आर. डी., उघरेजा अमिषा आर., देसाई एच. आर., चौहान एम. एम., भंडेरी जी. आर,. पटेल एम. सी.	मुख्य कपास संशोधन केंद्र, नवसारी कृषि यूनिवर्सिटी, अठवाँ फार्म, सूरत, गुजरात	75
16	कीटों में बायोरेशनल कीटनाशकों द्वारा हॉर्मोलिगोसिस	विरेश देवाक्कलवार, रचना पाण्डे, शिवाजी ठुबे, पुजा घोंगे, आर. अश्विनी किशोर त्रिभुवन	आइ ए आर आइ, नागपुर हब केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	83
17	कीट प्रबंधन में एलिसिटर की भूमिका : पौधों की प्राकृतिक रक्षा प्रणाली का सशक्तिकरण	आर. अश्विनी रचना पाण्डे शिवाजी ठुबे विरेश देवाक्कलवार	आइ.ए.आर.आइ, नागपुर हब केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	87
18	एकीकृत कृषि प्रणाली में मधुमक्खी पालन	रचना पाण्डे, रामकृष्णा जी. आय., जी. टी. बेहेरे, विजय नामदेव वाघमारे,	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	90
19	डिजिटल युग में पढ़ने के आनंद को फिर से खोजना	स्वाती दीक्षित	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	96
20	प्रकृति मानव और कृषि	रचना देशमुख, ए. मणिकंडन, पूजा वर्मा अर्जुन तायड़े	भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र	102

रिपोर्ट

21	हिंदी दिवस रिपोर्ट	107
22	वर्ष – 2025 की कार्यशालाएं	109
23	कार्यनिरीक्षण एवं मार्गदर्शन दौरा	115
24	संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति	117

1

कपास उत्पादन में नवीन किस्मों की भूमिका

विजय नामदेव वाघमारे (निदेशक)
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–441108 (महाराष्ट्र)

कपास (गॉसिपियम प्रजाति) विश्व की सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक रेशा फसलों में से एक है तथा वैश्विक कृषि, उद्योग और ग्रामीण आजीविका में इसकी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है। "श्वेत स्वर्ण" के नाम से प्रसिद्ध कपास की खेती हजारों वर्षों से की जा रही है और इसकी बहुउपयोगिता, जैव–अपघटनीयता एवं उपभोक्ता द्वारा प्राप्त वरीयता के कारण यह वस्त्र उद्योग की आधारशिला बनी हुई है। रेशा उत्पादन के अतिरिक्त, कपास बीज तेल, पशु आहार तथा खेती, प्रसंस्करण एवं निर्माण क्षेत्रों में रोजगार सृजन के माध्यम से अर्थव्यवस्था में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है।

मालवेसी कुल के अंतर्गत आने वाला गॉसिपियम वंश 50 से अधिक प्रजातियों से मिलकर बना है, जिनमें से केवल चार प्रजातियाँ ही व्यावसायिक खेती के लिए उपयोग में लाई जाती हैं। इनमें गॉसिपियम हिरसुटम (अपलैंड कपास) तथा गॉसिपियम बार्बाडेंस (अति–दीर्घ रेशा कपास) विश्व कपास उत्पादन में प्रमुख हैं, जबकि गॉसिपियम आर्बोरियम और गॉसिपियम हर्बेसियम मुख्यतः एशिया और अफ्रीका के कुछ भागों में उगाई जाती हैं। प्रत्येक प्रजाति एवं उससे विकसित किस्मों में रेशा लंबाई, मजबूती, महीनता, अनुकूलन क्षमता तथा जैविक एवं अजैविक तनावों के प्रति सहनशीलता के संदर्भ में स्पष्ट भिन्नताएँ पाई जाती हैं।

उन्नत कपास किस्मों का विकास और उनका अंगीकरण कपास आधारित कृषि प्रणालियों में उत्पादकता, रेशा गुणवत्ता और स्थिरता बढ़ाने का प्रमुख आधार रहा है। कपास की विभिन्न किस्मों में वृद्धि, परिपक्वता अवधि, उपज क्षमता तथा कीट, रोग, सूखा एवं लवणता के प्रति सहनशीलता में व्यापक विविधता पाई जाती है। ये किस्मगत अंतर किसानों को विशिष्ट कृषि–जलवायु परिस्थितियों, फसल प्रणालियों एवं बाजार की आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त किस्मों के चयन में सहायता प्रदान करते हैं। वर्तमान परिदृश्य में जलवायु परिवर्तन, मृदा स्वास्थ्य में गिरावट तथा कीट प्रतिरोध की बढ़ती समस्या के संदर्भ में अनुकूलित एवं सहनशील कपास किस्मों का महत्व पहले से कहीं अधिक बढ़ गया है।

विभिन्न कपास किस्मों की विशेषताओं, लाभों एवं सीमाओं की समझ शोधकर्ताओं, विस्तार कार्यकर्ताओं और किसानों, सभी के लिए अत्यंत आवश्यक है। यह लेख कपास किस्मों के महत्व, उनके वर्गीकरण तथा आधुनिक कृषि प्रणालियों में कपास उत्पादकता और स्थिरता बढ़ाने में उनकी भूमिका को रेखांकित करने का प्रयास करता है।

संस्थान द्वारा कपास की उत्पादकता, रेशा गुणवत्ता तथा विभिन्न जैविक एवं अजैविक तनावों के प्रति सहनशीलता बढ़ाने के लिए निरंतर अनुसंधान एवं प्रजनन कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। विशेष रूप से देसी कपास, जैविक खेती के लिए उपयुक्त किस्में, अतिरिक्त लंबे तन्तु (ई.एल.एस) वाली कपास तथा प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास के विकास हेतु आनुवंशिक सुधार एवं उन्नत उत्पादन–सुरक्षा प्रौद्योगिकियों का विकास महत्वपूर्ण रहा है। इस दिशा में कपास आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण, जर्मप्लाज्म के उपयोग तथा उन्नत प्रजनन कार्यक्रमों के माध्यम से अनेक महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त हुई हैं।

कपास सुधार और विकास कार्यक्रमों में आनुवंशिक विविधता हमेशा से ही केंद्रीय भूमिका निभाती रही है। इस दृष्टिकोण से हमारे संस्थान ने जंगली एवं गैर–अनुकूलित जर्मप्लाज्म की क्षमता का दोहन करते हुए पूर्व–प्रजनन (प्रीब्रीडिंग) कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से संचालित किया है। साथ ही, देशभर में उगाई जाने वाली विभिन्न कपास प्रजातियों के जर्मप्लाज्म का संग्रहण, संरक्षण, मूल्यांकन, दस्तावेजीकरण और रखरखाव सुनिश्चित किया गया है। भारत के विविध भौगोलिक क्षेत्रों से देसी कपास एवं बारहमासी भूमि प्रजातियों का अन्वेषण और संरक्षण भी इस रणनीति का अभिन्न हिस्सा है।

आनुवंशिक सुधार के क्षेत्र में हमारी प्राथमिकता उच्च उपज, बेहतर फाइबर गुणवत्ता और कीट–रोग प्रतिरोधी कपास किस्मों के विकास पर रही है। उच्च घनत्व रोपण प्रणाली के लिए अनुकूल उच्च उपज देने वाली बीटी कपास किस्मों का विकास किया गया, जबकि बेहतर जिनिंग आउट टर्न (जीओटी) और लंबी स्टेपल वाली बीटी किस्मों को भी तैयार किया गया। आवर्ती चयन के माध्यम से द्विगुणित (डिप्लोइड) और टेट्राप्लोइड कपास की व्यापक आधार वाली उच्च उपज किस्मों का विकास किया गया, और उच्च उपज, बेहतर फाइबर गुणवत्ता तथा जैसिड सहनशीलता के साथ टेट्राप्लोइड बीटी संकरों का निर्माण किया गया।

छोटे फाइबर की मात्रा को कम करते हुए उच्च शक्ति वाले कपास जीनोटाइप और बेहतर रेशा मजबूती वाली लंबी रेशे की गोसीपियम हिरसुटम किस्मों का विकास किया गया। उच्च उपज और बेहतर जीओटी वाले जी. हिरसुटम की पहचान की गई और उन्नत प्रजनन कार्यक्रमों के माध्यम से उन्हें विकसित किया गया।

हमारे प्रयासों में कपास के लीफ कर्ल रोग (CLcuD) और सफेद मक्खी (whitefly) के प्रति प्रतिरोधी किस्मों का विकास, टेट्राप्लोइड कपास में मध्यम स्टेपल लंबाई सुधार हेतु हेटेरोटिक पूल का निर्माण और जी. हिरसुटम में सूखा सहिष्णु जीनोटाइप का विकास शामिल रहा। इसके अतिरिक्त, जनसंख्या सुधार पद्धति के माध्यम से टेट्राप्लोइड एवं डिप्लोइड कपास में फाइबर गुणों में सुधार किया गया, और शाकनाशी प्रतिरोधी किस्मों के विकास हेतु जर्मप्लाज्म एवं प्रेरित उत्परिवर्तन की स्क्रीनिंग सफलतापूर्वक संपन्न की गई।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान (भा.कृ.अनु.प.–के.क.अनु.सं) द्वारा वर्ष 2014–2024 के दौरान कपास की कुल 41 किस्में विकसित एवं जारी की गई हैं। इनमें 13 गैर–बीटी किस्में (3 रंगीन कपास सहित), 17 बीटी किस्में (जी. हिरसुटम), 8 देसी कपास किस्में (जी आरबोरियम) 3 अतिरिक्त लंबे तन्तु वाली किस्में (जी. बार्बेडन्स) इसके अतिरिक्त 11 आनुवंशिक स्टॉक भी पंजीकृत किए गए हैं। जिनकी जानकारी अनुलग्नक–1 में दी गई है। कपास की किस्में वर्षों के वैज्ञानिक अनुसंधान, चयन और मूल्यांकन का परिणाम होती हैं। प्रत्येक किस्म में ऐसे विशिष्ट गुणों का संयोजन होता है, जो खेत में उसके प्रदर्शन तथा वस्त्र उद्योग में उसके उपयोग की उपयुक्तता को निर्धारित करता है। अनुलग्नक–1 में संस्थान द्वारा विकसित नवीन किस्मों की सूची दी गई है, जो इस लेख के अंत में संलग्न है (चित्र 1–चित्र 11)।

भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित कपास की उन्नत किस्मों के व्यापक प्रसार एवं किसानों तक उनकी पहुँच सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं। इन किस्मों के लोकप्रियकरण हेतु फ्रंट लाइन प्रदर्शन कार्यक्रमों के माध्यम से कृषि विज्ञान केंद्रों तथा किसानों को गुणवत्तापूर्ण बीज उपलब्ध कराए जा रहे हैं। साथ ही इन किस्मों को बीज श्रृंखला में सम्मिलित करने के लिए कृषि

मंत्रालय के डीएसी मांगपत्र में भी शामिल किया गया है, जिससे इनका व्यापक स्तर पर उत्पादन एवं वितरण संभव हो सके।

कपास की उन्नत किस्मों के व्यावसायीकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से राज्य बीज निगमों, निजी बीज उद्योगों तथा जैविक कृषि समूहों के साथ कुल 27 समझौता ज्ञापनों (MoUs) पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इसके अतिरिक्त वर्ष 2014–2024 के दौरान संस्थान द्वारा 162.22 क्विंटल प्रजनक बीज का उत्पादन किया गया, जिससे इन किस्मों के बीज उत्पादन कार्यक्रमों को सुदृढ़ आधार प्राप्त हुआ।

एक प्रमुख कृषि एवं औद्योगिक फसल के रूप में कपास की निरंतर प्रासंगिकता काफी हद तक उपयुक्त कपास किस्मों की उपलब्धता और उनके प्रभावी उपयोग पर निर्भर करती है। किस्म सुधार ने कपास खेती के रूपांतरण में उत्प्रेरक की भूमिका निभाई है। उत्पादन परिवेश के अधिक जटिल होते जाने के साथ अनुकूलित कपास किस्मों का महत्व और भी बढ़ गया है।

केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान द्वारा किए गए कार्यों का मूल उद्देश्य कपास किसानों को लाभकारी, सुरक्षित एवं टिकाऊ खेती के लिए सक्षम बनाना रहा है। इस संस्थान द्वारा किसानों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए कपास किस्मों का विकास किया गया है। क्षेत्र विशेष के अनुरूप किस्मों की अनुशंसा, गुणवत्तायुक्त बीजों की उपलब्धता तथा फील्ड ट्रायल एवं प्रदर्शन प्लॉट के माध्यम से इन किस्मों को किसानों तक पहुँचाया जा रहा है, जिससे उत्पादन क्षमता और आय में वृद्धि संभव है।

केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान आगे भी किसानों के हित में निरंतर प्रयास करता रहेगा। इसके साथ ही, किसानों की भागीदारी बढ़ाने, विस्तार गतिविधियों को सशक्त करने, नवीन किस्मों के शीघ्र प्रसार तथा उन्नत ब्रीडिंग, तकनीकों के उपयोग के माध्यम से कपास खेती को और अधिक टिकाऊ एवं लाभकारी बनाने के प्रयास जारी रहेंगे। इस प्रकार, केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान वर्तमान एवं भविष्य की चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए कपास अनुसंधान को निरंतर नई दिशा प्रदान करता रहेगा।

अनुलग्नक–1

क्र. सं.	नाम	प्रजातियाँ	वर्ष	अनुकूलन का क्षेत्र
1	सीएनए 1003	जी. आर्बोरियम	2015	दक्षिण क्षेत्र राज्य
2	सीसीएच 2623	जी. हिरसुटम	2015	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
3	सीएसएच 3129	जी. हिरसुटम	2017	उत्तर क्षेत्र के राज्य
4	सीएसएच 3075	जी. हिरसुटम	2017	उत्तर क्षेत्र के राज्य
5	सुबिक्षा (सीसीएच 4474)	जी. हिरसुटम	2018	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
6	सुचित्रा (सीसीएच 12–2)	जी. हिरसुटम	2018	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
7	सुनंथा (सीसीएच 14–1)	जी. हिरसुटम	2020	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
8	सेंट्रल कॉटन सीआईसीआर सीएनए 1028 (सीएनए 1028)	जी. आर्बोरियम	2020	मध्य क्षेत्र राज्य
9	सेंट्रल कॉटन सीआईसीआर सीएनए 1032	जी. आर्बोरियम	2020	मध्य क्षेत्र राज्य

	(सीएनए 1032)			
10	सीसीएच 15–1 (सुरक्षा)	जी. हिरसुटम	2021	मध्य एवं दक्षिण क्षेत्र के राज्य
11	सीआईसीआर–बी कॉटन 37 (सीसीबी –51 (सुधन))	जी. बारबाडेन्स	2021	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
12	आईसीएआर–सीआईसीआर बीटी6 (आरएस 2013)	जी. हिरसुटम	2020	उत्तर क्षेत्र के राज्य
13	आईसीएआर–सीआईसीआर जीजेएचवी 374 बीटी	जी. हिरसुटम	2020	मध्य क्षेत्र राज्य
14	आईसीएआर–सीआईसीआर पीकेवी 081 बीटी	जी. हिरसुटम	2020	महाराष्ट्र
15	आईसीएआर–सीआईसीआर रजत बीटी	जी. हिरसुटम	2020	महाराष्ट्र
16	आईसीएआर–सीआईसीआर सूरज बीटी	जी. हिरसुटम	2020	महाराष्ट्र
17	आईसीएआर–सीआईसीआर 16 बीटी	जी. हिरसुटम	2020	मध्य क्षेत्र राज्य
18	आईसीएआर–सीआईसीआर 23 बीटी	जी. हिरसुटम	2020	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
19	सीआईसीआर–बी कॉटन 45 (सीसीबी–143बी)	जी. बारबाडेन्स	2021	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
20	सीआईसीआर–ए कॉटन 46 (सीएनए 1054)	जी. आर्बोरियम	2021	मध्य क्षेत्र राज्य
21	सीआईसीआर–एच कॉटन 47 (सीएनएच 1111)	जी. हिरसुटम	2021	मध्य क्षेत्र राज्य
22	सीआईसीआर–एच कॉटन 48 (सीएनएच 1128)	जी. हिरसुटम	2021	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
23	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 49 (आईसीएआर–सीआईसीआर बीटी 9 (एसआरआई1))	जी. हिरसुटम	2021	मध्य क्षेत्र राज्य
24	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 50 (आईसीएआर–सीआईसीआर बीटी 14 (सीपीटी2))	जी. हिरसुटम	2021	मध्य क्षेत्र राज्य
25	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 51 (आईसीएआर–सीआईसीआर 21 बीटी)	जी. हिरसुटम	2021	मध्य क्षेत्र राज्य
26	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 52 (आईसीएआर–सीआईसीआर 25 बीटी)	जी. हिरसुटम	2021	दक्षिण क्षेत्र के राज्य

27	सीआईसीआर–एच एनसी कॉटन 53 (आईसीएआर–16301डीबी (वैदेही –1)) (रंगीन कपास)	जी. हिरसुटम	2021	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
28	सीआईसीआर–एच कॉटन 54 (सीसीएच 19–4) (नैनो)	जी. हिरसुटम	2022	मध्य एवं दक्षिण क्षेत्र के राज्य
29	सीआईसीआर–बी कॉटन 55 (सीसीबी 51–2)	जी. बारबाडेन्स	2023	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
30	सीआईसीआर–ए कॉटन 56 (सीएनए 1031)	जी. आर्बोरियम	2022	मध्य क्षेत्र राज्य
31	सीआईसीआर–ए एनसी कॉटन 57 (सीएनए 1091) (रंगीन कपास)	जी. आर्बोरियम	2022	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
32	सीआईसीआर–एच एनसी कॉटन 58 (सीएनएच 17395 (शालिनी)) (रंगीन कॉटन)	जी. हिरसुटम	2022	मध्य एवं दक्षिण क्षेत्र के राज्य
33	सीआईसीआर–ए एनसी कॉटन 59(सीएनए 17522) (रंगीन कॉटन)	जी. आर्बोरियम	2022	मध्य क्षेत्र राज्य
34	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 60 (बीटी 183059–5 (युगांक बीटी))	जी. हिरसुटम	2022	मध्य क्षेत्र राज्य
35	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 61 (बीटी 183059–4 (तेजस बीटी))	जी. हिरसुटम	2022	मध्य क्षेत्र राज्य
36	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 62 (सीआईसीआर बीटी 19–32 (नमामि बीटी))	जी. हिरसुटम	2022	मध्य क्षेत्र राज्य
37	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 63 (बीटी 183059–2 (सम्राट बीटी))	जी. हिरसुटम	2022	दक्षिण क्षेत्र के राज्य
38	सीआईसीआर–एच एनसी कॉटन 64 (सीएनएच 18529) (रंगीन कॉटन)	जी. हिरसुटम	2024	मध्य क्षेत्र राज्य
39	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 65 (सीआईसीआर 18 बीटी)	जी. हिरसुटम	2024	मध्य क्षेत्र राज्य
40	सीआईसीआर–एच बीटी कॉटन 66 (सीआईसीआर 20–31 बीटी)	जी. हिरसुटम	2024	मध्य क्षेत्र राज्य
41	सीआईसीआर–ए एनसी कॉटन 67 (सीएनए 1092) (रंगीन कपास)	जी. आर्बोरियम	2024	मध्य क्षेत्र राज्य



चित्र 1 : सीएनए 1003



चित्र 2 : सीएनए 1028



चित्र 3 : जीजेएचवी 374 बीटी



चित्र 4 : पीकेवी 081 बीटी



चित्र 5 : रजत बीटी



चित्र 6 : सूरज बीटी



चित्र 7 : सीआईसीआर 23 बीटी



चित्र 8 : युगांक बीटी



चित्र 9 : तेजस बीटी



चित्र 10 : नमामि बीटी



चित्र 11 : सम्राट बीटी

2

उत्तर भारत के परिप्रेक्ष्य में देसी कपास का संकर ओज(हेटेरोसिस) प्रजनन

सुभाष चन्द्र (वैज्ञानिक), सुरेंदर कुमार वर्मा (प्रधान वैज्ञानिक),
विजय नामदेव वाघमारे (निदेशक),
ऋषि कुमार (प्रधान वैज्ञानिक), जोगिन्दर बेनिवाल (वायपी II),
अमरप्रीत सिंह (वरिष्ठ वैज्ञानिक) एवं सतीश कुमार सैन (प्रधान वैज्ञानिक)
भा.कृ.अनु.प. – केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र सिरसा–125 055 (हरियाणा)

भारत की कपास आधारित उत्पादन प्रणालियों की स्थिरता सुनिश्चित करने में देसी कपास (गोसिपियम आर्बोरियम), की खेती की अपनी एक अहम भूमिका है। देसी कपास ऐतिहासिक रूप से भारतीय कृषि का एक प्रमुख उत्पाद रहा है। भारत में गॉसिपियम आर्बोरियम की खेती का क्षेत्रफल सन् 1947 में कुल कपास की खेती के क्षेत्रफल का 65% था, जो सन 2000 में घटकर लगभग 17% रह गया और बीटी संकरों की शुरुआत के एक दशक बाद तो यह लगभग लगभग 3% रह गया है। हालाँकि, बीटी संकरों की अधिक पैदावार, उनमें रसायनों के कम प्रयोग एवं रेशे की अच्छी गुणवत्ता की वजह से देसी कपास (गोसिपियम आर्बोरियम) की खेती का रुझान समय के साथ कम हुआ है। किन्तु इस गिरावट के बावजूद, सदियों से भारतीय किसानों का देसी कपास के प्रति अटूट विश्वास, विविध कृषि–पारिस्थितिक परिस्थितियों में इस कपास जाति की असाधारण अनुकूलन को दर्शाता है। देसी कपास सीमांत मिट्टी और कम लागत वाली परिस्थितियों के लिए अनुकूल है और इसमें कई जैविक जैसे– पत्ता मरोड़ बीमारी, रस चूसक कीड़े और अजैविक तनावों जैसे सूखा, उच्च तापमान, मिट्टी की लवणता के प्रति अंतर्निहित सहनशीलता है। देसी कपास रेशे की विविधता, तनाव सहनशीलता और स्थिरता के लिए एक मूल्यवान आनुवंशिक संसाधन भी है। इसके रेशे के प्राकृतिक अवशोषक गुण, प्रसंस्करण समय और लागत को कम करके चिकित्सा क्षेत्र को लाभ पहुंचाते है। इस सर्जिकल एब्जॉर्बेंट कॉटन की मांग जनसंख्या में वृद्धि और सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार से सीधे तौर पर जुड़ी हुई है और भारत में स्वास्थ्य सेवा (मेडिटेक) के 9.1% की सीएजीआर से बढ़ने की उम्मीद है। वस्त्र उद्योग से सम्बंधित हथकरघा, खादी और स्वदेशी सूती वस्त्रों जैसे विशिष्ट बाजारों में देसी कपास के प्रति नए सिरे से रुचि देखी जा रही है। इसीलिए शल्य चिकित्सा और डेनिम के लिए कम रेशे वाले कपास की मांग भविष्य में बढ़ने की काफी उम्मीद है। किन्तु इन लाभों एवं संभावनाओं के मद्देनजर, उत्तर भारत में इसकी खेती ज्यादा बार कपास चुनने (कपास बिखरने के कारण), छोटे बोल्स, निम्न गुणवत्ता वाले रेशे (छोटे स्टेपल की लंबाई, कम मजबूती), लंबी फसल अवधि और आधुनिक उत्पादन प्रणालियों के अनुरूप उन्नत संकरों और किस्मों की कमी के कारण बाधित हुई है। इसके अलावा, स्थिर और विविध नर बंध्यता प्रणालियों की सीमित उपलब्धता और मानकीकृत संकर बीज उत्पादन प्रोटोकॉल के अभाव के कारण देसी कपास में संकर प्रौद्योगिकी का बड़े पैमाने पर उपयोग नहीं किया गया है। 1980 के दशक से पहले उत्तरी भारत में देसी कपास के बीज कपास की पैदावार लगभग 10 क्विंटल प्रति हेक्टेयर थी

जिसे 1990 के दशक में सुधारकर 20 किवंटल प्रति हेक्टेयर तक कर दिया गया। वर्तमान में उत्तरी भारत में, देसी किस्मों की उत्पादन क्षमता लगभग 20–25 किवंटल प्रति हेक्टेयर है, वहीं देसी संकरो की उत्पादन क्षमता लगभग 28–30 किवंटल प्रति हेक्टेयर है (तालिका 1)। लेकिन अगर 35 किवंटल प्रति हेक्टेयर से अधिक उपज वाले देसी संकर जिनमें बेहतर फाइबर गुणवत्ता एवं झड़ने की समस्या कम हो तो आर्बोरियम कपास का भविष्य उज्ज्वल है।

तालिका – 1 उत्तर भारत के लिए देसी कपास की किस्में/संकर :

राज्य	देसी कपास	
	किस्म	संकर
हरियाणा #	सीआयसीआर 1, सीआयसीआर 3, एचडी 123, एचडी 324, एचडी 432, पीबीडी 88	सीआयसीआर 2, एएएच 1, एएएच–32, *केआर 64, *केआर 111, *केआर 136, *केआर 149, *केआर 150, $सीआयसीआर 4
पंजाब #	एलडी 1019, एलडी 949, एफडीके 124, सीआयसीआर 1, सीआयसीआर 3, पीबीडी 88	सीआयसीआर 2, मोती (एलएमडीएच 8), एफएमडीएच 3, एफएमडीएच 8, एफएडीएच 9, *केआर 136, *केआर 149, *केआर 150, $सीआयसीआर 4
राजस्थान #	एचडी 123, आरजी 8, आरजी 18, आरजी 542, सीआयसीआर 1, सीआयसीआर 3, पीबीडी 88	राएजे. डीएच 9, सीआयसीआर 2, *केआर 136, *केआर 149, *केआर 150, $सीआयसीआर 4

#स्त्रोत : संम्बधित राज्य के कृषि विश्वविद्यालय/कृषि विभाग के कपास की खेती के लिए गत वर्षो के अनुशंसित पैकेज अथवा/एवं मंत्रालय द्वारा राजपत्रित प्रकाशित *राजपत्र प्रकाशित $किस्म पहचान समिति द्वारा चयनित

नोट : उपरोक्त अनुशंसित किस्में संकर को उपयोग में लिए जाने से पूर्व संम्बधित राज्य के कृषि विश्वविद्यालय/कृषि विभाग के तत्कालीन अनुशंसित पैकेज से पुष्टि की जा सकती है।

'हेटेरोसिस' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम शुल ने आकार और शक्ति में वृद्धि को दर्शाने के लिए किया था। संकर में हेटेरोजाइगोसिस की अभिव्यक्ति के रूप में 'हेटेरोसिस' शब्द का प्रयोग किया गया था। 'हेटेरोसिस' और 'संकर शक्ति' शब्द समानार्थी हैं और अक्सर एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग किए जाते हैं। कपास में प्रथम पीढ़ी के संकरों का अवलोकन सर्वप्रथम मेल (1894) ने रेशे की लंबाई और कृषि संबंधी गुणों के लिए किया था। कुक (1909) ने कपास में हेटेरोसिस के व्यावसायिक उपयोग की संभावना का सुझाव दिया। कई शोधकर्ताओं ने दूर के जनक पौधों से प्राप्त F1 संकरों में निकट के जनक पौधों की तुलना में उच्च हेटेरोसिस देखा। पिछले सालों के शोध में, देसी कपास में अंतःप्रजाति संकरणों में उच्च हेटेरोसिस की जानकारी मिली है।

देसी कपास में संकर ओज प्रजनन के जरिये मुख्यतः दो विधियों से संकर तैयार किये जा सकते हैं **(अ)** हस्त–नपुंसकता एवं पर–परागण हैंड इमसकुलेशन एवं क्रॉसिंग जिसमे हाथो द्वारा मादा लाइन के फूलों में पुकेंसर (नर अंग) को हटाया

जाता है, उसके पश्चात् अलग नर लाइन से पुकेंसर को लाकर परागण करवाया जाता है। हाथ से नर पुंकेसर को अलग करके परागण (डोक विधि) द्वारा अमेरिकन कपास के संकर बीज का उत्पादन भारत में बड़े पैमाने पर सफलतापूर्वक किया जाता है। परन्तु उत्तर भारत की परिस्थितियों में देसी कपास में, फूल का आकार छोटा होता है तथा फूल के झड़ने या मादा भाग की क्षति से नुकसान का डर रहता है। साथ ही हाथ से नर पुंकेसर को अलग करने और परागण के लिए भारी मात्रा में श्रम की आवश्यकता के कारण यह प्रक्रिया कई परिस्थितियों में आर्थिक रूप से अव्यवहार्य हो जाती है। **(ब)** आनुवंशिक नर बंध्यता आधारित संकर (जीएसएम) जिसमे नर बंध्य लाइन के फूलों में हाथ से नर पुंकेसर को अलग करने की आवश्यकता नही होती है, अतः समय एवं मजदूरी की बचत होती है। यह बीज उत्पादन की डोक विधि का अच्छा विकल्प है।

आनुवंशिक नर बंध्यता (जीएमएस) लाइनें आमतौर पर वंशानुक्रम में सरल होती हैं और एक या दो जोड़ी नाभिकीय अप्रभावी या प्रभावी जीनों द्वारा नियंत्रित होती हैं। अप्रभावी जीनों द्वारा नियंत्रित लाइनों का उपयोग संकर बीज उत्पादन के लिए किया जाता है। आनुवंशिक रूप से दोहरे अप्रभावी नर बंध्यता को बनाए रखने के लिए नर बंध्य पौधों को संबंधित विषमयुग्मजी नर उपजाऊ पौधों से प्राप्त पराग से संकरण कराया जाता है। इसकी प्रमुख कमी यह है कि संकरण से प्राप्त जनसंख्या नर बंध्य (मेल स्टराइल) और नर उपजाऊ (मेल फर्टाईल) पौधों में 1:1 के अनुपात में विभाजित हो जाती है। नर उपजाऊ पौधों को पुष्पन अवस्था में हटाना पड़ता है। इससे नर बंध्य पौधों की संख्या कम (50%) हो जाती है, जिससे संकर बीज की उपज कम हो जाती है। इस समस्या को दूर करने का एक तरीका यह है कि प्रति गुच्छे में दो या तीन बीज बोए जाएं और पर्याप्त नर बंध्य पौधे बचे रहें, इसके लिए पुष्पन अवस्था में नर उपजाऊ पौधों को हटा दिया जाए। इससे प्रति एकड़ अधिक पौधो की संख्या के कारण ज्यादा बीज प्राप्त होंगे। प्रति हेक्टेयर कम से कम 10 क्विंटल बीज उपज सुनिश्चित करने के लिए, उपजाऊ पौधों को हटाने के बाद नर बाँझ पौधों की संख्या 30,000 पौधे प्रति हेक्टेयर रखी जानी चाहिए। इस तरह से संकरण ब्लॉक में नर बंध्य पौधों को वांछित नर जनक के परागों से मैन्युअल रूप से परागित करके सरलता से संकर बीज प्राप्त किया जा सकता है (चित्र 1)। आनुवंशिक नर बंध्यता के उपयोग से हाथ से पुच्छीकरण की आवश्यकता समाप्त हो जाती है और इस प्रकार डोक विधि की तुलना में संकर बीज के उत्पादन की लागत भी कम हो जाती है।

वर्तमान में, भा.कृ.अनु.प. – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, सिरसा द्वारा दो देसी किस्मों– सीआयसीआर 1, सीआयसीआर 3 तथा एक आनुवंशिक नर बंध्यता आधारित संकर– सीआयसीआर 2 के पैतृक या मूल जनक लाइनों का नाभकीय बीज एवं प्रजनक बीज तैयार किया जाता है। इस स्टेशन द्वारा लगभग विभिन्न 07 आनुवंशिक नर बंध्यता (जीएमएस) लाइनो का अनुरक्षण किया जा रहा है तथा विभिन्न लाइन × टेस्टर क्रोस्सेस को परखा जा रहा है। हाल में ही स्टेशन द्वारा विकसित की गए हाइब्रिड सीआयसीआर 4 (सीआयएसएए 19–4) को किस्म चयन समिति द्वारा अंकित/चयनित किया गया है। कुछ देसी कपास के जीनप्रारूप जिनके रेशे की लम्बाई 25 मिमी. तक है, का चयन लाइन × टेस्टर क्रोस्सेस के लिए किया जा रहा है। भविष्य में जड़ सड़न रोगों के प्रतिरोधकता वाली, बड़े बोल्स वाली, अच्छे रेशे वाली तथा कम झड़ने वाली लाइनों का क्रॉस विविध आनुवंशिक नर बंध्यता लाइनो से करवा कर वांछित आर्थिक लक्षणों के साथ अधिक उपज वाले आनुवंशिक नर बंध्यता आधारित संकर तैयार किये जा सकते है। इस प्रकार से देसी कपास में संकर ओज प्रजनन द्वारा उत्तर भारत के किसानों के लिए अधिक उपज वाले देसी संकर न केवल कपास की उत्पादकता को बढ़ाएंगे बल्कि कपास विविधकरण को भी बढ़ावा देंगे।



(क) मादा लाइन का नर बंध्य फूल (ख) मादा लाइन का नर उपजाऊ फूल एवं (ग) नर लाइन का फूल

चित्र 1 : आनुवंशिक नर बंध्यता आधारित संकर-सीआयसीआर 2 के पैतृक या मूल जनक लाइन

3

कपास में कम आनुवंशिकता वाले जटिल लक्षणों के लिए सर्वश्रेष्ठ लीनीयर निष्पक्ष प्रेडिक्शन (बी.एल.यू.पी.) आधारित चयन

के. भाग्यलक्ष्मी (वैज्ञानिक) एवं के. सुभश्री (सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी)
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, कोयंबटूर–641003 (तमिलनाडु)

सर्वश्रेष्ठ लीनियर निष्पक्ष प्रेडिक्शन पशु पालन में मानक चयन विधियाँ में से एक है, जिसमें उच्च नस्ल के परिवारों के प्रजनन करने के लिए वंशज के प्रदर्शन के आधार पर बेहतर जीनोटाइप चुने गए। हाल ही में, इसका इस्तेमाल पादप प्रजनन में किया जा रहा है, जहाँ वंशावली–आधारित : सर्वश्रेष्ठ लीनीयर निष्पक्ष प्रेडिक्शन ("बी.एल.यू.पी.") के स्थान पर मार्कर–आधारित पूर्वानुमान का उपयोग किया जा रहा है, जो "जीनोमिक रिलेशनशिप मैट्रिक्स" जाना जाता है। पहले के समय में जीनोटाइप–आधारित फसल चयन के लिए मुख्य रूप से सरल अंकगणितीय माध्यम या "बेस्ट लीनियर अनबॉयस्ड एस्टीमेशन" इस 'सर्वोत्तम लीनीयर निष्पक्ष आकलन' (बी.एल.यू.ई.) का उपयोग किया जाता था। इनकी गणना निश्चित जीनोटाइप प्रभावों पर 'बी.एल.यू.ई' मिक्स्ड मॉडल अवधारणा के आधार पर की गई थी। "बी.एल.यू.पी." के बीच का अंतर क्रमशः कंडीशनल मीन (विशिष्ट स्थितियों का औसत) और मार्जिनल मीन (समायोजित औसत) से समझाया गया है। 'बी. एल.यू.ई' में, किसी इकाई के लिए उम्मीद की गई औसत, उसके वास्तविक मूल्य के बराबर होती है और "बी.एल.यू.पी." में, सभी ईकाईयों द्वारा उम्मीद की गई औसत, सभी वास्तविक प्रभावों के औसत के बराबर होती है। रोबिन्सन (1991) के अनुसार, प्रभावों का अनुमान, बी.एल.यू.पी. आधारित चयन, बी. एल.यू.ई. आधारित विधि की तुलना में अधिक सटीक होता है ।

वंशावली आधारित "बी.एल.यू.पी." : जिन फसलों में मार्कर (आणविक मार्कर) की उपलब्धता सीमित है, वहाँ पैतृक सामग्रियों के चयन के लिए पेडिग्री आधारित बी.एल.यू.पी (ब्लूप) सबसे आशाजनक और प्रभावी तरीका है। जिन फसलों में सघन मार्कर डेटा की उपलब्धता अपर्याप्त या कम होती है, वहां प्रजनन आबादी को विकसित करने के लिए लक्षण–आधारित आवर्ती चयन (फीनोटाइपिक रिकरेंट सिलेक्शन) का उपयोग किया जाता है, जिसके बाद चयन दबाव लागू किया जाता है। फिनोटाइपिक– आधारित चयन अक्सर बड़े प्रजनन आबादियों को संभालते समय श्रेष्ठ एकल पौधे के उन्मूलन और कुछ हीन एकल पौधों के चयन से भ्रमित कर सकता है। इस समस्या को हल करने के लिए, बी.एल.यू.पी. आधारित प्रजनन मूल्य की प्रेडिक्शन, उपलब्ध वंशावली जानकारी के आधार पर एकल पौधों का चयन में सहायता करता है। यह कार्यप्रणाली बड़े डेटासेट से एकल पौधों के प्रजनन मूल्य की गणना करने के लिए वंशावली संबंधों पर आधारित मिश्रित रैखिक मॉडलों का उपयोग करती है।

कपास में महत्ता : वर्षा–आधारित भूमि में कपास की खेती के लिए उच्च उपज क्षमता अत्यंत महत्वपूर्ण है। वैध होने के लिए, इन मूल्यांकन के लिए उन्नत चयन चरण के दौरान बहु–पर्यावरणीय परीक्षणों के एक समूह की आवश्यकता होती है। लक्ष्य क्षेत्रों में खेती के लिए अनुशंसित की जा

सकने वाली उच्च उपज और स्थिर जीनोटाइप्स की पहचान हेतु प्रत्येक जीनोटाइप का कई वर्षों तक विभिन्न स्थानों पर मूल्यांकन किया जाना चाहिए। परिणामस्वरूप, जीनोटाइप्स का परीक्षण करने और अधिक विश्वसनीय परिणाम प्राप्त करने के लिए बहु–पर्यावरण परीक्षण का उपयोग किया जाता है। एएमएमआई मॉडल को आमतौर पर जीजीई बायप्लॉट ग्राफिकल मॉडल के साथ मिलाकर एमई की पहचान करने और प्रत्येक एमई के भीतर उत्कृष्ट जीनप्रारूप की पहचान करने के लिए उपयोग किया जाता है। उपरोक्त सूचीबद्ध दृष्टिकोणों के अतिरिक्त, बहु–पर्यावरण का विश्लेषण करने के लिए बी.एल.यू.पी का उपयोग किया गया है। यह विधि मिश्रित मॉडलों में जीनोटाइप की औसत उपज को बहुत कुशलता से निर्धारित करती है।

हाल के वर्षों में, बहु–पर्यावरण परीक्षण डेटा के विश्लेषण के लिए बी.एल.यू.पी. और एएमएमआई मॉडल का एकीकरण एक शक्तिशाली दृष्टिकोण के रूप में उभरा है। लीनियर मिक्स्ड–इफेक्ट मॉडल (एलएमएम) के साथ संयुक्त रूप से उपयोग किए जाने पर, बीएलयूपी पद्धति पारंपरिक एएमएमआई मॉडल की तुलना में बेहतर पूर्वानुमान सटीकता प्रदान करती है। डब्लूएएसबी, यानी निरपेक्ष स्कोर का भारित औसत, जो एएमएमआई और बीएलयूपी का संयुक्त सूचकांक है, दोनों के लाभों को समाहित करता है। नई किस्मों को पेश करते समय यह सूचकांक प्रजनक स्थिरता और उपज की गुणवत्ता को प्राथमिकता देते हैं। जीईआई को कम करने के लिए, डब्लूएएसबी सूचकांक और उपज को ध्यान में रखते हुए, उच्च उपज क्षमता वाले जीनोटाइप का चयन किया जाता है। कपास में उपज और रेशे से संबंधित अधिकांश लक्षण बहुजीनों द्वारा नियंत्रित होते हैं और पर्यावरण से अत्यधिक प्रभावित होते हैं। इन लक्षणों के लिए कई छोटे मात्रात्मक विशेषता लोकस (क्यू.टी.एल) की रिपोर्ट की गई हैं। इसके अलावा, गोसिपियम हिर्सुटम और जी बारबाडेंस, एलोपॉलीप्लॉइड फसलें होने के कारण, पूरे जीनोम में मार्कर संतृप्ति महंगी होती है। पिछले कुछ दशकों से कपास में सुधार प्रभावी फेनोटाइपिक चयन के माध्यम से किया जा रहा है; इसलिए वंशावली और फेनोटाइपिक डेटा की उपलब्धता इस फसल में वंशावली आधारित बी. एल.यू.पी. को अपनाना आसान बनाती है।

कार्यप्रणाली : विभिन्न वर्षों तक अलग–अलग वातावरण में प्रजनन लाइनों का मूल्यांकन करना आवश्यक है। सभी प्रजनन लाइनों के लिए विभिन्न लक्षणों हेतु उपलब्ध पीढ़ियों, के वंशावली विवरण को दर्ज करना होगा। एकल पौधों के बीच अपेक्षित संबंध का उपयोग करके प्रजनन मूल्यों का पूर्वानुमान लगाने की विधि को हैंडर्सन ने वर्ष 1984 में समझाया था। यह सबसे ज्यादा इस्तेमाल होने वाला मॉडल है।

$$[y = 1n\mu + Xb + Zu + e]$$

जहां 'y' फेनोटाइपिक रिकॉर्ड का एक वेक्टर है, 'μ' समग्र माध्य है, '1n' एक वेक्टर है जिसमें सभी मान एक हैं, 'b' वर्ष प्रभावों का एक वेक्टर है, 'X' वर्ष प्रभावों के लिए रिकॉर्ड आवंटित करने वाला एक मैट्रिक्स है, 'Z' एक मैट्रिक्स है जो की प्रजनन मूल्यों में रिकॉर्ड आवंटित करता है, 'u' प्रजनन मूल्यों का एक वेक्टर है और 'e' अवशिष्ट वेक्टर है। बी.एल.यू.पी. मान और अनुमानित प्रजनन मूल्यों ईबीवी का अनुमान मिश्रित मॉडल का उपयोग करके लगाया जाना चाहिए, जिसके बाद आनुवंशिकता की गणना की जाती है।

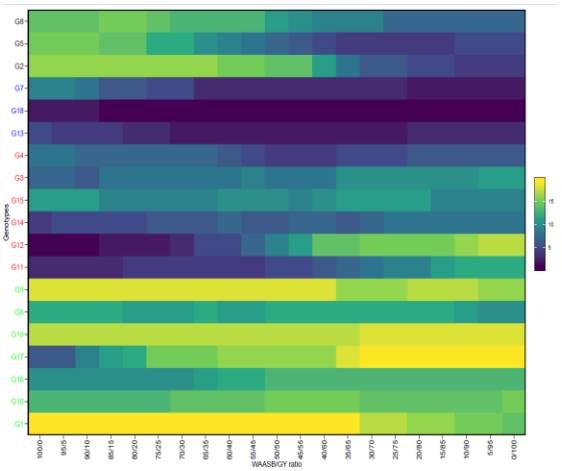
h^2 = [आनुवंशिक भिन्नता /(आनुवंशिक भिन्नता + पर्यावरणीय भिन्नता)]

मिश्रित मॉडल की पूर्वानुमान सटीकता का आकलन; फेनोटाइप और अनुमानित प्रजनन मूल्यों के बीच सहसंबंध का उपयोग करके करना चाहिए। एक वैलिडेशन सेट का उपयोग किया जाना आवश्यक है और शेष ब्रीडिंग मटेरियल ट्रेनिंग सेट के रूप में कार्य करेगा। वर्षवार जानकारी को मॉडल

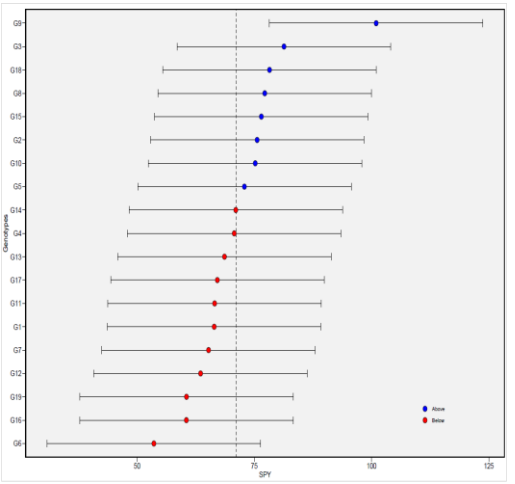
में निश्चित प्रभाव के रूप में शामिल किया जाएगा। विश्लेषण करने और प्रजनन मूल्यों की भविष्यवाणी करने के लिए कई पैकेज उपलब्ध हैं। बेसी, सेलेजेन–आरईएमएल/ बीएलयूपी (ब्लूप), मेटा–आर, मिक्सब्लूप, जेनोमैट्रिक्स विश्लेषण के लिए उपयोग किए जाने वाले कुछ सॉफ्टवेयर है।

लाभ : चयन के लिए बी.एल.यू.पी. का उपयोग करने का मुख्य लाभ यह है कि इससे विशेष रूप से बहुजीनी वंशागति वाले जटिल लक्षणों के लिए तीव्र आनुवंशिक लाभ प्राप्त होते हैं। बी.एल.यू.पी. (ब्लूप), विशेष रूप से कम आनुवंशिकता वाले लक्षणों के लिए, फेनोटाइपिक चयन की तुलना में अधिक सटीक है, जो पर्यावरणीय कारकों से अत्यधिक प्रभावित होते हैं। इस विधि में संभावित कठिनाई यह है कि वंशावली संबंध मैट्रिक्स के माध्यम से कुल भिन्नता को समझने के लिए वंशावली विवरण सटीक और पूर्ण होना चाहिए।

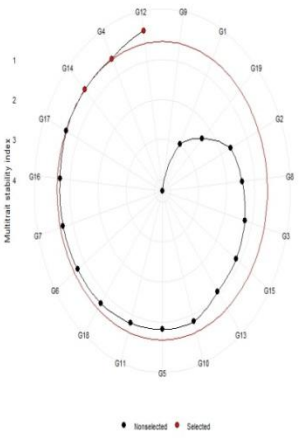
परिणाम को मल्टी ट्रेट इंडेक्स के आधार पर हीटमैप, बायप्लॉट और स्टेबिलिटी प्लॉट के रूप में दिखाया गया है। चित्र 'अ' में इसका सचित्र निरूपण दिया गया है।



चित्र 1



चित्र 2



चित्र 3

1. डब्लू.ए.ए.एस.बी.वाय. इंडेक्स के हीटमैप, जो उपज और स्थिरता के वेटिंग स्कोर के अनुसार जीनोटाइप की रैंक दिखाते हैं।
2. कपास जीनोटाइप के लिए एकल–पौधे की उपज के सर्वोत्तम लिनीयन प्रेडिक्शन पूर्वानुमान माध्य मान।
3. एम.टी.एस.आय. इंडेक्स के आधार पर जी. बारबाडेंस जीनोटाइप की रैंकिंग बढ़ते क्रम में।

4

कपास में तीव्र आनुवंशिक विकास और एलईडी लाइट्स का उपयोग

जयंत मेश्राम (प्रधान वैज्ञानिक), राहुल फुके (वैज्ञानिक),
अब्दुल वसीम (तकनिकी अधिकारी),
अर्जुन तायड़े (विभाग प्रमुख), विजय नामदेव वाघमारे (निदेशक)
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–441108 (महाराष्ट्र)

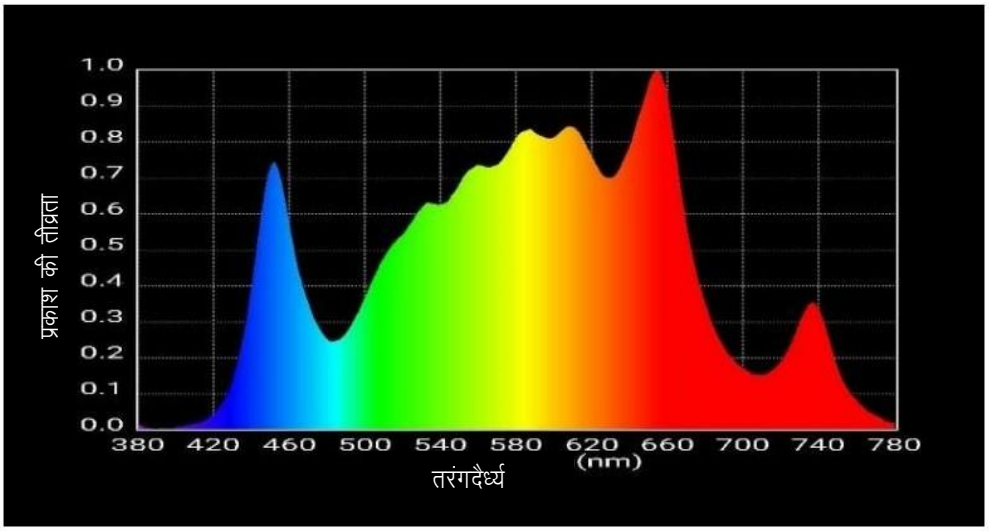
स्पीड ब्रीडिंग खेती में फसलों की नई और उन्नत किस्में विकसित करने की एक आधुनिक तकनीक है, जो 8–10 साल के पारंपरिक समय को घटाकर सिर्फ 4–5 साल कर देती है। यह नियंत्रित वातावरण (जैसे एल ई डी लाइट्स, तापमान नियंत्रण) का उपयोग करके कम समय में पौधों की कई पीढ़ियां उगाती है, जिससे जलवायु–प्रतिरोधी बीज जल्दी उपलब्ध होते हैं। हाल ही में ऑस्ट्रेलियाई शोधकर्ताओं ने स्पीड तकनीक के माध्यम से पृथ्वी पर कम समय में अनाज उगाने में सफलता पाई है। इस तकनीक द्वारा डीएस फराडे नामक गेहूँ की प्रजाति को विकसित किया गया। यद्यपि स्पीड ब्रीडिंग तकनीक अभी अपनी प्रायोगिकशाला अवस्था में है लेकिन इसके व्यापक अनुप्रयोग की संभावना से इन्कार नहीं किया जा सकता, जैसे–उदाहरणस्वरूप इस तकनीक का प्रयोग वर्टिकल फार्मिंग सिस्टम में किया जा सकता है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार 2050 तक वर्तमान से 80 फीसदी अनाज की आवश्यकता होगी। ऐसे में यह तकनीक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में काफी सहायक होगी। बागवानी कृषि में इस तकनीक के प्रयोग से फल एवं सब्जी उत्पादन में वृद्धि की संभावना जताई जा रही है। उद्योग क्षेत्र में भी इस तकनीक के अनुप्रयोग की व्यापक संभावना है। इसके माध्यम से फसलों की नई किस्मों या संकर किस्मों का विकास किया जा सकता है। इस तकनीक का प्रयोग गेहूँ के अलावा अन्य फसलों के उत्पादन में किया जा सकता है, खरीफ में कपास की खेती और विशेषकर रबी फसलों, जैसे–जौ, चना एवं तिलहन आदि।

स्पीड ब्रीडिंग तकनीक : कृषि में स्पीड ब्रीडिंग तकनीक से तात्पर्य ग्लास हाउस में नियंत्रित जलवायिक दशाओं में फसलों के उत्पादन से है। अमेरिका के वैज्ञानिकों ने सर्वप्रथम नासा (नेशनल एरोनॉटिक्स एंड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन) इस तकनीक का इस्तेमाल अंतरिक्ष में गेहूँ और सब्जी उगाने के लिये किया था। इसके तहत गेहूँ पर लगातार प्रकाश का प्रयोग किया गया था और उसकी ब्रीडिंग क्षमता बढ़ गई थी। इस तकनीक में पौधों को कृत्रिम नियंत्रित वातावरण प्रदान किया जाता है। इसमें प्रकाश की अवधि, तापमान, आर्द्रता और कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता को वैज्ञानिक रूप से नियंत्रित किया जाता है। इस वातावरण में पौधे तेजी से बढ़ते हैं और उनकी जनरेशन साइकिल घट जाती है। परिणामस्वरूप, एक वर्ष में 4 से 6 पीढ़ियां विकसित करना संभव हो जाता है। एक ही वर्ष में अधिकतम पीढ़ियां (जनरेशन) विकसित की जाने के कारण नई और उन्नत किस्मों का विकास तेजी से हो सकता है।

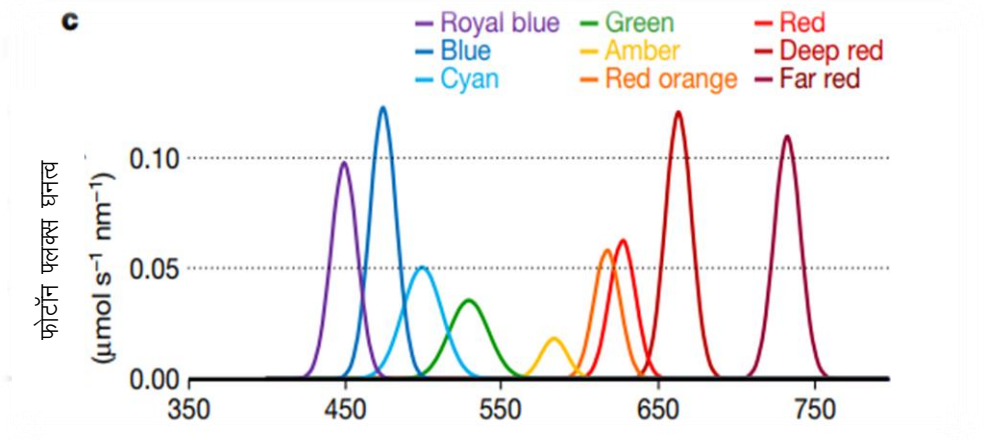
प्रकाश प्रणाली : पर्यावरण नियंत्रण की स्थिति में कृत्रिम प्रकाश, विशेषकर एलईडी, महत्वपूर्ण होता है। प्राकृतिक धूप अपर्याप्त होती है। एलईडी ऊर्जा बचाता है, लंबी उम्र प्रदान करता है और पौधों की वृद्धि के लिए उपयुक्त प्रकाश श्रृंखला को उत्सर्जित करता है। नई एलईडी स्पेक्ट्रम प्रौद्योगिकी जैसे–

1. **संपूर्ण श्रृंखला एलईडी :** यह एलईडी प्रणाली प्राकृतिक सूरज की रोशनी की नकल करती है। पौधों की स्वस्थ वृद्धि के लिए लाल, नीले और हरे प्रकाश का संतुलन प्रदान करती है।

2. **समायोज्य स्पेक्ट्रम एलईडी :** यह एलईडी प्रकाश की तीव्रता और तरंग दैर्ध्य को अनुकूलित करने की लिए उपयोग की जाती है, जो पौधों की वृद्धि के विभिन्न चरणों (जैसे की हरी पत्तियों की वृद्धि के लिए नीला प्रकाश और फूलों के लिए लाल प्रकाश) पर निर्भर करती है।



चित्र 1 : सौर स्पेक्ट्रम और तरंग दैर्ध्य



चित्र 2 : आधुनिकतम एलईडी और तरंग दैर्ध्य

आधे से कम समय में किस्म विकसित : पारंपरिक पादप प्रजनन विधियों से कपास की एक नई किस्म विकसित करने में 10 से 12 वर्ष लगते हैं। इसके बाद चयन, परीक्षण और विभिन्न स्थानों पर मूल्यांकन की प्रक्रिया होती है। इस पूरी प्रक्रिया में 2 से 3 वर्ष का समय लगता है, तब जाकर किसी किस्म को किसानों के लिए अनुशंसित किया जाता है, लेकिन यदि स्पीड ब्रीडिंग को मार्कर

असिस्टेड सिलेक्शन (एमएएस) और जैव प्रौद्योगिकी की आधुनिक तकनीकों के साथ जोड़ा जाए तो यही कार्य 5 से 6 वर्षों में पूरा किया जा सकता है। कई मामलों में इससे भी कम समय में नई किस्में विकसित होने की संभावना है।

पारंपरिक खेती की समस्याएं :

पारंपरिक खेती और प्रजनन प्रणाली में किसान या वैज्ञानिक एक साल में केवल एक ही फसल ले पाते हैं। अनुसंधान को तेज करना हो तो दूसरा विकल्प शटल ब्रीडिंग का होता है, जिसमें भारत के उन क्षेत्रों में गर्मियों के दौरान जहाँ तापमान अपेक्षाकृत ठंडा रहता है, इन स्थानों में लगाई जाती है, लेकिन इस पद्धति से भी अधिकतम दो फसलें प्रति वर्ष ही ली जा सकती हैं, जो कि आधुनिक कृषि अनुसंधान की गति के लिए पर्याप्त नहीं है।

गति प्रजनन पर हालिया शोध :

इंटरनेशनल क्रॉप्स रिसर्च इंस्टीट्यूट फॉर द सेमी–एरिड ट्रॉपिक्स (इक्रीसेट) के वैज्ञानिकों ने 2024 में इतिहास रचते हुए भारत की पहली गर्मी–रोधी अरहर की किस्म 'आईसीपीवी 25444* विकसित की है। अरहर की नई किस्म भीषण गर्मी यानी 45 डिग्री सेल्सियस तक के तापमान को झेल सकती है। इतना ही नहीं यह मात्र 125 दिनों में तैयार हो जाती है, जो भारतीय किसानों के लिए किसी वरदान से कम नहीं। इक्रीसेट ने दुनिया की पहली अरहर स्पीड–ब्रीडिंग प्रणाली विकसित की, जिसकी मदद से साल में चार पीढ़ियां उगाई जा सकती हैं। इससे नई किस्म विकसित करने में लगने वाला समय 15 साल से घटकर महज पांच साल रह गया है। इसमें बीज जल्दी अंकुरित होते हैं, पौधा तेजी से बढ़ता है, फूल जल्द आते हैं और फसल जल्द पक जाती है। यह बदलाव बेहतर प्रकाश, तापमान, नमी नियंत्रण, सिंचाई, पोषण और पौधों की दूरी जैसे कारकों के अनुकूल और बेहतर प्रबंधन से संभव हुआ है।

स्पीड ब्रीडिंग की मुख्य विशेषताएं और लाभ :

1. कम समय में अधिक फसलें : पारंपरिक तरीके से साल में 1–2 फसलें मिलती हैं, जबकि स्पीड ब्रीडिंग से चावल जैसी फसलों की 5–6 फसलें एक वर्ष में ही उगाई जा सकती हैं।

2. यह तकनीक बदलते मौसम के अनुसार नई किस्में लाने और कृषि उत्पादकता बढ़ाने में एक क्रांति की तरह है।

3. इसमें उन्नत एलईडी लाइट (पीपीएफडी), सटीक तापमान, और आर्द्रता नियंत्रण का उपयोग किया जाता है ताकि पौधों की वृद्धि तेज हो।

4. इसे मार्कर असिस्टेड सिलेक्शन (एमएएस) और जीनोम एडिटिंग के साथ मिलाकर इस्तेमाल किया जा रहा है।

तेज प्रजनन के साथ फसल सुधार में क्रांतिकारी बदलाव लाना सहज होगा : स्पीड ब्रीडिंग तकनीक से विकास चक्र को बीज बोने से लेकर कटाई तक पूरा करने में लगने वाले समय को कम करने के लिए उन्नत विधियाँ प्रदान करता है, जिससे फसल अनुसंधान को बढ़ावा मिलता है, प्रजनन का समय कम होता है, किस्मों का विकास तेजी से होता है और उन्नत कृषि समाधान मिलते हैं। प्रकाश अवधि, प्रकाश, तापमान और नियंत्रित पर्यावरणीय परिस्थितियों को अनुकूलित करके, प्रति वर्ष केवल एक पीढ़ी के बजाय कई पीढ़ियों को विकसित करने में मदद होती हैं।

इसके लिए त्वरित प्रजनन प्रोटोकॉल विकास पर जोर देना होगा। तीव्र पीढ़ीगत उन्नति के लिए प्रोटोकॉल विकास समय की मांग है। वृद्धि को गति देने के लिए प्रकाश अवधि, तापमान, प्रकाश की तीव्रता, आर्द्रता और पोषण को नियंत्रित करना होगा। जल्दी फूल आने और बीज बनने के लिए फसल चक्र का अनुकूलन सहयोगी संस्थानों के

साथ संयुक्त अनुसंधान और परिणामों का सत्यापन कर जल्द तीव्र आनुवंशिक लाभ लेना होगा।

हमारी ताकत और सीआईसीआर के प्रयास: आईसीएआर (एनएएचईपी और फसल विज्ञान प्रभाग) ने फसल सुधार के लिए स्पीड ब्रीडिंग पर कृतज्ञ 3.0 हैकथॉन का आयोजन 2023 में किया जिसमें केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर ने दूसरा पुरस्कार जीता। वैज्ञानिकों की टीम ने कृत्रिम एलईडी प्रकाश और हार्मोन उपचार का उपयोग करके एक वर्ष में प्रजनन चक्र की 3 पीढ़ियाँ प्राप्त करने की अवधारणा का प्रमाण प्रस्तुत किया।



चित्र 3 : केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर की टीम "कॉटन एक्सेलेरेटर" ने 16 जुलाई, 2023 को नई दिल्ली के एनएएससी कॉम्प्लेक्स में आयोजित 95वें आईसीएआर स्थापना दिवस के दौरान फसल सुधार के लिए स्पीड ब्रीडिंग पर हैकाथॉन 3.0वें (कृतज्ञ) में दूसरा पुरस्कार प्राप्त किया।

गति प्रजनन के अनुप्रयोग :

1. पादप फेनोटाइपिंग
2. जीन मानचित्रण
3. जीनोम संपादन
4. जीनोम का चयन
5. ट्रांसजेनिक पौधे
6. मार्कर सहायता प्राप्त चयन

चुनौतियां :

1. बुनियादी ढांचे के लिए उच्च प्रारंभिक निवेश
2. प्रकाश और जलवायु नियंत्रण के लिए ऊर्जा की अधिक खपत
3. सहयोगात्मक अनुसंधान और ज्ञान प्रसार की सीमित उपलब्धता
4. सभी फसलों पर समान रूप से प्रभावी नहीं
5. बड़े स्तर पर लागू करने के लिए महँगी सुविधाएँ चाहिए

जलवायु परिवर्तन, तापमान में असामान्य उतार चढ़ाव, नई बीमारियों और कीटों के प्रकोप के कारण किसानों को हर साल नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। ऐसे में अनुसंधान की धीमी गति किसानों के लिए नुकसानदेह साबित हो सकती है। स्पीड ब्रीडिंग तकनीकि माध्यम से बदलते पर्यावरणीय कारकों के अनुरूप तेजी से कपास की किस्में का विकास का एक सशक्त माध्यम है। स्पीड ब्रीडिंग के साथ–साथ जीनोम एडिटिंग तकनीक के माध्यम से पौधों के जीनोम में मौजूद डीएनए में नियंत्रित और सटीक बदलाव किए जाते हैं, जिससे वांछित गुणों का विकास संभव होता है।

5

रंगीन कपास : प्राकृतिक रंगों की अनोखी धरोहर

दिलीप कुमार वर्मा (प्रधान वैज्ञानिक),
रविन्द्र पंवार (वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता) एवं
उपेन्द्र चौधरी (मुख्य तकनीकी अधिकारी)
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षे.के., इन्दौर – 452 001 (मध्यप्रदेश)

कपास भारत की प्रमुख वाणिज्यिक फसलों में से एक है। पारंपरिक रूप से सफेद रंग का कपास ही अधिकतर उगाया जाता है, लेकिन प्रकृति ने कपास की कुछ ऐसी विशेष किस्में भी दी हैं जिनके रेशे स्वाभाविक रूप से रंगीन होते हैं। इसे रंगीन कपास कहा जाता है। यह कपास बिना किसी कृत्रिम रंगाई के ही लाल, हरा, भूरा या धूसर (ग्रे) रंग लिए होता है। सफेद कपास को "वाइट गोल्ड" के नाम से जाना जाता है, जो मुख्य रूप से फाइबर और कपास के बीज के लिए उगाया जाता है। इसका उपयोग परिधानों और घरेलु वस्त्रों की विस्तृत श्रृंखला के लिए है। कपास में कई अंतर्निहित गुण होते है जैसे कोमलता, नमी को अवशोषित, ताप प्रतिरोध, उच्च फाइबर क्षमता, गैर – एलर्जी। इसके अतिरिक्त कपास रंगने योग्य, संभालने और सिलने में भी आसान है। पारम्परिक सफेद कपास दुनिया में सबसे आधिक मांग वाला फाइबर है और कई देश सकल घरेलु उत्पाद के एक महत्वपूर्ण प्रतिशत के लिए कपास पर निर्भर है। आजकल बीटी कॉटन का भारत और दुनिया के अन्य हिस्सों में कपास में प्रतिरोध क्षमता में कमी के कारण उत्पादन में कमी हो रही है।

पर्यावरण के प्रति जागरूक समुदाय विशेष रूप से हानिकारक रंगों और कीटनाशकों से रहित सूती वस्त्रों की मांग कर रहे है। इस सन्दर्भ में, रंगाई के बिना जैविक कपास और प्राकृतिक से रंगीन कपास का महत्व बढ़ा रहा है। प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास रंगने की प्रक्रिया को पूरी तरह से समाप्त कर देता है क्योंकि इस कपास में फाइबर के कोशिकिय स्तर में रंगीन जीन मौजूद होता है, जो कपास के बढ़ने और परिपक्व होने पर उसे प्राकृतिक रंग प्रदान करता है। जैविक खेती के तरीकों से उगाया गया प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास स्वच्छ पर्यावरण अनुकूल वातावरण के लिए सबसे उपयुक्त विकल्प है।

इतिहास



चित्र : 1 रंगीन कपास

रंगीन कपास 2500 ईसा पूर्व तक मानव जाति द्वारा उगाई और उपयोग की जाती थी। इन स्थलों में प्राप्त रंगीन तन्तु में चॉकलेट, नीला, बैंगनी, हरा, भूरा, महोगनी लाल, लाल और क्रीमी – सफेद जैसे रंग दिखाई देते हैं जो गॉसिपियम की चार प्रजातियों में पाए जाते हैं। टेट्राप्लोइड प्रजाति *जी. बार्बडेंस* और *जी. हिर्सुटम* की खेती दक्षिण और मध्य अमेरिका में 2300 ईसा पूर्व से की जा रही थी। सफेद कपास की तुलना में, प्राकृतिक रूप से रंगीन तन्तु छोटे, मोटे और कमजोर थे। वे केवल हाथ से कताई के लिए उतरदायी थे। हालाँकि, औद्योगिक क्रांति के बाद पावरलूम और जिनिंग मशीनों के आगमन के साथ, दृश्य बदल गया। बताया जाता है कि द्वितीय विश्वयुद्ध में सिंथेटिक रंगों के कमी के कारण तत्कालीन

सोवियत संघ सैनिकों की वर्दी बनाने के लिए बड़ी मात्रा में रंगीन कपास की खेती की जाती थी। हालाँकि, बहुमुखी जींस का रंग नीला, कपास प्रजनकों से दूर है।

खेती और उत्पादन :

रंगीन कपास के क्षेत्र में अब जेनेटिक इंजीनियरिंग ने कदम रख दिया है। विस्कासिंस में दो कंपनिया आर्गसेट्स और उत्तरी केलिफोर्निया में केल्गीन उन जीनों को सफेद कपास में डालने की योजना बना रही है जो नील के पौधे में नीले रंग के उत्पादन के लिए जिम्मेदार है। वे एक ही बार में मशीन अनुकूल नीली कपास का उत्पादन करने की उम्मीद करते हैं। रंगीन कपास में कई कीट और रोग–प्रतिरोधी गुण होते हैं और ये सूखा और लवण प्रतिरोधी होते हैं। हाल के वर्षों में जैविक कपास और प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास में रूचि फिर से बढ़ रही है क्योंकि इसकी खेती और प्रसंस्करण हानिकारक और प्रदूषणकारी रसायनों में रहित है। इस तथ्य के बावजूद की रंगीन सूती कपड़े की सीमाए है, इसके कई फायदे हैं जो इसके पक्ष में जाते है। इन्हें इस प्रकार गिनाया गया है – प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास उगाने वालों को कीटनाशकों की कम आवशयकता हो सकती है।

तालिका 1 : भारत की रंगीन कपास की किस्में

क्र.	नाम / कोड़	रंग / वर्णन	उपयुक्त क्षेत्र/ संस्थान	विशेषताएँ / कमी
1	एम एस एच–53 (सी आय सी आर, नागपुर)	गहरा भूरा	सीआयसीआर द्वारा विकसित, व्यावसायिक उपयोग के लिए प्रयुक्त	रंग स्थिर है, धागे योग्य कपास, लेकिन उत्पादन सफेद कपास की तुलना में कम
2	सीआयसीआर–ए कपास 57 (सीएनए–1091)	प्राकृतिक रंग–भूरा	बारिश आधारित खेती वाले दक्षिणी क्षेत्र (तेलंगाना, आंध्र, कर्नाटक, तमिलनाडु)	मध्यम गुणवत्ता, छोटे–फाइबर, तार मजबूतता मध्यम
3	सीआयसीआर–ए कपास 59 (सीएनए 17522)	हल्का भूरा	मध्य भारत के बारिश वाले क्षेत्र (महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश)	रंग स्थिरता ठीक है; लेकिन उत्पादन एवं फाइबर लंबाई में कुछ सीमाएँ हैं
4	डीडीसीसी–1 (विद्यापीठ / यूएएस धारवाड़)	बादामी–भूरा /प्राकृतिक भूरा	कर्नाटक, विशेषकर धारवाड़; भारत के कुछ खेतों में प्रायोगिक स्तर पर	रंग अच्छा; लेकिन उपज सफेद कपास की तुलना में कम; धागे बनाने में कभी–कभी गुणवत्ता में अंतर आ सकता है
5	डीडीबी–12, डीएमबी–225, डीजीसी–78	कुछ प्राकृतिक रंगीनता के साथ किस्में	यूएएस/कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा दक्षिण और मध्य भारत में परीक्षण में	अभी प्रयोगात्मक / प्रदर्शन चरण में; उपज, धागा गुणवत्ता आदि को सुधारने की आवश्यकता
6	वैदेही–95	हल्का भूरा रंग	केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर द्वारा विकसित एवं केंद्रीय कपास प्रोद्योगिकी अनुसंधान संस्थान द्वार प्रसंस्करण	बेहतर गुणवत्ता प्रदान करती है; लेकिन उत्पादन, बाजार में स्वीकार्यता की चुनौतियाँ अभी बनी हुई हैं

चुनौतियाँ : अनुवांशिकिविद कपास में रंग के जटिल वंशानुक्रम पैटर्न का अध्ययन कर रहे हैं। तन्तु का रंग तीन स्थानों पर स्थित जीनों के एक समूह द्वारा निर्धारित होता है – एलसीआई, एलसी 2, और एलसी 3 ये सफेद एलीलस पर हावी होते हैं और संशोधक जीन के साथ मिलकर काम करते है। अक्सर, लिंट रंग के जीन पिल्योट्रोपिक पाए जाते हैं, यानी, वे एक से अधिक लक्षणों को नियंत्रित करते है। अर्थिक और तकनीक रूप से बेहतर रंगीन कपास के विकास में यह सबसे महत्वपूर्ण समस्या रही है। उदाहरण के लिए, *जी. अर्बोरियम* और *जी. बर्बाडेन्स* में भूरे रंग का जीन लिंट की लंबाई और उसकी सुंदरता को दबा देता है। इसी तरह, *जी. हिर्सुटम* में हरे और भूरे रंग के लिंट फाइबर के विकास को रोकते हैं। आम तौर पर, सभी रंगीन जीनोटाइप में फाइबर के गुण सफेद किस्म से काफी कम होते हैं। हालांकि, सभी एसोसिएशन प्रतिकूल नहीं है। हिर्सुटम ताशकंद (भूरा) और अरकंसास हरा किस्मों का बीजकोष वजन अधिक होता है। इसके अलावा रंग कई विकास पर्यावरणीय कारकों, वजन विशेष रूप से सूर्य के प्रकाश, मिट्टी के पोषण और मिट्टी के प्रकार से भी प्रभावित होता है। धारवाड़ के वैज्ञानिक रंग निर्माण के समय तंत्र का अध्ययन कर रहे हैं। उनके अध्ययन में पता चलता है की तंतुओं में रंग का विकास बीजकोष बनने के 30 से 40 दिनों के बीच होता है। बीजकोष बनने के 30 दिन तक रेशे सफेद थे। 40 दिन पुराने बीजकोषों में रंगीन रेशे दिखाई दिए। विलायक निष्कर्षण प्रयोगों से पता चला है कि वर्णक फ्लेवोनोइड समूह से संबंधित हो सकता है। जीन क्रिया के बुनियादी पहलू, अन्य विशेषताओं के साथ उनका जुड़ाव और अंतः क्रिया रंग उत्पादन में पर्यावरणीय मापदंडो का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया जाना चाहिए। तकनीकी दृष्टिकोण से "देसी" प्रकार के कुछ रंगीन सूती कपड़े हमारे देश के मूल है। इनमें से कुछ अभी भी आन्ध्र प्रदेश के येरापट्टी जैसे आंतरिक क्षेत्रों में अलग–अलग इलाकों में उगाये जा रहे है जिन्हें स्थानीय लोगों द्वारा हाथ से कटाई और बुनाई हेतु उपयोग किया जाता है। ये किस्में छोटे स्टेपल वाली है और मिल प्रसंस्करण के लिए बिलकुल उपयुक्त नहीं है। रंगीन कॉटन के विकास और विपणन में फाक्स फाइबर इंक- यूएसए की सुश्री सेली फाक्स द्वारा हासिल की गई सफलता को देखते हुए, हमारे देश में अच्छी गुणवत्ता वाले रंगीन कपास के विकास हेतु नए सिरे से रुचि पैदा हुई है।

रंगीन कपास एक ऐसा वरदान है जो हमें प्रकृति से मिला है। यह न केवल पर्यावरण की रक्षा करता है बल्कि किसानों और उद्योगों के लिए नए अवसर भी प्रस्तुत करता है। यदि इसके अनुसंधान, बीज विकास और प्रचार–प्रसार पर ध्यान दिया जाए तो भविष्य में यह कपास उद्योग के लिए एक सतत् और लाभकारी विकल्प बन सकता है। प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास में रूचि केवल जिज्ञासा नहीं है बल्कि स्पष्ट रूप से और रचनात्मक रूप से इस भूली हुई विरासत को सामने लाने की दिशा में निर्देशित है और इसका उद्देश्य पर्यावरण के प्रति जागरूक "हरित–प्रेमी" वाले उपभोगता को एक विशिष्ट उत्पाद प्रदान करना है। प्राकृतिक रूप से रंगीन कपास का आन्दोलन अभी शुरू हुआ है और चीन के नेतृत्वकर्ता के रूप में गति पकड़ रहा है और उसके बाद भारत सहित अन्य देश भी इसका नेतृत्व कर रहे हैं। वांछित परिणाम प्राप्त करने के लिए नीति निर्माताओं, किसान और शोधकर्ताओं के सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता होगी। इस संबंध में भारतीय कपास परिषद ने अनुसंधान परियोजनाओं को वित्त पोषित किया है और रंगीन कपास की सुरक्षित, व्यवहार्य और लाभदायक खेती के लिए कुछ नीतियों और उपायों का भी सुझाव दिया है। डीएनए इंजीनियरिंग और क्लोनिंग तकनीक के अनुप्रयोग से उपलब्ध रंग पैलेट और फाइबर गुणों को बेहतर बनाने में मदद मिलेगी एवं प्राकृतिक रूप से रंगीन सूती वस्त्रों के सफल विपणन को बढ़ावा मिलेगा।

6

वर्षा आधारित क्षेत्रों में उच्च घनत्व और सघन रोपण के तहत कपास उत्पादकता बढ़ाने हेतु मृदा का प्रबंधन

मणिकंडन ए. (वरिष्ठ वैज्ञानिक), के. वेलमुरूगन (प्रधान वैज्ञानिक),
अर्जुन तायड़े (विभाग प्रमुख) एवं विजय नामदेव वाघमारे (निदेशक)
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–440010 (महाराष्ट्र)

वर्षा आधारित भारतीय कपास किसानों की यह एक नई तकनीक उपज को दोगुना कर सकती है। यह पद्धति उच्च घनत्व या सघन रोपण प्रणाली को अपनाने पर आधारित है, जिसमें पारंपरिक विधियों की तुलना में खेत में 2 से 4 गुना अधिक पौधे लगाए जाते हैं। हालांकी, केवल बीजों की संख्या बढ़ाना पर्याप्त नहीं है–सफलता का रहस्य सतह के नीचे है, जहा मृदा ही मुख्य लक्ष्य है। उच्च घनत्व रोपण प्रणाली उथली और सीमांत मिट्टियों (0. 0.–0.50 मी गहराई) के लिए उपयुक्त है, जबकि सघन रोपण प्रणाली मध्यम गहराई वाली मिट्टियों (0. 5–0.75 मी गहराई) के लिए उपयुक्त है। इस गहन प्रणाली की सफलता के लिए उपयुक्त मृदा प्रबंधन अनिवार्य है। किसानों को भूमि की तैयारी इस प्रकार करनी होती है कि उसमें कठोर परतों को तोड़ा जाए, जल निकास नालियाँ बनाई जाएँ, उंची बेड प्रणाली का प्रयोग किया जाए। ये उपाय सुनिश्चित करते हैं कि मिट्टी घनी रोपाई वाले कपास पौधों को पर्याप्त जल और पोषक तत्व उपलब्ध करा सके। कैनोपी का प्रबंधन–चाहे मैनुअल हो या रासायनिक यह उचित बोल का विकास सुनिश्चित करता है। पौधों की संख्या बढ़ाने के साथ–साथ मिट्टी की देखभाल, कैनोपी प्रबंधन और सुरक्षा उपायों के माध्यम से किसान कम उपज वाली भूमि को भी लाभदायक कपास क्षेत्र में बदल सकते हैं, विशेषकर चुनौतीपूर्ण वर्षा आधारित परिस्थितियों में।

कपास मूलतः एक अर्ध–शुष्क मध्यम वृद्धि वाला पौधा है। भारत के उत्तर, मध्य और दक्षिण क्षेत्रों में कपास की खेती के तौर–तरीके विविध है– जो 08°N से 32°N अक्षांश और 07°E से 97°E देशांतर के बीच, समुद्र तल से 915 मीटर तक की ऊँचाई तक, तथा विभिन्न जलवायु परिस्थितीयों में फैला है। कपास के विभिन्न वृद्धि अवस्थाओं के लिए आदर्श तापमान इस प्रकार है : बीज अंकुरण के लिए : 15°से; वनस्पति वृद्धि के लिए : 21–27°से, फलन के लिए : गर्म दिन और ठंडी रातें, सहनशीलता 43°से तक जबकी 21°से नीचे संवेदनशीलता दिखती है। सिंचाई चार प्रमुख चरणों में अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अंकुरण, पुष्प कलिका, पुष्पन और बोल विकास इन चरणों के दौरान गर्म जलवायु, पर्याप्त सूर्यप्रकाश, कोहरा रहित अवधि आवश्यक होती है। भारत में कपास विभिन्न मृदा प्रकारों में उगाई जाती है जैसे काली मिट्टी, चूना–युक्त मिट्टी, लाल मिट्टी, जलोढ़ मिट्टी, तटीय क्षारीय मिट्टी। इनकी गहराई तीन श्रेणीयों में आती है : उथली (0.5 मीटर), मध्यम (0.5–1.0 मीटर) गहरी (>1.0 मीटर) तालिका 1। संकरित कपास की व्यावसायिक एकल फसल; पारंपरिक चौकोर या आयताकार दूरी पर विभिन्न मिट्टियों में की गई, परंतु इससे कम उपज प्राप्त हुई, विशेषकर जब मिट्टी की गहराई के अनुसार (उथली, मध्यम, गहरी और बहुत गहरी) तुलना की गई।

तालिका 1 : विभिन्न श्रेणी स्तरों पर उपयोग की गई मिट्टी की गहराई की श्रेणियाँ

संकेतिक	मिट्टी की गहराई (से.मी.)	परिभाषा के लिए उपयोग	
		मृदा वर्गीकरण	समूह
0	<10	अत्यंत उथली	–
1	10–25	बहुत उथली, उथली	उथली
2	25–50	थोड़ा गहरा	मध्यम
	50–75	मध्यम गहरा	
4	75–100	गहरा	गहरा
5	>100–150	बहुत गहरा	

वर्षा आधारित परिस्थितियों में, पारंपारिक दूरी पर बोई गई संकरित कपास में प्रति पौधा लगभग 30–40 बोल बनते हैं और लगभग 1500 से 1800 किलोग्राम/हेक्टेयर कपास बीज की उपज प्राप्त होती है। हालाँकी, कपास के वृद्धि; विकास, उपज और रेशे की गुणवत्ता मिट्टी की गहराई के अनुसार भिन्न होती है। आर्थिक दृष्टी से, पारंपारिक प्रणाली में पौधों की कम जनसंख्या के कारण उत्पादन और किसानों की आय दोनों ही सीमित रहती है। इसके विपरीत, सीमांत भूमि और उथली या मध्यम गहराई वाली मिट्टियाँ कपास की फसल को 150 ते 170 दिनों के भीतर जीवन चक्र पूरा करने में सहायक होती है। इसलिए उच्च घनत्व पद्धति (4 गुना पौध संख्या वृद्धि) और सघन दूरी पद्धति (2 गुना पौध संख्या वृद्धि) पारंपारिक रोपण की तुलना में कपास की उत्पादकता बढ़ाने का एक उपयुक्त विकल्प हैं। दोनों तकनीकें कपास की उपज को बढ़ाने में मदद करती हैं, क्योंकि ये वनस्पतिक और प्रजनन वृद्धि को अनुकूल बनाती हैं इन प्रणालियों में प्रत्येक पौधे पर 10 से 20 बॉल्स तक बन सकते हैं और लगभग 3000 किलाग्राम/हेक्टेयर बीज कपास की उपज प्राप्त की जा सकती है। यह तकनीक कपास की कुल उत्पादकता को भी बढ़ाती है।

उच्च घनत्व और सघन रोपण प्रणालियों के लिए आवश्यक प्रमुख बातें है : बीज दर पारंपरिक खेती की तुलना में 2–4 गुना अधिक, जल निकासी प्रबंधन आवश्यक है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों (300–400 मिमी) में क्यारियाँ और नालियाँ बनाकर बुआई करनी चाहिए, जबकि अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों (800–1000 मिमी) में मिट्टी चढ़ाके फरों तकनीक अपनानी चाहिए ताकि जल का उचित वितरण हो सके। वनस्पतिक अवस्था के दौरान समय पर इन उपायों से पौधों की वृद्धि और उपज में सुधार होता है। हालाँकी, कुछ जैविक कारक जैसे खरपतवार, कीट रोग और अजैविक कारक जैसे – मिट्टी में जल व पोषक तत्वों की उपलब्धता उच्च घनत्व और सघन रोपण पद्धतियों के अंतर्गत कपास की उत्पादकता को प्रभावित कर सकते है।

मिट्टी और प्रक्षेत्र की आवश्यकताएं : कपास की सफल खेती के लिए मिट्टी की उर्वरता एक प्राथमिक चिंता का विषय है, जिसमें विभिन्न प्रकार की मिट्टी शामिल हैं जैसे काली मिट्टी, चुनायुक्त मिट्टी, लाल और लैटेराइट मिट्टी, जलोढ़ मिट्टी, तटीय मिट्टी, लवणीय और क्षारीय मिट्टी, जिनकी गहराई उथली (<0.5 मीटर) से लेकर मध्यम (0.5–1.0 मीटर) और गहरी (>1.0 मीटर) तक होती है (तालिका 1)

कपास की फसल अर्ध–शुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों की वर्टिसोल मिट्टियों में अच्छी तरह पनपती है। ये क्षेत्र लगभग 7.2 करोड़ हेक्टेयर भूमि को दर्शाते करते हैं, जिनकी ढलान 3 से 8%

के बीच होती है और ये काली चिकनी मिट्टियों से युक्त होते हैं, जो वर्षा आधारित कृषि उत्पादकता को बढ़ाने में सहायक होती है। कपास विविध पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को अनुकूलित कर लेती है और अपने फलन के समय को भी उसी अनुसार बदलती है। अक्षांश, ऊँचाई और वर्षा का वितरण फसल की वृद्धि और विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते हैं, जबकि तापमान इसमें निर्णायक भूमिका निभाता है। आदर्श तापमान लगभग 25°से होता है। कपास विभिन्न मिट्टी प्रकारों और कृषि–जलवायु परिस्थितियों में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। भारत के विभिन्न राज्यों में कपास की खेती का वितरण विभिन्न कृषि–पर्यावरणीय क्षेत्र और कृषि–पर्यावरणीय उप क्षेत्र के अनुसार नीचे दी गई तालिका 2 में प्रस्तुत है।

तलिका 2 : भारत के कृषि–पर्यावरणीय उप क्षेत्रों (एईएसआर) में कपास का वितरण

कृषि पर्यावरणीय क्षेत्र	उप क्षेत्र (एईएसआर)	राज्य
2	2.1, 2.4	राजस्थान, पंजाब, गुजरात
4	4.2	गुजरात, राजस्थान
5	5.1, 5.2, 5.3	गुजरात,मध्य प्रदेश, राजस्थान, केंद्र शासित प्रदेश– दमन और दीव
6	6.2, 6.3, 6.4	महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना
7	7.1	आंध्र प्रदेश, तेलंगाना
8	8.1, 8.3	तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश
9	9.1	पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश
10	10.2	मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र
17	17.1	अरूणाचल प्रदेश, मेघालय, असम, नागालैंड
18	18.1, 18.3	तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश
19	19.1	महाराष्ट्र, गुजरात, युनियन टेरीटरी–दादर नगर हवेली, दमन और द्वीप

सफल खेती के लिए मिट्टी के विशिष्ट गुण आवश्यक है, जिनमें इष्टतम मृदा प्रतिक्रिया (सामु 6. 5 से 8.5) उदासीन से कम क्षारीय, विद्युत चालकता (0 से 2dsm^{1}), कैल्शियम कार्बोनेट (उपरी 50 सेमी मिट्टी की गहराई का 00–15%) उच्च कार्बनिक पदार्थ (1–4%), मध्यम नत्र और स्फुरद युक्त उच्च पोटाश और अच्छी जल निकासी वाली दोमट से रेतीली दोमट और चिकनी मिट्टी शामिल हैं। रेतीली दोमट और दोमट मिट्टी, जो उचित वायु संचार और जल का फिल्ट्रेशन सुनिश्चित करती है, को प्राथमिकता दी जाती है। उथले जल स्तर वाली मिट्टी कपास के लिए उपयुक्त नहीं होती है। मिट्टी की उपयुक्तता कपास उगाने वाले क्षेत्रों को निर्धारित करती है और मिट्टी की गहराई के आधार पर इसे उथली, मध्यम और गहरी मिट्टी में वर्गीकृत किया जाता है (तालिका 3)। बीटी संकर–कपास गहरी–काली मिट्टी में अधिकतम उपज क्षमता प्रदर्शित करते हैं, जबकि मध्यम और उथली मिट्टी में उपज कम हो जाती है (चित्र 1 और 2)

तालिका 3 : कपास के लए मृदा–स्थल उपयुक्तता मानदंड (एनबीएसएस और एलयुपी, 1994)

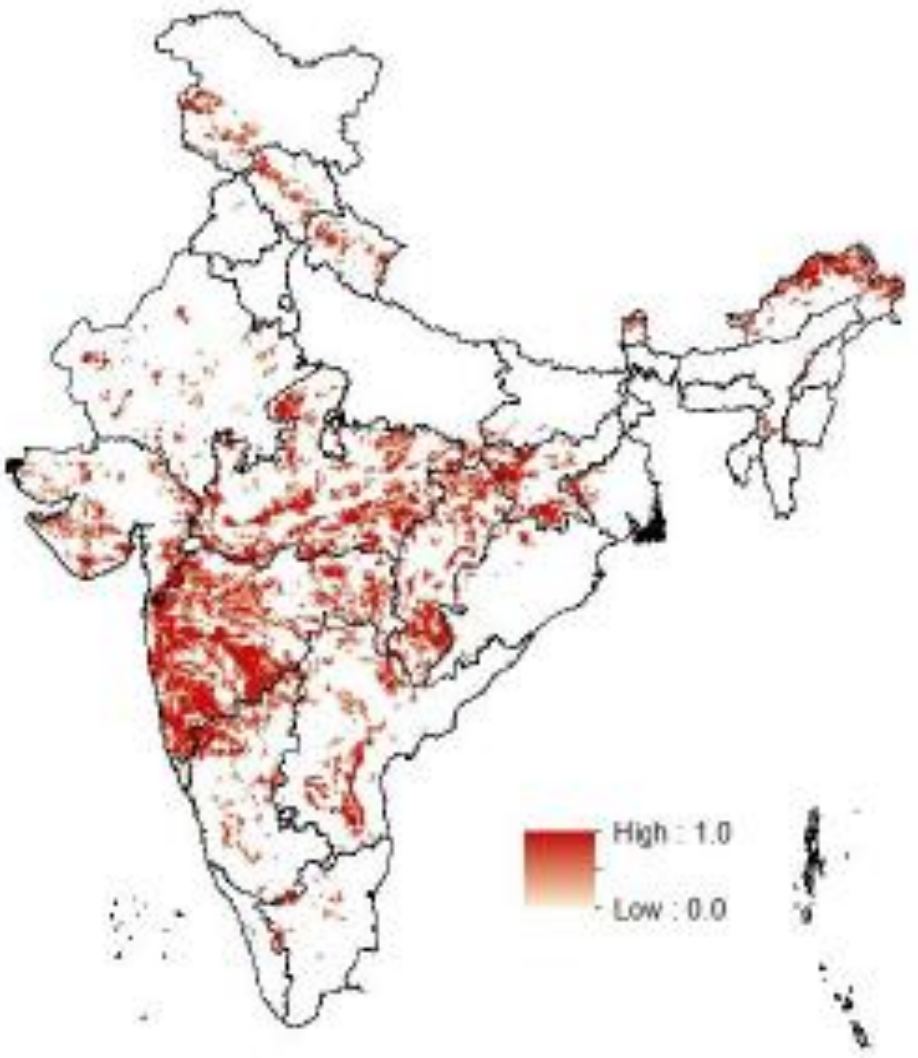
मृदा स्थल विशेषताएँ		रेटिंग				
			अत्याधिक उपयुक्त एस-1	मध्यम रूप से उपयुक्त एस-2	मामूली रूप से उपयुक्त एस-3	उपयुक्त नहीं एन
जलवायु प्रणाली	पौधा विकास अवस्था में ऋतु का औसत तापमान	0°से	20–30	31–25	<19 >35	–
	पौधा विकास अवस्था में ऋतु का औसत अधिकतम तापमान	0°से	–	–	>36	–
	पौधा विकास अवस्था में ऋतु का औसत न्यूनतम तापमान	0°से	–	–	<19	–
	पौधा विकास अवस्था में ऋतु की औसत सापेक्ष आद्रता	%	60–90	–	<50	–
	पौधा विकास अवस्था में ऋतु में कुल वर्षा	मिमी.	700–1000	500–700 1000–1250	<500 >1250	–
	पौधा विकास अवस्था ऋतु में वर्षा	मिमी.	600–950	450–600	<450	–
भूमि की गुणवत्ता	**भूमि की विशेषताएँ**					
नमी उपलब्धता	विकास अवधि की लंबाई	दिन	180–240	120–180	<120	–
	उपलब्ध जल क्षमता	मिमि/मी.	200–250	125–200	50–125	<50
जड़ों को ऑक्सीजन की उपलब्धता	मृदा जल निकासी	वर्ग (भूमि)	उत्त्म से मध्यम उत्तम	अपर्याप्त जल–निकास वाली	निम्न गुणवत्ता वाला	ठहरा हुआ/ अत्याधिक पानी
	विकास ऋतु में जल जमाव की स्थिति	दिन	1–2	2–3	3–5	>5
पोषक तत्वों की उपलब्धता	मृदा बनावट	वर्ग	सिल्टी चिकनी मिट्टी/ चिकनी मिट्टी	सिल्टी चिकनी दोमट मिट्टी, चिकनी दोमट मिट्ट	सिल्टी, चिकनी दोमट, रेतयुक्त चिकनी मिट्टी, रेतयुक्त चिकनी दोमट, दोमट	रेतयुक्त दोमट, रेतयुक्त दोमट, रेतीली मिट्टी

	सामु	1:2.5	6.5–7.5	7.6–8.0	8.1–9.0	>9.0 <6.5
	मृदा की धनायन विनिमय क्षमता	सी मोल (पी +)/ किलो	>55	50–55	35–50	<30
	मृदा आधार संतृप्ति (बीएस)	%	>80	50–80	35–50	<35
	जड़ क्षेत्र में कॅल्शियम कार्बोनेट की मात्रा	%	<3	3.5	5–10	10–20
	मृदा कार्बनिक कार्बन	%	>1.00	0.75–1.0	0.50–0.75	<0.50
जडों की अवस्था	मृदा गहराई	सेमी.	100–150	60–100	30–60	<30
	मृदा में पत्थरों की मात्रा	%	<15	15–25	25–50	50–75
	मृदा में मोटे कणों की मात्रा	वॉल्यूम %	<5	5–10	10–15	15–35
मृदा विषाक्तता	लवणता (इसी संतृप्त अर्क)	dS/m	2–4	4–8	8–12	>12
	क्षारीयता (इएसपी) के आधार	%	5–10	10–20	20–30	>30
कटाव का खतरा	ढलान	%	1–2	2–3	3–5	>5



उथली मिट्टी(<50 सेमी) मध्यम गहरी मृदा (>50–100 सेमी) गहरी मृदा (>100 सेमी)

चित्र 1 : कपास उगाने वाले क्षेत्रों की विभिन्न मृदा प्रकार



चित्र 2 : 5 किमी × 5 किमी ग्रिड पर 25–50 सेमी मृदा–गहराई वाले देश का प्रतिशत मानचित्र

उथली काली मिट्टि में उप–मृदा या पतली परत का अभाव होता है, जल निकासी अच्छी नहीं होती और यह उर्वरता भी कम होती है। इसके नीचे कठोर परत होने से जड़े अधिक गहराई तक नहीं जा पाती और उसका विकास रूक जाता है। इसलिए आवश्यक है की कठोर परत या सघन स्तर को तोड़ा जाए और उठी हुई क्योरियों या फरो के साथ खेती की जाय। यह प्रक्रिया उथली मिट्टी में कपास की पकड़ मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभती है। उथली मिट्टी भी कैल्शियम युक्त पदार्थी (10–20%) पर विकासित हुई है। ये मिट्टी सिंचित कपास के लिए अत्याधिक उपयुक्त है। इसमें जल निकासी अच्छी होती है। उथली लैटेराइट मिट्टी में प्रभावी मृदा आयतन कम, पोषक तत्व स्तर और जल धारण क्षमता खराब होती है (तालिका 4)।

तालिका 4 : विभिन्न कपास उत्पादक क्षेत्रों के लिए मिट्टी के प्रकार और प्रबंधन पद्धतियाँ

मिट्टी के प्रकार	राज्य	प्रमुख समस्याएँ	प्रबंधन के लिए सुझाव
वर्टिसोल अत्याधिक प्रसार–संकुचन वाली काली मिट्टी	महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु, राजस्थान	सिकुड़न–फैलाव (जलभराव और सूखा)	मेड़ और नालियाँ (300–400 मिमी. और 1000–1200 मिमी. वर्षा वाले क्षेत्र) और भारी मिट्टी में उचित जल निकासी
	महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश	कैल्शियमयुक्त, नमी और स्थूल एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता की कमी	पोषक तत्वों (एन और पी) की कमी को उर्वरकों की अनुशंसित खुराक के विभाजित अनुप्रयोग के माध्यम से प्रबंधित किया जाता है।
	महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात	उथली मिट्टी	कार्बनिक पदार्थ का अनुप्रयोग, मेड़ों और खाँचो तथा मृत खाँचो में खेती पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ
अल्फिसोल मध्यम से अच्छी उपजाऊ वाली लाल मिट्टी	आंध्रप्रदेश, तेलंगाना, तमिलनाडु, ओड़ीसा	कम वर्षा, कम जैविक पदार्थ, विविध ढलान, उथली और कैल्शीयम कार्बोनेट के साथ, चट्टानों वाली मिट्टी, एवं अधिक तापमान	अधिक कार्बनिक पदार्थि का प्रयोग
इन्सेप्टिसोल प्रारंभिक विकसित मिट्टी (काली–लाल मिट्टी)	गुजरात, कर्नाटक, तमिलनाडु	–	जल्दी परिपक्व होने वाली सरल प्रजातियाँ या संकरीत कपास
एन्टिसोल अत्यंत अपरिपक्व मिट्टी (जढ़ोल मिट्टी)	हरियाणा, राजस्थान, पंजाब	फॉस्फोरस की कमी	अनुकूल मृदा वायु एवं नमी व्यवस्था–अधिक उपज
समस्या वाली मृदा (लवणता एवं क्षारीयता)	कर्नाटक, गुजरात, पंजाब	पोषक तत्वों के अवशोषण में समस्या	पोटाश का विभाजित चरणबद्ध प्रयोग

बीटी–कपास संकरों के लिए गहन प्रबंधन और कृषि साधन की आवश्यकता होती है, विशेष रूप से वर्षा आधारित खेती के तहत जहां नमी और पोषक तत्वों की कमी की चुनौतियाँ होती है। पारंपारिक अंतराल वाली उपज स्थिर है। इसलिए, 2010 से उच्च घनत्व वाले कपास और 2020 से निकट अंतराल वाली कपास की खेती ने आशाजनक परिणाम दिखायें हैं, विशेष रूप से हल्की (उथली) और मध्यम गहरी मिट्टी वाले वर्षा प्रणालियों में बीटी –कपास संकरों के प्रयोग से एकल–फसल अपनाने के साथ ही बीज कपास की उपज में वृद्धि हुई है। शीघ्र परिपक्वता (150–160 दिन) और सघन वृद्धि

विशेषताओं वाली उपयुक्त किस्मों का चयन उत्पादकता को बढ़ाता है, विशेष रूप से उथली और मध्यम मिट्टी में। बीटी–संकरों में 50 से 60 सेमी तक सीमित होता है और सक्रिय जड़ की लंबाई15–30 सेमी तक के बीच होती है। मिट्टी की गहराई और पानी और पोषक तत्वों के लिए इसकी क्षमता अक्सर बीज कपास की उपज को निर्धारित करती है, विशेष रूप से उन कपास का जा पूरक सिंचाई के साथ या बिना सिंचाई के उगाए जाते हैं। इसलिए, उथली और मध्यम गहरी मिट्टी में उच्च घनत्व और सघन अंतराल के साथ कपास उगाना अत्याधिक अनुकूल है।

कपास सुधार परियोजनाओं ने उच्च उपज देने वाली, शीघ्र पकने वाली किस्मों और बीटी संकर विकसित किए हैं, जो कीट और रोग सहनशीलता को बढ़ावा देते हैं। हालाँकी, वर्षा आधारित परिस्थितियों का अनुकूल होना एक चिंता का विषय बना हुआ है। इष्टतम वृद्धि और उपज के लिए, विशेष रूप से कपास की उच्च–घनत्व और कम अंतराल वाली बुवाई को लागू करने से पहले, मिट्टी और पर्यावरणीय कारकों का मूल्यांकन अत्यंत महत्वपूर्ण है। सघन बीटी संकर और बीटी किस्मों के साथ कृषि बाह्य परीक्षणों ने उच्च–घनत्व और कम अंतराल वाली प्रणालियों की क्षमता को प्रदर्शित किया है, जो वर्षा आधारित कपास की खेती के लिए एक वरदान है।

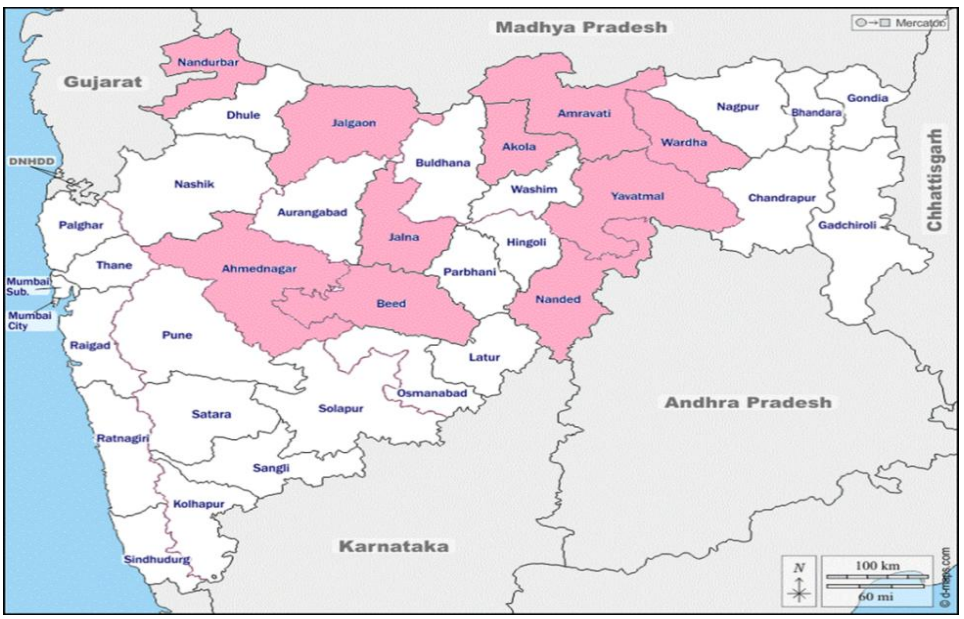
उपरोक्त तथ्यों के आधार पर, कम उत्पादक उथली–सीमांत मिट्टी, चूनेदार मिट्टी और लाल मिट्टी में कपास की आबादी में चार गुना वृद्धि लाने हेतु, उच्च घनत्व वाली कपास, अत्याधिक अनुकूल है। इसी प्रकार, मध्यम गहरी काली मिट्टी और समस्याग्रस्त मिट्टी के लिए दो गुना अधिक आबादी हेतु, कम अंतराल पर कपास अपनाई जानी चाहिए। कपास की उत्पादकता बढ़ाने के लिए मिट्टी की गहराई के अनुसार विभिन्न मिट्टियों के लिए उपयुक्त प्रबंधन पद्धतियों को अपनाना आवश्यक है। इसमें उथली (<0.50 मीटर) और मध्यम गहरी मिट्टी (0.75 मीटर) को लक्षित करने पर जोर दिया गया है, जिससे वर्षा आधारित क्षेत्रों में कपास की पैदावार दोगुनी हो सकती है।

7

महाराष्ट्र के कपास उत्पादन प्रणाली एवं फसल उत्पादकता का व्यापक परिदृश्य सर्वेक्षण (एल.डी.एस.)

रामकृष्णा जी. आय. (वरिष्ठ वैज्ञानिक), आर. जया कुमारवरदन (वैज्ञानिक), शैलेश पी. गावंडे (वरिष्ठ वैज्ञानिक), राहुल एम. फुके (वरिष्ठ वैज्ञानिक), शुभम गौत्रे (वाय.पी), रितेश आवारे (वाय.पी), मनीष पांडव (वाय.पी) एवं अर्जुन तायडे (विभाग प्रमुख)
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–441108 (महाराष्ट्र)

महाराष्ट्र, भारत के प्रमुख कपास उत्पादक राज्यों में से एक है और देश के कुल कपास उत्पादन में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। इसके बावजूद भी, राज्य की औसत कपास उत्पादकता अब भी राष्ट्रीय औसत 437 किलोग्राम लिंट प्रति हेक्टेयर से कम बनी हुई है। कपास उत्पादन की वास्तविक स्थिति, किसानों की प्रथाओं और क्षेत्रीय भिन्नताओं का आकलन करने के उद्देश्य से "लैंडस्केप डायग्नोस्टिक सर्वे (एल.डी.एस.)" किया गया। इस सर्वे में महाराष्ट्र के 10 प्रमुख कपास उत्पादक जिलों अकोला, अमरावती, वर्धा, यवतमाल, बीड, जालना, नांदेड़, जलगाँव, नंदुरबार और अहिल्यानगर के 100 गाँवों को शामिल किया गया। जिसके अंतर्गत कुल 3,000 किसानों से जानकारी एकत्रित की गई।



चित्र : 1 सर्वेक्षण हेतु सुनिश्चित जिलें

सर्वेक्षण के लिए एक सुव्यवस्थित प्रश्नावली तैयार की गई, जिसके माध्यम से कपास उत्पादक जिलों के किसानों से विस्तृत सूचना का संग्रह एकत्र किया गया। गाँवों का चयन मिट्टी की गहराई, मिट्टी की बनावट, वर्षा आधारित परिस्थितियाँ और सिंचाई की उपलब्धता जैसे मानदंडों के आधार पर किया गया, ताकि स्थिति का वैज्ञानिक और संतुलित मूल्यांकन सुनिश्चित किया जा सके। इस सर्वेक्षण के माध्यम से कपास उत्पादन से जुड़े कृषि–तकनीकी पहलुओं, संसाधनों की उपलब्धता, किसानों की व्यवहारिक प्रथाओं और स्थानीय स्तर पर मौजूद समस्याओ का गहराई से विश्लेषण किया गया, ताकि राज्य में कपास की उत्पादकता और स्थिरता बढ़ाने के लिए प्रभावी रणनीतियाँ विकसित की जा सकें।

प्रत्येक जिले में दो तहसीलों का चयन किया गया, जिनमें से प्रत्येक तहसील के पाँच गाँवों से 30–30 किसानों का सर्वेक्षण किया गया। इस प्रकार प्रति तहसील 150 और प्रति जिले कुल 300 किसानों का चयन किया गया, जिससे 10 जिलों में कुल 3,000 किसानों का सर्वेक्षण पूरा हुआ।



चित्र : 2 सर्वेक्षण के दौरान जानकारी लेते हुए

यह सर्वेक्षण ओपन डेटा कीट (ओ.डी.के) प्लेटफॉर्म का उपयोग करके प्रशिक्षित गणनाकारों द्वारा किया गया। सर्वे के दौरान बीज की किस्मों और उनके स्रोत, फसल चक्र, पोषक तत्व प्रबंधन, सिंचाई पद्धतियाँ, खरपतवार नियंत्रण, कटाई के तरीके, अवशेष प्रबंधन और किसानों द्वारा बताए गए कपास के उत्पादन से संबंधित विस्तृत जानकारी एकत्र की गई। इस अध्ययन का उद्देश्य कपास उत्पादन की वर्तमान स्थिति को गहराई से समझना और महाराष्ट्र में कपास की उत्पादकता बढ़ाने के लिए क्षेत्र–विशिष्ट रणनीतियाँ तैयार करना था।

सर्वेक्षण का संक्षिप्त सारांश

अध्यन में किये गए सर्वेक्षण का संक्षिप्त सारांश की प्रस्तुति निम्नवत

खेत का आकार : सर्वेक्षण में पाया गया कि किसानों की भूमि जोत के आकार में काफी विविधता थी। अर्ध–मध्यम वर्ग (31.8%), छोटा वर्ग (28.5%), मध्यम वर्ग (18.7%) और सीमांत वर्ग (15.0%) किसानों का प्रतिनिधित्व रहा। केवल एक छोटा हिस्सा (लगभग 6.0%) किसान बड़े भूमि स्वामित्व वर्ग से संबंधित था।

विखंडन खेती, मशीनीकरण के लिए एक बड़ी चुनौती के रूप में सामने आई। छोटे और सीमांत किसानों के लिए आधुनिक कृषि उपकरणों और तकनीकों को अपनाना कठिन रहा, जिससे उनकी उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इसके विपरीत, बड़े और सुव्यवस्थित खेतों वाले किसानों ने मशीनीकरण को आसानी से अपनाया और अधिक कुशल खेती के तरीके लागू कर पाए, जिससे उनकी पैदावार बेहतर रही। कुशल और टिकाऊ खेती को बढ़ावा देने के लिए किसानों की मशीनीकरण तक पहुँच बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है। इस दिशा में, कृषि उपकरणों की उपलब्धता और वहन क्षमता से जुड़ी इन चुनौतियों के समाधान के लिए यह सुझाव दिया गया कि किसानों को कस्टम हायरिंग सेंटर्स के माध्यम से कृषि उपकरणों तक आसान और किफायती पहुँच प्रदान की जाए। इससे छोटे और मध्यम किसान भी आधुनिक मशीनरी का उपयोग कर सकेंगे, जिससे न केवल उत्पादन और दक्षता में वृद्धि होगी बल्कि खेतों का बेहतर प्रबंधन और पर्यावरण अनुकूल कृषि को भी बढ़ावा मिलेगा।

मृदा स्वास्थ्य : अधिकांश क्षेत्रों में काली कपास मिट्टी (वर्टिसोल), जिसमें चिकनी मिट्टी की मात्रा अधिक होती है और जो नमी को लंबे समय तक संजोकर रखती है, कपास की खेती के लिए अत्यंत उपयुक्त पाई गई। हालाँकि, अलग–अलग जिलों में मिट्टी की बनावट, भूमि की ढलान और मिट्टी की गहराई के आधार पर मिट्टी की विशेषताओं में उल्लेखनीय भिन्नताएँ देखी गईं। मिट्टी की बनावट (टेक्सचर) के विश्लेषण से पता चला कि विभिन्न जिलों में हल्की, मध्यम और भारी बनावट वाली मिट्टी का मिश्रित वितरण है। जिसमें मध्यम बनावट वाली मिट्टी का हिस्सा सबसे अधिक (63.4%), उसके बाद भारी मिट्टी (23.5%) और हल्की मिट्टी (13.0%) का रहा।

भूमि की ढलान के अनुसार देखा गया कि 76.7% जमीन समतल, 20.3% हल्की ढलान वाली, जबकि 3.5% भूमि मध्यम ढलान वाली थी। यह स्थलाकृति (टोपोग्राफी) खेती के तरीकों, विशेषकर जल संरक्षण और निकासी प्रबंधन पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है।

अच्छी जल निकासी वाली मध्यम गहराई की मिट्टी को कपास उत्पादन के लिए सबसे उपयुक्त माना गया है। दिलचस्प रूप से, सभी जिलों में अधिकांश किसानों ने कपास की खेती इसी प्रकार की मिट्टी में की। औसतन, मध्यम गहराई वाली मिट्टी कपास क्षेत्र के 70.1%, गहरी मिट्टी 18. 9% और उथली मिट्टी 10.6% हिस्से में पाई गई। मिट्टी की इन विविधताओं ने कपास की खेती के लिए भूमि की उपयुक्तता को काफी प्रभावित किया। इसके साथ ही, मिट्टी की उर्वरता, जल निकासी क्षमता और कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में भी अंतर पाया गया।

इन्हीं भिन्नताओं के कारण किसानों के खेती के तौर–तरीकों में विविधता देखने को मिली। जैसे कि बीज का चयन, बुवाई का समय, भूमि की तैयारी और जल प्रबंधन तकनीकें। किसानों ने अपने–अपने क्षेत्र की मिट्टी की विशेषताओं को ध्यान में रखकर कृषि प्रथाएँ अपनाईं, जिससे कपास की उत्पादकता, स्थिरता और संसाधनों के कुशल उपयोग पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा।



चित्र : 3 किसानों से जानकारी अंकित करते हुए

पानी की उपलब्धता : सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि अधिकांश क्षेत्रों में कपास की खेती मुख्यतः वर्षा पर निर्भर है और सिंचाई की सुविधाएँ सीमित हैं। लगभग सभी जिलों में सिंचाई से जुड़ा बुनियादी ढाँचा कमजोर है। इसके साथ ही, बारिश का असमान वितरण मिट्टी की नमी में कमी का प्रमुख कारण बना, जिससे फसल की स्थिरता और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए बेहतर जल संरक्षण तकनीकों को अपनाना अत्यंत आवश्यक है। खेत–तालाबों और ड्रिप सिंचाई प्रणाली के माध्यम से एकत्रित वर्षा जल का प्रभावी उपयोग करके पानी की उपलब्धता में सुधार किया जा सकता है। साथ ही, समय पर फसल सुनिश्चित करने और सूखे की स्थिति में संकट कम करने के लिए कम अवधि में पकने वाली हाइब्रिड किस्मों के उपयोग की सलाह दी गई। कपास की फसल की समय पर परिपक्वता और कटाई से उत्पादन क्षमता बढ़ती है तथा संसाधनों का बेहतर प्रबंधन संभव होता है। इन उपायों से न केवल उत्पादकता में वृद्धि होगी, बल्कि जल–संरक्षण आधारित पर्यावरण अनुकूल खेती की दिशा में भी महत्वपूर्ण प्रगति होगी।

मशीनीकरण : अधिकांश अर्ध मध्यम, छोटे और सीमांत किसान जमीन की तैयारी के लिए किराए की मशीनरी पर निर्भर हैं। इन किसानों के सामने एक प्रमुख समस्या मजदूरों की कमी है। लगभग 70.6% किसानों ने बताया कि कपास उत्पादन में उन्हें श्रम की उपलब्धता को लेकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। चूँकि ये किसान खेत के अधिकांश कार्यों के लिए मजदूरों पर निर्भर हैं, इसलिए मशीनीकरण अपनाने में उपकरणों की सीमित उपलब्धता, उनकी पहुँच में कठिनाई और उच्च लागत जैसी बाधाएँ उनके लिए बड़ी चुनौती बन गई हैं। इसके अलावा, चूँकि अधिकांश किसान वर्षा आधारित खेती पर निर्भर हैं, इसलिए बुवाई शुरू करने के लिए समय बहुत सीमित होता है। मिट्टी में नमी की कमी के कारण कृषि कार्य समय पर और प्रभावी ढंग से नहीं हो पाते। इन सभी परिस्थितियों को देखते हुए, खेती में मशीनीकरण को बढ़ावा देना और छोटे किसानों के लिए किफायती, सुलभ कृषि उपकरण उपलब्ध कराना अत्यंत आवश्यक है, ताकि वे सीमित समय और संसाधनों में अधिक उत्पादक और टिकाऊ खेती कर सकें।

तालुका स्तर पर कस्टम हायरिंग सेंटर (सी.एच.सी.) स्थापित किए जाने चाहिए, ताकि किसान आवश्यक कृषि उपकरणों को किराये पर लेकर उपयोग कर सकें। ग्राम स्तर पर छोटे और सीमांत किसानों के लिए आधुनिक कृषि उपकरणों (जैसे – सटीक प्लांटर्स, बीज ड्रिल, अंतर–पंक्ति कल्टीवेटर, हाई–माउंट स्प्रेयर, ड्रोन, मोबाइल श्रेडर, कॉटन पिकर आदि) तक सस्ती और आसान पहुँच सुनिश्चित की जानी चाहिए।

इन केंद्रों के सफल संचालन के लिए पब्लिक–प्राइवेट पार्टनरशिप (पी.पी.पी.) मॉडल और किसान उत्पादक संगठन (एफ.पी.ओ.) को शामिल किया जा सकता है। साथ ही, छोटे और सीमांत किसानों के समर्थन के लिए सब्सिडी वाले कृषि उपकरणों तथा आसान ऋण योजनाओं को भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

इसके अतिरिक्त, कृषि विज्ञान केंद्र (के.वी.के.) और कृषि विस्तार सेवाओं के माध्यम से किसानों के लिए क्षमता निर्माण कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए, ताकि उन्हें कृषि मशीनीकरण के लाभों और उसके प्रभावी उपयोग के बारे में जागरूक किया जा सके।

बुवाई : सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि अधिकांश किसानों (लगभग 90.5%) ने कपास की बुवाई के लिए फ्लैटबेड पद्धति अपनाई थी। इसके बाद रिज और फरो विधि (8.0%) तथा उठी हुई क्यारी विधि (1.5%) का प्रयोग किया गया। फ्लैटबेड विधि मध्यम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त पाई गई, जबकि अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में रिज और फरो विधि अधिक प्रभावी सिद्ध हुई। इस पद्धति से खेत में पानी रुकने (वॉटर लॉगिंग) की समस्या कम होती है, जल निकास में सुधार होता है, तथा मिट्टी में वायु संचार बेहतर होता है, जिससे जड़ों का विकास और पौधों की वृद्धि सुचारू रूप से होती है।

यह भी देखा गया कि लगभग सभी जिलों में कपास की बुवाई अभी भी हाथ से (96.4%) की जाती है। हालांकि, किसानों में अब मशीन प्लांटर्स अपनाने की रुचि बढ़ती जा रही है, क्योंकि इससे बुवाई की दक्षता बढ़ती है, एवं मजदूरों पर निर्भरता घटती है, और बीजों की समान गहराई पर बुवाई होती है, जिससे अंकुरण बेहतर और समान रूप से होता है।

हाइब्रिड का उपयोग : कुल मिलाकर सर्वेक्षण के परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि किसानों में एक ही हाइब्रिड किस्म का लगातार उपयोग करने की प्रवृत्ति (लगभग 71.5%) देखी गई। यह दर्शाता है कि किसानों को कुछ विशेष हाइब्रिड किस्मों के प्रदर्शन पर भरोसा है। सिंचित परिस्थितियों में अधिकांश किसानों (41.7%) ने दो विशिष्ट हाइब्रिड बीजों का चयन किया, जबकि वर्षा आधारित (रेनफेड) परिस्थितियों में ज़्यादातर किसानों (43.7%) ने केवल एक कपास हाइब्रिड को अपने खेतों

में लगाया। यह भी पाया गया कि अधिकांश कपास उत्पादक किसानों ने चाहे सिंचित क्षेत्र हो या वर्षा आधारित प्रति एकड़ दो बीज पैकेट (66.0%) की बुवाई की। हालांकि, अब यह आवश्यक हो गया है कि बीजों के बीच उचित अंतर बनाए रखते हुए पौधों को पास–पास लगाने की पद्धति अपनाई जाए। मध्यम गहरी मिट्टी में प्रति एकड़ लगभग 14,800 पौधों की घनत्व और कम गहरी या हल्की मिट्टी में प्रति एकड़ लगभग 29,000 पौधे लगाने से न केवल कपास की पैदावार में वृद्धि होती है, बल्कि भूमि, जल और पोषक तत्वों जैसे संसाधनों का भी अधिक कुशल उपयोग सुनिश्चित होता है।

खाद : सर्वेक्षण से यह पता चला कि कुल 66.6% किसानों द्वारा जैविक खाद का उपयोग बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। इनमें से अधिकांश किसान (लगभग 98.3%) मुख्य रूप से फार्मयार्ड खाद (एफ. वाई.एम) का उपयोग कर रहे हैं। हालाँकि, कुछ किसानों ने बताया कि वे खाद का उपयोग नहीं कर पाए, जिसका मुख्य कारण खाद की उपलब्धता की कमी (45.5%) और इसकी उच्च लागत (17.0%) था। इन चुनौतियों से निपटने के लिए, फार्मयार्ड खाद (एफ.वाई.एम) के अलावा अन्य जैविक खाद के स्रोतों को बढ़ावा देना आवश्यक है, जैसे केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट), हरी खाद, हरी पत्तियों की खाद, पशु बाड़े से प्राप्त अपशिष्ट, तथा फसल अवशेषों का पुनर्चक्रण। इन उपायों को अपनाने से न केवल मिट्टी की उर्वरता और मिट्टी का स्वास्थ्य सुधरेगा, बल्कि टिकाऊ कृषि पद्धतियों को भी प्रोत्साहन मिलेगा।

उर्वरक : सर्वेक्षण के दौरान एकत्र किए गए आंकड़ों से यह पता चला कि सिंचित और वर्षा–आधारित दोनों प्रकार के क्षेत्रों में उर्वरक (फर्टिलाइजर) के उपयोग की आवृत्ति अलग–अलग जिलों में भिन्न थी। दोनों प्रणालियों में 90% से अधिक किसानों ने उर्वरक को दो या तीन चरणों में दिया, जिससे फसल द्वारा पोषक तत्वों का बेहतर अवशोषण हुआ और वृद्धि में सुधार देखा गया। उर्वरकों के उपयोग के विश्लेषण से पता चला कि यूरिया (78.4%) सबसे अधिक प्रयुक्त उर्वरक था, इसके बाद 10:26:26 (68.7%) और डीएपी (66.4%) का स्थान रहा। हालांकि, कुछ जिलों में पोषक तत्वों की कमी पाई गई, जबकि अन्य जिलों में उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग किया गया, जिससे मिट्टी की गुणवत्ता में गिरावट और पोषक तत्व असंतुलन की संभावना बढ़ गई।

- सिंचित क्षेत्रों में औसतन प्रति एकड़ उर्वरक उपयोग दर निम्नवत थी।
  नाइट्रोजन : 47.9 किग्रा, फास्फोरस : 51.4 किग्रा, पोटैशियम : 28.1 किग्रा
- जबकि वर्षा आधारित क्षेत्रों में यह दर क्रमशः थी।
  नाइट्रोजन : 47.3 किग्रा, फास्फोरस : 49.9 किग्रा, पोटैशियम : 24.8 किग्रा

सर्वेक्षण से यह भी पता चला कि केवल 13.2% किसानों ने ही मिट्टी की जांच करवाई थी। परिणामस्वरूप, अधिकांश किसानों को उचित उर्वरक मात्रा और पोषक तत्व प्रबंधन की जानकारी नहीं थी, जिससे या तो उर्वरकों का अधिक उपयोग किया गया या अपर्याप्त मात्रा में दिया गया।

इस समस्या को दूर करने के लिए, किसानों को मिट्टी परीक्षण आधारित पोषक तत्व प्रबंधन अपनाने की सलाह दी जानी चाहिए, ताकि फसल की आवश्यकता के अनुसार सही मात्रा में उर्वरक का प्रयोग हो सके। संतुलित उर्वरक प्रबंधन न केवल कपास की उत्पादकता और संसाधन उपयोग दक्षता को बढ़ाता है, बल्कि खेती की लागत भी घटाता है, जिससे किसानों को लंबे समय तक लाभ मिलता है। इसके अलावा, पानी में घुलनशील उर्वरकों के पत्तीय छिड़काव की पद्धति का उपयोग जिलों के अनुसार अलग–अलग पाया गया। इनमें 19:19:19 (33.8%) और 0:52:34 (20.8%) सबसे लोकप्रिय फॉर्मूलेशन थे।

यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि उर्वरकों का उपयोग केवल तब करना चाहिए जब मिट्टी में पर्याप्त नमी उपलब्ध हो। बोल्स के अधिकतम विकास चरण के दौरान पानी में घुलनशील उर्वरकों का पत्तियों पर छिड़काव करने से पौधों को त्वरित पोषण मिलता है और कपास की पैदावार तथा गुणवत्ता दोनों में सुधार होता है।

खरपतवार प्रबंधन : कपास उत्पादन में खरपतवार एक प्रमुख चुनौती के रूप में सामने आया है। सर्वेक्षण के परिणामों से पता चला कि खरपतवार प्रबंधन के लिए हर्बिसाइड्स (शाकनाशी) का उपयोग सीमित है । सिंचित क्षेत्रों में केवल 27.2% किसानों और वर्षा–आधारित क्षेत्रों में मात्र 19.8% किसानों ने ही शाकनाशियों का प्रयोग किया। यह दर्शाता है कि रासायनिक खरपतवार नियंत्रण पद्धतियों को अभी भी व्यापक रूप से नहीं अपनाया गया है। जिन किसानों ने शाकनाशी का उपयोग किया, उनमें फसल उगने के बाद हर्बिसाइड का प्रयोग अधिक आम था, जबकि फसल उगने से पहले के शाकनाशी का उपयोग बहुत कम देखा गया। अधिकतर किसान अब भी हाथ से निराई पर निर्भर हैं। अधिकांश जिलों में किसानों ने दो बार (46.3%) या तीन बार (43.0%) हाथ से निराई की।

कपास एक लाइन से उगाई जाने वाली फसल होने के कारण, किसान पंक्तियों के बीच गुड़ाई करते हैं, जिससे खरपतवार नियंत्रण, मिट्टी में वायु संचार, और नमी संरक्षण में मदद मिलती है। गुड़ाई ने फसल की जड़ विकास, पोषक तत्व अवशोषण और कुल पैदावार पर सकारात्मक प्रभाव डाला। सर्वेक्षण में यह पाया गया कि 38.7% किसानों ने पांच बार, 28.3% ने चार बार, और 20.1% ने तीन बार फसल अवधि के दौरान कुदाल चलाने का कार्य किया। इनमें से 94.3% किसानों ने बैलों की सहायता से यह कार्य किया।

हालांकि, श्रम की बढ़ती कमी और लागत को देखते हुए, उन क्षेत्रों में जहां मशीनीकरण तेजी से बढ़ रहा है, किसानों को मैकेनिकल वीडिंग और ट्रैक्टर–चालित औजारों के उपयोग को बढ़ावा देना चाहिए। इससे कार्य दक्षता बढ़ेगी, मजदूरों पर निर्भरता घटेगी, और समय की बचत भी होगी। साथ ही, प्री–इमर्जेंस हर्बिसाइड्स के उपयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, क्योंकि ये फसल की शुरुआती अवस्था में ही खरपतवारों को नियंत्रित कर सकते हैं और आगे चलकर हाथ से निराई की आवश्यकता तथा लागत दोनों को कम करते हैं। इस प्रकार, रासायनिक, यांत्रिक और सांस्कृतिक विधियों का समन्वित उपयोग कपास उत्पादन की उत्पादकता और स्थायित्व दोनों में उल्लेखनीय सुधार ला सकते हैं।

कीट और रोग प्रबंधन : सर्वेक्षण के दौरान यह देखा गया कि किसानों की कम आय के पीछे कई कारणों में से एक प्रमुख कारण था, कपास की पैदावार में कीटों का गंभीर प्रकोप, जिसे 88.9% किसानों ने अपनी मुख्य समस्या बताया। अधिकांश किसान रासायनिक कीट नियंत्रण पर निर्भर थे, जिनमें से अधिकांश ने तीन से चार बार कीटनाशकों का छिड़काव किया। इस कारण कीटनाशक पर खर्च बढ़कर कुल उत्पादन लागत का लगभग 10% से 12% तक पहुँच गया। इस स्थिति से निपटने के लिए समन्वित कीट प्रबंधन (आई.पी.एम.) को प्रभावी रूप से अपनाना अत्यंत आवश्यक है। इसमें कीटनाशकों के समयबद्ध और सीमित उपयोग के साथ–साथ सर्वोत्तम प्रबंधन प्रथाएँ शामिल हैं, जैसे फेरोमोन ट्रैप का उपयोग कीटों की निगरानी के लिए, पीले या नीले चिपचिपे जाल का प्रयोग कीट पकड़ने के लिए, तथा वनस्पति आधारित जैव–कीटनाशकों का प्रयोग पर्यावरण अनुकूल नियंत्रण के लिए हैं।

इन उपायों से किसान कीटों की समय पर पहचान, प्रकोप की रोकथाम, और कीटनाशकों के विवेकपूर्ण उपयोग में सक्षम हो सकते हैं। साथ ही, प्राकृतिक मित्र कीटों को संरक्षित कर प्राकृतिक कीट नियंत्रण को भी बढ़ावा दिया जा सकता है। सर्वे में

यह भी पाया गया कि किसानों में कीटनाशक उपयोग के दौरान सुरक्षा उपायों के प्रति जागरूकता की कमी है। केवल 35% किसान ही प्रोटेक्टिव किट (जैसे मास्क, दस्ताने, एप्रन, चश्मा आदि) का उपयोग करते हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि किसानों को कीटनाशकों के सुरक्षित उपयोग और व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणों (पी.पी.ई. किट) के महत्व के बारे में प्रशिक्षित किया जाए। इससे न केवल उनकी स्वास्थ्य सुरक्षा सुनिश्चित होगी, बल्कि कीटनाशक के दुष्प्रभावों और पर्यावरणीय जोखिमों को भी कम किया जा सकेगा।

जलवायु और मौसम का प्रभाव : सर्वेक्षण के दौरान यह पाया गया कि फसल खराब होने के कई कारणों में से एक प्रमुख कारण जलवायु परिवर्तन था, जिसका उल्लेख 90% से अधिक किसानों ने किया। किसानों ने बताया कि अनियमित वर्षा, लंबे अंतराल तक सूखा पड़ना, और फसल विकास के महत्वपूर्ण चरणों पर मौसम में अत्यधिक उतार–चढ़ाव जैसी परिस्थितियाँ उनकी कपास फसल की वृद्धि और उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रही हैं। इन प्रतिकूल परिस्थितियों से निपटने के लिए, किसानों को स्थान विशेष और मिट्टी के प्रकार के अनुसार उपयुक्त हाइब्रिड किस्मों की सिफारिश की जानी चाहिए। साथ ही, उपलब्ध संसाधनों का समुचित और वैज्ञानिक उपयोग सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है, जिससे फसल की वृद्धि और उत्पादकता दोनों में सुधार हो सके।

इसके अलावा, फलियों के साथ अंतःफसल, एक प्रभावी रणनीति के रूप में उभरकर सामने आई है। यह न केवल कपास फसल के नुकसान के जोखिम को कम करती है, बल्कि उत्पादन को स्थिर भी बनाती है। साथ ही, यह पद्धति मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार लाने में भी सहायक है, क्योंकि फलियां वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करती हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता समय के साथ बढ़ती है और खेती अधिक टिकाऊ बनती है।

संबद्ध उद्यम : सर्वेक्षण के निष्कर्षों से पता चला कि अधिकांश किसान छोटे या सीमांत किसान थे। ऐसी परिस्थितियों में केवल खेती को आय के एकमात्र स्रोत के रूप में अपनाने से पर्याप्त आमदनी नहीं हो पाती थी। अपनी आय बढ़ाने और जोखिम कम करने के लिए, किसानों ने बकरी पालन, डेयरी (गाय पालन), मुर्गी पालन, तथा अन्य कृषि–आधारित सहायक उद्यमों की ओर रुझान दिखाया। इन गतिविधियों ने न केवल उनकी अतिरिक्त आय का स्रोत प्रदान किया, बल्कि रोजगार के अवसर भी बढ़ाए। किसानों के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रम, सहायता सेवाओं तक आसान पहुँच, तथा बेहतर विपणन व्यवस्था ये सभी तत्व किसानों को सहायक व्यवसाय अपनाने और अपनी आजीविका को स्थिर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वैकल्पिक आय स्रोतों को जोड़ने से किसान अपनी कुल आय और उत्पादकता दोनों में वृद्धि कर सकते हैं, साथ ही वित्तीय स्थिरता भी प्राप्त कर सकते हैं। इससे वे पारंपरिक खेती के साथ–साथ व्यावसायिक कृषि से भी अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकते हैं। सूखे या सीमित सिंचाई वाले क्षेत्रों में किसान बेर, आंवला, सीताफल जैसी शुष्क भूमि उपयुक्त फसलों की खेती कर सकते हैं। यह न केवल बांधों और परती जमीन के उपयोग को बढ़ाता है, बल्कि किसान परिवारों को पोषण सुरक्षा भी प्रदान करता है। इन प्रयासों से किसानों की एक ही आय स्रोत पर निर्भरता कम होगी, कृषि व्यवसाय को बढ़ावा मिलेगा, और अंततः उनकी आर्थिक स्थिति और खेती से होने वाली कमाई दोनों में उल्लेखनीय सुधार होगा।

उपज : सर्वेक्षण के परिणामों से यह स्पष्ट हुआ कि अध्ययन क्षेत्र में कपास की पैदावार मध्यम स्तर की रही, लेकिन सिंचित और वर्षा आधारित खेती के बीच उल्लेखनीय अंतर देखा गया। सिंचित परिस्थितियों में औसत पैदावार 8.6 क्विंटल प्रति एकड़ रही, जबकि वर्षा आधारित खेती में यह केवल 5.1 क्विंटल प्रति एकड़ तक सीमित रही। यह उपज असमानता मुख्यतः मिट्टी की उर्वरता, मौसमी

उतार–चढ़ाव, खेती की तकनीकों में भिन्नता, और कीटों के प्रकोप जैसे कारकों से प्रभावित पाई गई।

इस अंतर को कम करने और कपास की उत्पादकता बढ़ाने के लिए, किसान लक्षित कृषि प्रथाओं को अपनाकर 20–30% तक उपज वृद्धि हासिल कर सकते हैं। इनमें मुख्यतः शामिल प्रथाऐं निम्नवत है।

- कम अवधि में पकने वाली किस्मों का चयन, सघन रोपण प्रणाली (एच.डी.पी.एस.) अपनाना जैसे 90 सेमी पंक्ति से पंक्ति और 15 सेमी पौधे से पौधे की दूरी (लगभग 29,629 पौधे/एकड़) उथली मिट्टी के लिए, तथा मध्यम गहरी मिट्टी में 90 × 30 सेमी की दूरी (लगभग 14,400 पौधे/एकड़) बनाए रखना।

सिंचित क्षेत्रों में कपास की अधिकतम उत्पादकता और संसाधनों के कुशल उपयोग के लिए एक समग्र रणनीति आवश्यक है, जिसमें सघन रोपण पद्धति को सूक्ष्म सिंचन प्रणाली (ड्रिप के साथ फर्टिगेशन), प्रभावी कैनोपी प्रबंधन (हाथ से या रासायनिक रूप से) तथा आवश्यकता–आधारित एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम) के साथ जोड़ा गया हो। सुधारित कृषि पद्धतियों को अपनाने वाले 75% से अधिक किसानों ने – जिनमें उपयुक्त पौध प्रकार (संकुचित एवं शीघ्र पकने वाली किस्में) और मृदा प्रकार (उथली से मध्यम गहराई वाली मिट्टी) का समन्वय किया गया था वर्षा–आधारित परिस्थितियों में प्रति एकड़ 9 क्विंटल से अधिक उत्पादन प्राप्त किया। अध्ययन किए गए जिलों में सघन रोपण तकनीक (एच.डी.पी.एस.) पर किए गए प्रायोगिक प्रदर्शन से यह स्पष्ट हुआ कि विश्व औसत उत्पादकता (800 किग्रा लिंट/हेक्टेयर) तक की प्राप्ति वर्षा–आधारित खेती में भी संभव है। यह 10 प्रमुख कपास उत्पादक जिलों का लैंडस्केप डायग्नोस्टिक सर्वे महाराष्ट्र में कपास उत्पादन से जुड़ी महत्वपूर्ण जानकारियाँ और प्रवृत्तियाँ सामने लाता है। इस सर्वे के निष्कर्षों के आधार पर, प्रत्येक जिले के लिए विशिष्ट कार्य योजनाएँ तैयार की जा सकती हैं, जो कपास उत्पादन को बढ़ाने और किसानों की आय में सुधार लाने में सहायक होंगी। इन योजनाओं को राज्य कृषि विभाग और उसके विस्तार अधिकारियों के माध्यम से लागू किया जा सकता है, ताकि जमीनी स्तर पर इनका प्रभाव सुनिश्चित किया जा सके। इस समन्वित दृष्टिकोण से महाराष्ट्र में कपास अर्थव्यवस्था को नई ऊर्जा मिलेगी और प्रदेश में कपास खेती को पुनर्जीवित करने का मार्ग प्रशस्त होगा।



चित्र 4 : सर्वेक्षण के दौरान किसान भाईयों को मार्गदर्शन करते हुए

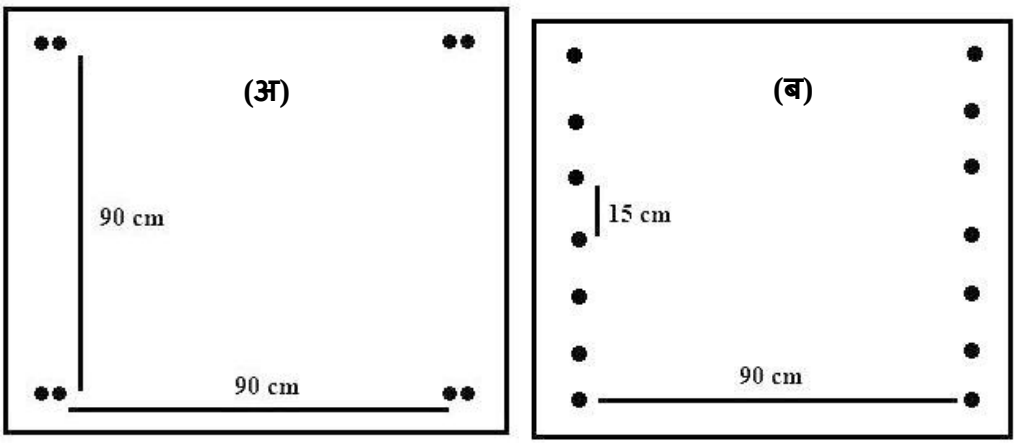
8

वर्षा आधारित कपास की खेती में उच्च घनत्व रोपण प्रणाली अपनाने के लाभ

आर. जयकुमार वरदन[1] (वैज्ञानिक), रवि पल्थिया[2] (विषय विशेषज्ञ),
रामकृष्णा जी. आय.[2] (वरिष्ठ वैज्ञानिक), के. शंकरनारायणन[3] (प्रधान वैज्ञानिक),
अर्जुन तायडे[1] (विभागप्रमुख) एवं एन. प्रताप रेड्डी[2] (विषय विशेषज्ञ)
भा.कृ.अनु.प.– [1]केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र, [2]कृषि विज्ञान केंद्र, मेदक (तेलंगाना),
[3]केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षत्रीय केन्द्र कोयंबटूर –641003 (तमिलनाडु)

वर्षा आधारित कपास की खेती में पारंपरिक रोपण प्रणालियाँ

भारत में वर्षा आधारित कपास की खेती करने वाले किसान आमतौर पर पंक्ति–से–पंक्ति और पौधे–से–पौधे के बीच की दूरी के विभिन्न संयोजनों को अपनाते हैं, जैसे कि 90×30 से.मी, 90×45 से. मी., 90×90 से.मी., 105×30 से.मी., 105×45 से.मी., 120×30 से.मी. और 120×45 से.मी., ताकि पौधों की संख्या का एक निश्चित स्तर बनाए रखा जा सके। इस तरह के व्यापक अंतराल को उच्च बीज लागत, उर्वरक और कीटनाशक के प्रयोग जैसे अंतर सस्य कार्यों (इन्टरकल्चर) को करने में आसानी, यांत्रिक और बैल द्वारा चालित कुदाल चलाने, और केनॉपी के आकार के अनुपात में प्रति पौधे उच्च उपज की धारणा के कारण पसंद किया जाता है। इनमें से, 90×90 से.मी. के अंतराल के साथ वर्गाकार रोपण प्रणाली (एस.पी.एस.) एक अनूठी रोपण प्रणाली है जो तेलंगाना के सिद्दीपेट जिले में व्यापक रूप से प्रचलित है, जिसमें प्रति टीले पर 2 बीज इस प्रकार बोए जाते हैं की अधिक चौड़ी वर्गाकार दूरी के कारण बैलों की एक जोड़ी द्वारा दो–तरफा निराई संभव हो जाती है, जिससे निराई के लिए शारीरिक श्रम पर निर्भरता कम हो जाती है।



चित्र 1. (अ) एस.पी.एस. और (ब) एच.डी.पी.एस. का फील्ड लेआउट

कपास की विशेष परियोजना

भा.कृ.अनु.प.– केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान (सी.आई.सी.आर.), नागपुर राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (एन.एफ.एस.एम.) के अंतर्गत वर्ष 2023 से "कपास पर विशेष परियोजना" का कार्यान्वयन कर रहा है। इस परियोजना के माध्यम से, पाँच प्रमुख कपास उत्पादक राज्यों, महाराष्ट्र, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु, के वर्षा आधारित कपास किसानों के बीच उच्च घनत्व रोपण प्रणाली (एच.डी.पी.एस.) को बढ़ावा दिया जा रहा है। सिद्दीपेट जिले में, सी.आई.सी.आर., मेडक जिले के तुनिकी स्थित कृषि विज्ञान केंद्र (के.वी.के.) के माध्यम से एच.डी.पी.एस. का कार्यान्वयन कर रहा है। खरीफ 2024 के मौसम के दौरान, सिद्दीपेट जिले के 266 वर्षा आधारित कपास किसानों ने एच.डी.पी.एस. को अपनाया।

एच.डी.पी.एस.

एच.डी.पी.एस. इस पद्धती के तहत, किसानों को 90×15 से.मी. (चित्र 1–ब) के घने अंतराल पर प्रति टीले एक बीज बोने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इस उच्च–घनत्व वाले रोपण के लिए प्रति एकड़ छह पैकेट बीजों की आवश्यकता होती है, जबकि एस.पी.एस. में केवल दो पैकेट की आवश्यकता होती है। इस सघन रोपण से पौधों की संख्या तीन गुना बढ़कर 30,000 पौधे प्रति एकड़ हो जाती है और प्रति पौधे बीजकोषों की बजाय प्रति इकाई क्षेत्र में बीजकोषों की संख्या अधिकतम हो जाती है।

पौधों के घनत्व में वृद्धि के साथ, फसल की कैनॉपी को प्रबंधनीय आकार में नियंत्रित करना महत्वपूर्ण है। इसलिए, किसानों को आवश्यकतानुसार मेपिक्वेट क्लोराइड, एक रासायनिक पौध वृद्धि नियामक (पी.जी.आर.) की एक या दो खुराकें छिड़कने की सलाह दी गई। पी.जी.आर. फसल की संरचना में परिवर्तन करता है जिससे प्रकाश प्रवेश और वायु संचार संभव हो पाता है, कीट और रोगों का प्रकोप कम होता है, अंतर सस्य क्रियाएँ (इन्टरकल्चर) सुगम होती हैं, और निचले सिम्पोडिया पर बीजकोषों को बनाए रखने में सहायता मिलती है। इसके अलावा, यह बीजकोषों की समकालिक परिपक्वता में मदद करता है जिससे कपास की चुनाई की संख्या और फसल की अवधि कम होती है।

वर्षा आधारित कपास की खेती के लिए एच. डी.पी.एस. के लाभ

पारंपरिक एस.पी.एस. से एच.डी.पी.एस. में बदलाव ने बुवाई से लेकर चुनाई तक, वर्षा आधारित कपास की खेती के लगभग सभी पहलुओं को प्रभावित किया है। एच.डी.पी.एस. अपनाने से बीज की दर तीन गुना बढ़कर 2 पैकेट प्रति एकड़ से 6 पैकेट प्रति एकड़ हो गई है। परिणामस्वरूप, बीज पर खर्च कुल 3,456 रुपये बढ़कर 1,728 रुपये से 5,184 रुपये हो गया। परिणामस्वरूप, बीज बोने के लिए आवश्यक मजदूरों की संख्या 3 से बढ़कर 5 हो गई, जिससे मजदूरी लागत 600 रुपये बढ़ गई। साथ ही, बैलों द्वारा पंक्तियों पर निशान लगाने का खर्च 2,000 रुपये से 1,000 रुपये कम हो गया क्योंकि एस.पी.एस. की तरह एच.डी.पी.एस. में दो–तरफा निशान लगाने की जरूरत नहीं है।

बैल द्वारा किए जाने वाली गुड़ाई की संख्या 8 गुना से घटकर आधी होकर 4 गुना हो गई है क्योंकि एस.पी.एस. की तरह एच.डी.पी.एस. में दो तरफा गुड़ाई की जरूरत नहीं है। इससे 4,000 रुपये की बचत हुई है। चूंकि वानस्पतिक विकास को नियंत्रित करने के लिए एच.डी.पी.एस. में पी.जी. आर. का प्रयोग करना पड़ता है, इसलिए किसानों को मेपिक्वेट क्लोराइड के दो छिड़काव पर 1,200 रुपये का अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है। औसतन, एच.डी.पी.एस. ने वर्षा आधारित कपास की उपज 4 क्विंटल/एकड़ से बढ़ा कर 8–12 क्विंटल कर दी। अतिरिक्त 50% बीज कपास की उपज प्राप्त करने के लिए किसानों को 6,000 रुपये/एकड़ का अतिरिक्त व्यय करना पड़ता है। साथ ही, एच.डी.पी.एस. के परिणामस्वरूप समकालिक बॉल परिपक्वता हुई है

जिससे कपास की चुनाई की संख्या 3 से घटकर 2 रह गई परिणामस्वरूप फसल की अवधि में कमी आने से किसानों को अगली रबी फसल समय पर बोने में मदद मिली।

हालाँकि एच.डी.पी.एस. में बीज दर में वृद्धि, बुवाई के लिए श्रम, पी.जी.आर. का प्रयोग और कटाई के लिए श्रम के कारण 11,256 रुपये प्रति एकड़ की अतिरिक्त लागत आती है, लेकिन इससे कतारों की मार्किंग और गुड़ाई पर 5,000 रुपये प्रति एकड़ की बचत होती है; और अधिक उपज के कारण 30,084 रुपये की अतिरिक्त आय होती है। इस प्रकार, किसानों को एस.पी.एस. से एच.डी.पी. एस. में स्थानांतरित होने पर हुई अतिरिक्त लागत का तीन गुना अतिरिक्त लाभ प्राप्त हुआ।

परंपरागत रूप से, सिद्दीपेट में वर्षा आधारित कपास किसान अंतर सस्य (इन्टरकल्चर) कार्यों में आसानी के लिए 90×90 से.मी. के अंतराल के साथ एस.पी.एस. को अपनाते हैं, हालांकि इस तरह के व्यापक अंतराल से उन्हें उच्च उपज से वंचित होना पड़ता है। एच.डी.पी.एस. को सिद्दीपेट के लिए उपयुक्त पाया गया, जहां वर्षा आधारित परिस्थितियों में हल्की उथली मिट्टी में कपास की व्यापक रूप से खेती की जाती है। बढ़ी हुई बीज दर, बुवाई और चुनाई के लिए अधिक श्रम और पी. जी.आर. के छिड़काव की एक नई प्रथा के कारण उच्च व्यय होने के बावजूद, गुड़ाई पर खर्च कम हो गया और उपज में 50% की वृद्धि हुई, जिसके परिणामस्वरूप 24,828 रुपये प्रति एकड़ की वृद्धिशील आय हुई। बढ़ी हुई उत्पादकता और लाभ के कारण किसानों ने अगले खरीफ सीजन के दौरान वर्षा आधारित कपास की खेती में एच.डी.पी. एस. को अपनाने में अधिक रुचि दिखाई है।

9

क्या हमें संरक्षण जुताई की जरूरत है?

आशुतोष मिश्रा (तकनीशियन)
भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–441108 (महाराष्ट्र)

संरक्षण जुताई इस बारे में एक स्पष्ट धारणा बनाने में मदद करेगा कि जुताई कैसे ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन को कम या ज्यादा कर सकती है और इसका इस्तेमाल मिट्टी की मजबूती और स्वच्छ वातावरण के साथ दीर्घकालिक उत्पादन के साथ फसल की उत्पादकता बढ़ाने में कैसे सहायक सिद्ध हो सकता है। जैसा कि हम जानते हैं, जुताई के पारंपरिक प्रणाली में, मिट्टी की ऊपरी सतह को यांत्रिक साधनों द्वारा उलटना और खरपतवार मुक्त रखने के साथ सभी पौधों के अवशेषों को हटा दिया जाता है। लेकिन ऐसा करने से, हम मिट्टी और पर्यावरण के लिए कुछ समस्याएं पैदा करते हैं। जब मिट्टी की गहन जुताई की जाती है, तब उसमें रासायनिक तथा जैविक क्रियाएं बढ़ जाती हैं, जिसके परिणामस्वरूप अंततः मृदा के पोषक तत्वों तथा मृदा जैविक पदार्थ की मात्रा में कमी हो जाती है।



चित्र 1 : प्रक्षेत्र का संरक्षण जुताई क्षेत्र

खरपतवार अंकुरण

जब मिट्टी में पर्याप्त वायु संचार एवं पर्याप्त नमी उपलब्ध होती है तथा खरपतवार के बीज मिट्टी के संपर्क में आते हैं, तब उनका अंकुरण होता है। इसलिए अधिक जुताई करने पर खेत में खरपतवार की वृद्धि की संभावना अधिक रहती है। बिना जुताई या संरक्षण जुताई वाले खेतों में खरपतवार की तीव्रता अपेक्षाकृत कम होती है। परंपरागत रूप से किसान खेत की जुताई यांत्रिक साधनों द्वारा करते थे। मिट्टी पर अधिक आवागमन तथा भारी कृषि यंत्रों के अधिक भार से मिट्टी अधिक सघन (कठोर) हो जाती है। परिणामस्वरूप जड़ों का मिट्टी में प्रवेश कठिन हो जाता है तथा हल्की हवा चलने पर भी फसल के गिरने (लॉजिंग) की संभावना बढ़ जाती है। मिट्टी की भारी और लगातार जुताई के कारण, मिट्टी के छोटे कण दीर्घ छिद्र को बंद कर देते हैं, जिससे पानी सोखने की दर कम हो जाती है। इसलिए, भूजल पुनर्भरण कम होता है और पिछले कुछ दशकों में पानी के स्तर में कमी देखी जा सकती है। साथ ही, पानी सोखने की दर कम होने के कारण, कम बारिश की स्थिति में भी ऐसी मिट्टी

में जलभराव होगा। आखिर में, यह जल भराव मिट्टी के स्वास्थ्य को खराब करेगा।

अगर पानी का रिसाव रुक जाता है, तो घुलनशील लवण जमा हो जाएंगे, जिससे खारापन/क्षारीयता की समस्याएं उत्पन्न होंगी। अगर पानी अभेद्य मिट्टी की परत या जुताई की परत के नीचे नहीं जा रहा है, तो पानी बह सकता है, जिससे मिट्टी का कटाव हो सकता है। पारंपरिक जुताई में, जमीन तैयार करने के बाद बीज बिखेरे जाते हैं और फिर ट्रैक्टर से चलने वाले लकड़ी के तख्ते से बीजों को मिट्टी से ढक दिया जाता है। इस प्रक्रिया में बीज एक समान गहराई पर नहीं रह पाते हैं, जिससे अंकुरण प्रक्रिया में देरी होती है, और पौधों की सही संख्या बनाए रखने में दिक्कत होती है।

मिट्टी के स्वास्थ्य पर संरक्षण जुताई का प्रभाव



चित्र 2 : प्रक्षेत्र का परिदृश्य

- **नमी संरक्षण :** संरक्षण जुताई स्थल पर ही नमी के संरक्षण को बढ़ावा देती है। फसल अवशेष आर्द्रताग्राही होते हैं, जो पानी को अधिक समय तक बनाए रखते हैं। इससे मृदा की जलधारण क्षमता बढ़ जाती है।

- **नाइट्रोजन खनिजकरण और स्थिरीकरण :** जब फसल की सिंचाई की जाती है तथा ऊपर से यूरिया का प्रयोग किया जाता है, तब फसल अवशेष जैविक अपघटन की प्रक्रिया से गुजरते हैं। इससे मिट्टी में जैविक कार्बन एवं नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ती है। प्रयुक्त नाइट्रोजन उर्वरक वाष्पशील होते हैं, इसलिए उनका कुछ भाग शीघ्र ही वातावरण में निकल सकता है तथा कुछ नाइट्रोजन अस्थायी रूप से अवशेषों में स्थिर हो जाती है, परंतु नष्ट नहीं होती। जब अवशेष पूर्णतः अपघटित हो जाते हैं, तब स्थिर नाइट्रोजन खनिजीकरण की प्रक्रिया द्वारा पुनः मुक्त होकर जड़ों को उपलब्ध हो जाती है, विशेषकर उस समय जब फसल को नाइट्रोजन की अत्यधिक आवश्यकता होती है।

- **अधिक पोषक तत्वों का अवशोषण :** संरक्षण जुताई में कम मशीनीकरण और मिट्टी के कम संघनन के कारण, पारंपरिक प्रणाली की तुलना में मिट्टी का घनत्व कम होता है। इसलिए, पौधे की जड़ें मिट्टी में गहराई तक जाती हैं, गहरी परतों से पानी के साथ पोषक तत्व लेती हैं और इस तरह अपनी क्षमता का अधिक कुशलता से उपयोग करती हैं।

- **मिट्टी के कटाव और बाढ़ में कमी :** ऊपरी मिट्टी को कचरे और फसल के अवशेषों से ढकने से मिट्टी का कटाव कम होगा और अंततः बाढ़ संभावित क्षेत्रों में बाढ़ की संभावना कम हो जाएगी।

- **मिट्टी की जुताई :** फसल के अवशेषों को मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की उर्वरता और संरचना में सुधार होगा। इसलिए, यह जड़ प्रवेश के प्रतिरोध को कम करता है।

- **मिट्टी का वातन :** संरक्षण जुताई के तहत मिट्टी में अधिक हवा होती है, इसलिए फसल की वृद्धि अच्छी होती है।

- **मिट्टी का संघनन :** पारंपरिक जुताई में ट्रैक्टर के आवाजाही के कारण मिट्टी का संघनन बढ़ जाता है, जिससे जड़ विकास की गहराई कम हो जाती है।

- **मिट्टी का तापमान :** यह मृदा की ऊष्मा चालकता, आयतनात्मक ऊष्मा चालकता तथा मृदा सतह में प्रवेश करने या उससे बाहर जाने वाली ऊष्मा की मात्रा से प्रभावित होता है। अतः मृदा की सतह पर उचित आवरण तथा विभिन्न परतों में पर्याप्त नमी की उपस्थिति आवश्यक होती है, जो संरक्षण जुताई में बेहतर बनी रहती है। संरक्षण जुताई ग्रीष्म एवं शीत ऋतु के दौरान मृदा के सतही एवं उप–सतही तापमान को बनाए रखने में सहायक होती है।

पर्यावरणीय स्वास्थ्य पर संरक्षण जुताई का प्रभाव

- **कम ग्लोबल वार्मिंग क्षमता :** संरक्षण जुताई ईंधन की खपत और मशीनीकरण के मामले में अधिक ऊर्जा कुशल है। अतः ग्लोबल वार्मिंग को कम करने में अपनी भूमिका निभाती है।

- **जुताई के संदर्भ में कार्बन डाइऑक्साइड का उत्सर्जन एवं विकास :** संरक्षण जुताई में मृदा को वायुमंडलीय कार्बन के स्रोत के बजाय कार्बन सिंक में परिवर्तित करने की क्षमता होती है। बड़े पैमाने पर संरक्षण जुताई अपनाने से मृदा कार्बन के ऑक्सीकरण से होने वाली हानि कम की जा सकती है, जिससे कृषि मृदाओं में कार्बन तथा जैविक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि होती है।

- **कम मिट्टी का कटाव और सतह और भूजल का प्रदूषण :** संरक्षण कृषि उर्वरकों के लीचिंग एवं बहाव को कम करके मृदा तथा जल के स्वास्थ्य में सुधार करती है। इससे झीलों एवं नदियों में नाइट्रोजन और फॉस्फोरस के अत्यधिक संचय को रोका जा सकता है।

फसल पर संरक्षण जुताई का प्रभाव

- **कीट एवं रोगों में कमी :** संरक्षण जुताई में कैनोपी के नीचे के सूक्ष्म जलवायु का तापमान तथा वायु संचार नियंत्रित रहता है, जिससे कीट–पतंगों एवं रोगों की समस्या अपेक्षाकृत कम होती है।

- **खरपतवार प्रबंधन :** संरक्षण कृषि में खरपतवारनाशकों पर अधिक निर्भरता के कारण उच्च प्रतिरोधी खरपतवार के विकसित होने तथा उनमें प्रतिरोध उत्पन्न होने का जोखिम बढ़ जाता है। कपास की फसल में शुरुआती स्तर में खरपतवार को नियंत्रित करना जरूरी है, नहीं तो संरक्षण जुताई में खरपतवार हटाने में ज्यादा दिन लगते हैं।
  (i) अगर संभव हो, तो हल्की सिंचाई करें।
  (ii) खरपतवार निकलने से पहले पेंडिमेथालिन हर्बिसाइड (30% ईसी) का छिड़काव करें।

- **उपज :** सामान्य और सूखे की स्थिति में आमतौर पर उपज बढ़ती है। परंतु जब मिट्टी में नमी की मात्रा ज्यादा होती है या भारी बारिश होती है तो उपज कम हो जाती है।

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि प्राकृतिक संसाधन सीमित हैं और कपास सहित सभी फसलों पर जलवायु परिवर्तन का प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। ऊपर बताई गई सभी बातों को ध्यान में रखते हुए, भारत के किसानों को कपास सहित सभी फसलों को उगाने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण अपनाना होगा। किसान खेती के लिए संरक्षण कृषि, प्राकृतिक और जैविक खेती और अन्य खेती के तरीकों को अपना सकते हैं, जिनमें कम बाहरी निवेश की जरूरत होती है।

10

भारत में कपास यंत्रीकरण एवं भविष्य की संभावनाएँ

नारायण बोरकर (वैज्ञानिक), रामकृष्णा जी. आय. (वरिष्ठ वैज्ञानिक),
अर्जुन तायडे (विभाग प्रमुख)
भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–441108 (महाराष्ट्र)

कपास यंत्रीकरण से आदानों के उपयोग की दक्षता में वृद्धि होती है, श्रम–परिश्रम में कमी आती है तथा कृषि की महत्त्वपूर्ण क्रियाओं का समय पर निष्पादन सुनिश्चित होता है, जिससे उत्पादकता एवं स्थिरता में सुधार होता है। भारत में कपास की खेती मुख्यतः पारंपरिक, श्रम–प्रधान एवं ऊर्जा–अक्षम पद्धतियों पर आधारित है, जो विशेषकर बुआई, अंतर–कल्टीवेशन, उर्वरक एवं कीटनाशक के प्रयोग तथा कपास चुनने के दौरान मानव एवं पशु शक्ति पर अत्यधिक निर्भर करती हैं। ऐसी पारंपरिक विधियों के परिणामस्वरूप बीज, उर्वरक एवं कृषि रसायनों जैसे प्रमुख आदानों का प्रभावी उपयोग नहीं हो पाता, जिससे उत्पादन लागत में वृद्धि, उपज में कमी तथा लाभप्रदता में गिरावट देखी जाती है। कृषि के व्यस्त मौसम में तीव्र श्रमिक अभाव एवं मजदूरी की बढ़ती दरें इन समस्याओं को और अधिक गंभीर बना देती हैं। इस संदर्भ में, यंत्रीकरण एक महत्त्वपूर्ण तकनीकी हस्तक्षेप के रूप में उभरा है, जो कृषि कार्यों की समयबद्धता सुनिश्चित करने, क्षेत्रीय क्रियाओं में सटीकता बढ़ाने, संसाधनों के इष्टतम उपयोग को प्रोत्साहित करने तथा श्रम पर निर्भरता कम करने में सहायक है। प्रक्षेत्र के आकार एवं स्थानीय कृषि–जलवायु परिस्थितियों के अनुरूप उपयुक्त यंत्रों एवं उपकरणों को अपनाने से फसल स्थापना को सुदृढ़ करने, उत्पादकता बढ़ाने तथा कपास–आधारित उत्पादन प्रणालियों की लचीलापन एवं दीर्घकालीन स्थिरता को सशक्त करने की पर्याप्त संभावनाएँ हैं।

कपास यंत्रों की वर्तमान स्थिति

भूमि तैयारी

मोल्डबोर्ड हल

मोल्डबोर्ड (एमबी) हल एक प्रमुख प्राथमिक जुताई यंत्र है, जो मिट्टी को काटने, उठाने तथा पलटने के लिए है, ताकि मिट्टी की परत (फरो स्लाइस) का पूर्ण उलटाव सुनिश्चित किया जा सके। इसके संचालन के दौरान 'शेयर' मिट्टी को क्षैतिज रूप से काटता है, 'मोल्डबोर्ड' उस परत को उठाकर मोड़ता है तथा 'लैंडसाइड' पार्श्वीय दबाव के विरुद्ध हल को स्थिर बनाए रखता है। यह समन्वित क्रिया खरपतवार, फसल अवशेष एवं कपास की डंठलों को प्रभावी रूप से मिट्टी में दबाने में सहायक होती है। एमबी हल से जुताई करने पर मिट्टी में वायु संचार में सुधार होता है, जैविक पदार्थों का समुचित समावेशन संभव होता है, नमी का अवशोषण बढ़ता है तथा द्वितीयक जुताई के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ निर्मित होती हैं। वर्तमान में प्रत्यावर्ती (रिवर्सिबल) मोल्डबोर्ड हल सर्वाधिक प्रचलित हैं, क्योंकि इनकी कार्यक्षमता अधिक होती है तथा मेढ़ों(हेडलैंड) पर मोड़ते समय समय की हानि न्यूनतम होती है।

बीज बेड की तैयारी

कल्टीवेटर : यह एक द्वितीयक जुताई का यंत्र है, जिसका उपयोग मुख्यतः मिट्टी को भुरभुरा करने, उथली गुड़ाई करने, खरपतवार नियंत्रण तथा प्राथमिक जुताई के पश्चात बीज–बेड की तैयारी के लिए किया जाता है। यह एक कठोर अथवा स्प्रिंग युक्त टाइन ढांचे से निर्मित होता है, जिसमें फावड़ या स्वीप लगे होते हैं और जिसे टूलबार पर स्थापित किया जाता है। संचालन के दौरान टाइन

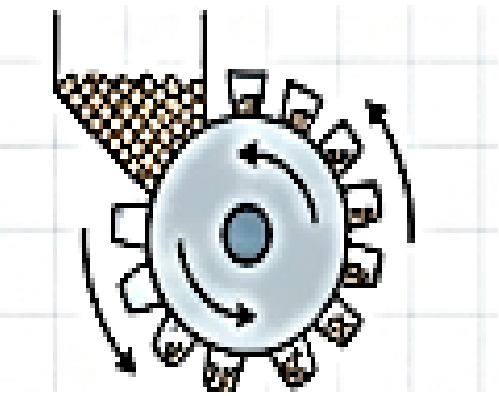
सामान्यतः 5–15 सेमी की उथली गहराई तक मिट्टी में प्रवेश करती हैं, जिससे मिट्टी के ढेले टूटते हैं, खरपतवार उखड़ते हैं तथा फसल अवशेष मिट्टी में मिल जाते हैं, बिना मिट्टी को पलटे। कल्टीवेटर मिट्टी की भुरभुराहट में सुधार करता है, वायु संचार को बढ़ाता है तथा सतही पपड़ी को तोड़कर नमी संरक्षण में सहायक होता है, जिससे बीजों की समान गहराई पर बुवाई सुनिश्चित होती है।

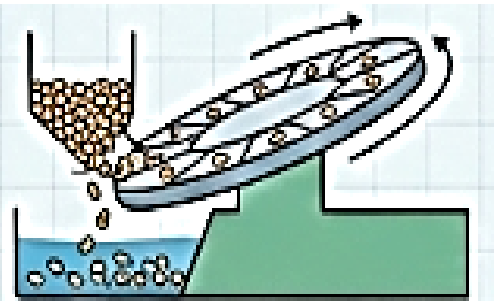
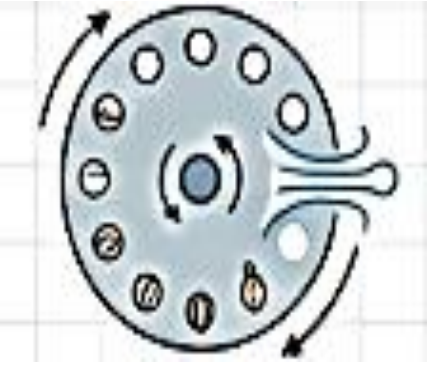
हैरो : यह एक द्वितीयक जुताई का यंत्र है, जिसका उपयोग मुख्यतः मिट्टी के ढेलों को भुरभुरा करने, खेत की सतह को समतल करने तथा बुवाई हेतु उपयुक्त महीन बीज–बेड तैयार करने के लिए किया जाता है। हल के विपरीत, हैरो मिट्टी को पूर्णतः पलटे बिना उसे हिलाता–डुलाता है, जिससे कोमल अवस्था के खरपतवार उखड़ जाते हैं तथा फसल अवशेष और उर्वरक ऊपरी मिट्टी में अच्छी तरह मिश्रित हो जाते हैं। यह प्रक्रिया मिट्टी की भुरभुराहट में सुधार करती है, वायु संचार को बढ़ाती है तथा सतही पपड़ी को तोड़कर नमी संरक्षण में सहायक होती है। परिणामस्वरूप बीज और मिट्टी के बीच उचित संपर्क स्थापित होता है, जो समान अंकुरण एवं फसल की सफल स्थापना के लिए आवश्यक है।

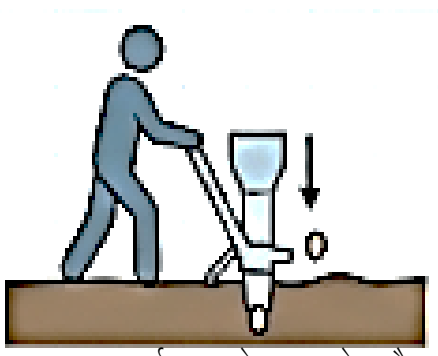
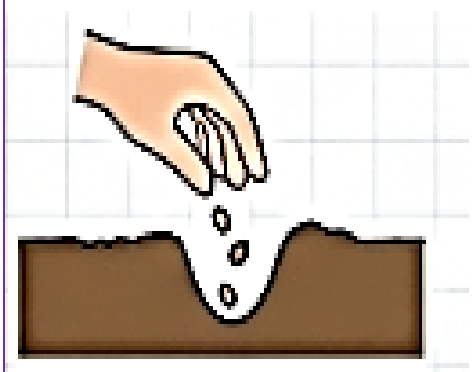
बुआई एवं रोपण

कपास की बुआई एवं रोपण फसल में उपयुक्त पौध संख्या स्थापित करने, खेत में समान फसल अवस्था सुनिश्चित करने तथा अंततः उच्च उत्पादकता प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

तालिका 1 – तकनीकी तुलना : प्लांटर तंत्र

प्रणाली	सिद्धांत (कार्यविधि)	उपयुक्त उपयोग	सीमाएँ (चुनौतियाँ)
कप–फीड 	रोटर पर लगे कप, हॉपर के निचले भाग से गुजरते समय बीजों को भर लेते हैं। जैसे–जैसे कप ऊपर की ओर घूमता है, गुरुत्वाकर्षण बल के कारण बीज कप से निकलकर बीज नली में गिर जाते है, जहाँ से वह फरो ओपनर द्वारा बनाई गई नाली में निर्धारित दूरी पर स्थापित हो जाते है।	सामान्य बुवाई (फजी या डिलिंटेड बीज)	कम सटीकता; बीज उछल सकते हैं

इंक्लाइंड प्लेट  झुकी हुई प्लेट के छिद्र हॉपर में भरे बीजों के संपर्क में आते ही बीजों को अपने भीतर फंसा लेते हैं। जैसे–जैसे प्लेट निर्धारित कोण पर ऊपर की ओर घूमती है, स्क्रेपर अतिरिक्त बीजों को हटा देता है और प्रत्येक छिद्र में सामान्यतः एक ही बीज शेष रहता है। प्लेट के ऊपरी बिंदु पर पहुँचने पर गुरुत्वाकर्षण बल के प्रभाव से बीज छिद्र से मुक्त होकर बीज नली में गिर जाते है, जहाँ से वह फरो ओपनर द्वारा बनाई गई नाली में निर्धारित दूरी पर स्थापित हो जाता है।	डिलिंटेड बीज; मध्यम सटीकता	गति के प्रति संवेदनशील; बीज आकार के अनुसार अलग प्लेट की आवश्यकता होती है।
न्यूमैटिक  हॉपर के निचले भाग में स्थित घूमती हुई डिस्क के छिद्रों पर वैक्यूम (सक्शन) दबाव लगाया जाता है, जिससे प्रत्येक छिद्र पर एक–एक बीज चिपक जाता है। जैसे–जैसे डिस्क आगे की ओर घूमती है, सिंगुलेटर अतिरिक्त बीजों को हटा देता है ताकि प्रत्येक छिद्र पर केवल एक ही बीज बना रहे। निर्धारित रिलीज बिंदु पर पहुँचने पर वैक्यूम दबाव समाप्त (कट–ऑफ) कर दिया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप बीज गुरुत्वाकर्षण बल के कारण डिस्क से अलग होकर बीज नली में गिर जाता है और वहाँ से फरो ओपनर द्वारा बनाई गई नाली में सटीक दूरी पर स्थापित हो जाता है।	प्रिसिजन फार्मिंग; एकल बीज रोपण	अधिक लागत; साफ और ग्रेडेड बीज की आवश्यकता होती है।

जैब प्लांटर  "जैब प्लांटर में बीज हॉपर के नीचे स्थित मीटरिंग कक्ष में सीमित मात्रा में बीज भरे रहते हैं। जब संचालक उपकरण को जमीन में दबाता (जैब करता) है, तो नुकीला भाग मिट्टी में आवश्यक गहराई तक छेद बना देता है। उसी समय ट्रिगर/लीवर दबाने पर मीटरिंग तंत्र सक्रिय होकर एक या दो बीज; बीज नली के माध्यम से बने हुए छेद में गिरा देता है। उपकरण को बाहर निकालते समय मिट्टी स्वाभाविक रूप से बीज को ढक देती है, जिससे उचित गहराई और पौध दूरी बनाए रखने में सहायता मिलती	डिलिंटेड बीज; एकल बीज रोपण	केवल छोटे किसानों (1 एकड़ तक) के लिए उपयुक्त
हाथ से बुवाई  हाथ से बुवाई में किसान बीजों को हाथ से सीधे मिट्टी में डालता है। इस प्रक्रिया में बीज की गहराई और पौधों की दूरी का नियंत्रण पूरी तरह श्रमिक के अनुभव और कौशल पर निर्भर करता है, जिसके कारण अक्सर बीजों की दूरी और गहराई असमान हो सकती है।	सामान्य बुवाई (फजी या डिलिंटेड बीज)	असमान गहराई; अत्यधिक श्रम; अधिक लागत की आवश्यकता होती है।

उपयुक्त सीडर/प्लांटर मशीनरी को अपनाने से बुआई की दक्षता में वृद्धि होती है, बीज की अपव्यय न्यूनतम होती है तथा यंत्रीकृत खरपतवार नियंत्रण को सुगम बनाया जा सकता है।

अंतर सस्य (इन्टरकल्चर) क्रियाएँ

प्रभावी अंतर सस्य (इन्टरकल्चर) क्रियाएँ खरपतवारों को नियंत्रित करती हैं, मिट्टी को भुरभुरा बनाती हैं, वायु संचार को बढ़ाती हैं तथा सतही पपड़ी को तोड़कर मिट्टी की नमी का संरक्षण करती हैं। ये सभी क्रियाएँ सुदृढ़ जड़ विकास को प्रोत्साहित करती हैं। इसके अतिरिक्त, समय पर की गई निराई से दिए गए पोषक तत्वों का कुशल उपयोग सुनिश्चित होता है, जिससे फसल की वृद्धि एवं उपज में सुधार होता है।

तालिका 2 : शक्ति स्रोत की कार्य क्षमता

कृषि यंत्र	शक्ति स्रोत	सर्वोत्तम उपयोग हेतु	कार्य क्षमता (क्षेत्रीय क्षमता)
हाथ से चलने वाली कुदाली (खुरपी)	मानव शक्ति	पौधे के तने के पास उगे हुए खरपतवारों को हटाना।	0.1–0.16 हेक्टे/दिन
पशु चालित ब्लेड हैरो	पशु / शक्ति	फसल में अंतर–पंक्ति निराई।	0.5–0.7 हेक्टे/दिन
पहिया कुदाली (व्हील हो)	रामानव शक्ति (धक्का देकर संचालित)	छोटे खेतों में अंतर–पंक्ति निराई।	0.06–0.07 हेक्टे/दिन
पावर वीडर / स्व–चालित निराई यंत्र	5–8 अश्वशक्ति इंजन	अंतर–पंक्ति निराई	2–4 हेक्टे/दिन
ट्रैक्टर चालित कल्टीवेटर / कल्टीवेटर (संवर्धक यंत्र)	15–20 अश्वशक्ति इंजन ट्रैक्टर	बड़े पैमाने पर कतारों के बीच की जुताई / अंतर–पंक्ति खेती	3–4.5 हेक्टे/दिन

उर्वरक का प्रयोग

कपास फसल में संतुलित एवं समय पर पोषक तत्वों की आपूर्ति अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह फसल की वृद्धि, उपज तथा रेशा गुणवत्ता को सीधे प्रभावित करती है। उर्वरकों का कुशल अनुप्रयोग जड़ क्षेत्र में पोषक तत्वों की उपयुक्त उपलब्धता सुनिश्चित करता है, हानियों को कम करता है तथा पोषक तत्व उपयोग दक्षता को बढ़ाता है। परंपरागत रूप से कपास में उर्वरकों का प्रयोग हाथ से प्रसारण, डिब्लिंग या हिल प्लेसमेंट, साइड ड्रेसिंग तथा मैनुअल स्प्रेडर के माध्यम से किया जाता था। हाल के वर्षों में यंत्रीकृत विधियाँ, जैसे स्पिनिंग–डिस्क ब्रॉडकास्टर, ट्रैक्टर चालित बैंड–प्लेसमेंट एवं साइड–ड्रेसर, बूम एप्लिकेटर तथा ड्रोन आधारित उर्वरक अनुप्रयोग, पोषक तत्वों के प्रयोग में सटीकता, समानता एवं समयबद्धता सुनिश्चित करने के कारण अधिक महत्व प्राप्त कर रही हैं। सिंचित परिस्थितियों में ड्रिप सिंचाई प्रणाली से एकीकृत फर्टिगेशन इकाइयाँ पोषक तत्वों को सीधे जड़ क्षेत्र में सटीक एवं विभाजित (स्प्लिट) मात्रा में प्रदान करती हैं। यह विधि पोषक तत्व उपयोग दक्षता को बढ़ाती है तथा पर्यावरणीय हानियों को न्यूनतम करती है।

पादप संरक्षण

कपास की खेती में पादप संरक्षण अत्यंत महत्वपूर्ण घटक है, क्योंकि यह फसल विभिन्न नाशीजीव कीट, रोगों एवं खरपतवारों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती है। यदि इन जैविक तनावों का प्रभावी प्रबंधन न किया जाए, तो इससे उपज में गंभीर हानि हो सकती है। कीट एवं रोग प्रकोप को कम करने, फसल के स्वास्थ्य की रक्षा करने तथा उच्च उपज एवं उत्तम रेशा गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए पादप संरक्षण रसायनों का समयबद्ध एवं सटीक अनुप्रयोग आवश्यक है।

कपास में पादप संरक्षण हेतु वर्तमान में प्रयुक्त यंत्र :

- **नैपसैक स्प्रेयर :** ये मैनुअल अथवा बैटरी चालित प्रकारों में उपलब्ध होते हैं। छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए उपयुक्त हैं तथा सीमित क्षेत्र में छिड़काव और स्पॉट ट्रीटमेंट के लिए आदर्श माने जाते हैं।
- **पावर स्प्रेयर एवं मिस्ट ब्लोअर :** ये मोटर चालित इकाइयाँ अधिक दाब उत्पन्न करती हैं, जिससे सूक्ष्म बूंद आकार बनता है

और फसल की घनी छत्रछाया के भीतर गहराई तक दवा का प्रवेश सुनिश्चित होता है।

- **ट्रैक्टर चालित बूम स्प्रेयर :** मध्यम एवं बड़े खेतों के लिए डिजाइन किए गए ये यंत्र चौड़ी पट्टी में समान छिड़काव सुनिश्चित करते हैं तथा उच्च कार्य क्षमता प्रदान करते हैं।
- **एयर-असिस्टेड स्प्रेयर :** ये विशेष प्रकार के स्प्रेयर वायु प्रवाह का उपयोग कर दवा की बूंदों को फसल में पहुँचाते हैं, जिससे घनी कपास फसल में पत्तियों के नीचे तक बेहतर वितरण सुनिश्चित होता है।

हाल के वर्षों में मानव रहित हवाई वाहन सटीक छिड़काव के लिए परिवर्तनकारी उपकरण के रूप में उभरे हैं। ड्रोन रसायनों के उपयोग को उल्लेखनीय रूप से कम करते हैं, श्रम की आवश्यकता घटाते हैं तथा संचालक के हानिकारक कीटनाशकों के संपर्क को कम करते हैं। उपयुक्त पादप संरक्षण मशीनरी को अपनाने से प्रभावी कीट प्रबंधन सुनिश्चित होता है, कृषि आदानों के उपयोग की दक्षता में सुधार होता है तथा टिकाऊ एवं पर्यावरणीय रूप से उत्तरदायी कपास उत्पादन प्रणालियों के विकास को बढ़ावा मिलता है।

कपास चुनने की प्रक्रिया

कपास की खेती में कपास चुनने की क्रिया सबसे महत्वपूर्ण एवं श्रम–प्रधान कार्य है, जो प्रायः कुल उत्पादन लागत का सबसे बड़ा हिस्सा होता है। कपास चुनने की प्रक्रिया का यंत्रीकरण न केवल श्रम पर निर्भरता को कम करता है, बल्कि समय पर पिकिंग को भी सुनिश्चित करता है, खेत में होने वाली हानियों को घटाता है तथा रेशा (फाइबर) की गुणवत्ता को सुरक्षित रखने में सहायक होता है।

तालिका 3 : स्पिंडल पिकर एवं कॉटन स्ट्रिपर हार्वेस्टर के बीच तुलना

पैरामीटर	स्पिंडल पिकर	कॉटन स्ट्रिपर
कटाई का सिद्धांत	पूर्णतः खुले बॉल्स का चयन कर तोड़ना	संपूर्ण बॉल भार का निष्कासन
अशुद्धि मात्रा	निम्न	उच्च
रेशा गुणवत्ता	श्रेष्ठ	मध्यम
मशीन मूल्य	उच्च	अपेक्षाकृत कम
उपयुक्तता	समान एवं सघन किस्में	अल्पावधि फसलें / कम अवधि वाली फसलें

स्पिंडल पिकर

स्पिंडल पिकरकपास चुनने के लिए सर्वाधिक व्यापक रूप से उपयोग किया जाने वाला यंत्र है। यह पिकिंग इकाइयों पर लगे घूमने वाले स्पिंडलों की श्रृंखला के माध्यम से केवल खुले हुए बोलों की चयनात्मक तुड़ाई करता है। स्पिंडलों को पानी या रासायनिक घोल से नम किया जाता है, जिससे कपास के रेशे उन पर चिपक सकें। तत्पश्चात रेशों को अलग कर संग्रह टोकरी या मॉड्यूल तक पहुँचाया जाता है। स्पिंडल पिकर के लाभों में कम कचरा मात्रा, बेहतर रेशा गुणवत्ता तथा कटाई उपरांत सफाई की कम आवश्यकता शामिल है। हालाँकि, इसकी उच्च प्रारंभिक निवेश लागत तथा उपयुक्त किस्मों एवं उन्नत कृषि प्रबंधन पद्धतियों की आवश्यकता छोटे कृषक तंत्रों में इसके सीमित प्रसार का कारण बनती है।

कॉटन स्ट्रिपर

कॉटन स्ट्रिपर घूमने वाले ब्रश, बैट या रोलर की सहायता से खुले तथा अधखुले दोनों प्रकार के बोलों को पत्तियों और तनों सहित अलग कर देते हैं। स्पिंडल पिकर के विपरीत, स्ट्रिपर एक ही बार में पूरे पौधे की कटाई करते हैं, जिससे वे उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त होते हैं जहाँ फसल अवधि कम होती है या जहाँ पूर्ण पर्णहरण किया जाता है। स्ट्रिपर संरचना की दृष्टि से अपेक्षाकृत सरल, कम लागत वाले तथा स्पिंडल पिकर की तुलना में कम रखरखाव की आवश्यकता वाले होते हैं। हालाँकि, इनसे प्राप्त कपास में कचरे की मात्रा अधिक होती है, जिसके कारण अतिरिक्त सफाई एवं जिनिंग कार्यों की आवश्यकता पड़ती है।

छोटे एवं सीमांत किसानों द्वारा सामना की जाने वाली चुनौतियाँ : कपास की खेती में यंत्रीकरण महत्वपूर्ण संभावनाएँ प्रदान करता है, किन्तु छोटे एवं सीमांत किसान कई संरचनात्मक बाधाओं का सामना करते हैं

- **आर्थिक सीमाएँ :** ट्रैक्टर, प्लांटर, स्प्रेयर एवं हार्वेस्टर जैसी मशीनों की उच्च प्रारंभिक लागत छोटे किसानों के लिए स्वामित्व को अव्यावहारिक बना देती है। इसके साथ ही, संस्थागत ऋण तक सीमित पहुँच और कम जोखिम वहन क्षमता इस स्थिति को और गंभीर बनाती है।
- **परिचालन संबंधी सीमाएँ :** भूमि के खंडित एवं अनियमित आकार के कारण कार्य क्षमता कम हो जाती है तथा मशीनों का कुशल संचालन बाधित होता है।
- **तकनीकी एवं आधारभूत संरचना अंतराल :** छोटे खेतों के लिए उपयुक्त क्षेत्र–विशिष्ट मशीनरी का अभाव तथा ग्रामीण क्षेत्रों में अपर्याप्त मरम्मत सुविधाएँ मशीनों के निष्क्रिय समय (डाउनटाइम) को बढ़ाती हैं। इसके अतिरिक्त, संचालन एवं कैलिब्रेशन में कौशल की कमी के कारण बार–बार खराबी की समस्या उत्पन्न होती है।
- **सामाजिक–आर्थिक कारक :** श्रम विस्थापन की आशंका, कमजोर ग्रामीण अवसंरचना तथा जलवायु परिवर्तनशीलता के कारण अनिश्चित प्रतिफल निवेश को हतोत्साहित करते हैं।
- **फसल–विशिष्ट बाधाएँ :** स्थानीय कपास किस्मों के अनुकूल किफायती पिकिंग मशीनरी का अभाव एक प्रमुख अवरोध बना हुआ है।

भावी संभावनाएँ एवं आविष्कार : कपास यंत्रीकरण का भविष्य उत्पादकता, स्थिरता एवं श्रम में कमी पर केंद्रित है, जिसे निम्नलिखित प्रगतियों के माध्यम से साकार किया जा सकता है :

- **सटीक कृषि :** जीपीएस–निर्देशित ट्रैक्टर, परिवर्तनीय दर अनुप्रयोग यंत्र तथा सेंसर–आधारित प्रणालियाँ जल, उर्वरक एवं कीटनाशकों का स्थल–विशिष्ट प्रबंधन संभव बनाएँगी।
- **स्मार्ट रोपण :** वास्तविक समय निगरानी एवं स्वचालित गहराई नियंत्रण से युक्त उन्नत सीडर विभिन्न किस्मों में बेहतर फसल स्थापना सुनिश्चित करेंगे।
- **उन्नत पादप संरक्षण :** ड्रोन आधारित अनुप्रयोग एवं कृत्रिम बुद्धिमत्ता (ए आई) आधारित कीट पहचान, रसायनों के उपयोग तथा पर्यावरणीय प्रभाव को कम करेगी।
- **पिकिंग समाधान :** छोटे खेतों के लिए डिजाइन किए गए कॉम्पैक्ट एवं किफायती पिकर तथा समकालिक बोल–खुलने वाली किस्में श्रम की कमी की समस्या का समाधान करेंगी।
- **स्थायी एकीकरण :** नवीकरणीय ऊर्जा, रोबोटिक्स तथा डिजिटल सेवा प्लेटफॉर्म का उपयोग अधिक सुदृढ़ एवं आर्थिक रूप से व्यवहार्य उत्पादन प्रणाली विकसित करेगा।
- **कस्टम हायरिंग :** समावेशी यंत्रीकरण के लिए कस्टम हायरिंग केंद्रों को बढ़ावा देना, लक्षित सब्सिडी प्रदान करना तथा क्षमता निर्माण कार्यक्रम संचालित करना अत्यंत आवश्यक है।

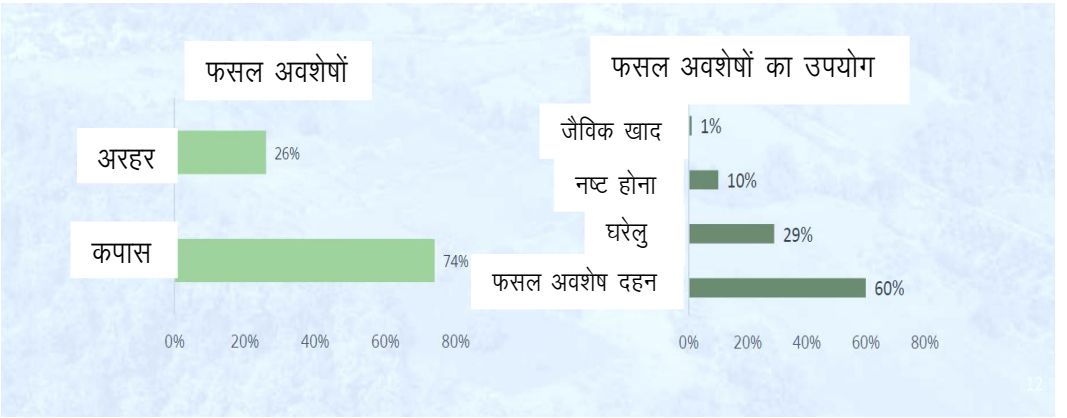
11

कपास के तनों का पुनः उपयोग : री-जेनेरेटिव कृषि में मिट्टी सुधार और संसाधन सृजन के लिए नए दृष्टिकोण

प्रतीक्षा मेहरा[1] (वरिष्ठ परियोजना अधिकारी), रचना पाण्डे[2] (वरिष्ठ वैज्ञानिक)
[1]डब्ल्यूडब्ल्यूएफ – इंडिया, नागपुर (महाराष्ट्र)
[2] भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–441108 (महाराष्ट्र)

कपास एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है, जो लाखों किसान परिवारों की आजीविका का साधन है और वैश्विक वस्त्र उद्योग को गति प्रदान करती है। विश्व कपास उत्पादन में भारत का योगदान लगभग 20% है, जो चीन के बाद दूसरे स्थान पर है, जिसका योगदान लगभग 27% है। 2023–24 के आंकड़ों अनुसार, विश्व स्तर पर, कपास की खेती लगभग 32.6 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर की जाती है, जिसमें से 12.4 मिलियन हेक्टेयर भारत में स्थित है। देश में अनुमानित छह मिलियन कपास किसान हैं, जो आमतौर पर 1.5 हेक्टेयर के छोटे भू–भागों का प्रबंधन करते हैं। कपास की खेती से चुनने के बाद भी काफी मात्रा में बायोमास उत्पन्न होता है। अकेले कपास के तनों से लगभग 3–4 टन प्रति हेक्टेयर लिग्नोसेलुलोसिक अवशेष प्राप्त होता है। जिसका अधिकांश भाग अक्सर जला दिया जाता है, जिससे मिट्टी में कार्बनिक कार्बन की कमी होती है और वायुमंडलीय उत्सर्जन बढ़ता है। हालांकि, कपास का महत्व फसल से प्राप्त रेशे तक ही सीमित नहीं है। सबसे कम उपयोग किए जाने वाले उप–उत्पादों में से एक कपास के तने है – जिसे अक्सर इसके महत्वपूर्ण पारिस्थितिक क्षमता के बावजूद अनुपयोगी माना जाता है। री–जेनेरेटिव कृषि और बायोमास के मूल्यवर्धन पर बढ़ते जोर के साथ, कपास के तनों को उच्च मूल्य वाले मृदा संशोधक उत्पाद के रूप में देखा जा सकता है।

सतपुड़ा पेंच कॉरिडोर (एसपीसी) क्षेत्र में डब्लू डब्लू एफ–इंडिया पिछले एक दशक से अधिक समय से कपास की खेती में पारिस्थितिक तरीकों को बढ़ावा देने पर कार्य कर रहा है। पिछले कुछ वर्षों में यह कार्य लचीली और री–जेनेरेटिव कृषि प्रणालियाँ को बढ़ावा देने कि दिशा में अग्रसर है, जहाँ मिट्टी, जैव विविधता और किसानों तीनों को एक साथ लाभ मिल सके। इस परिवर्तन का एक प्रमुख पहलू यह समझना है कि खेत पर उपलब्ध बायोमास को उच्च गुणवत्ता वाले जैव–इनपुट में कैसे बदला जा सकता है, जिससे बाहरी उर्वरकों पर निर्भरता कम हो और मिट्टी का स्वास्थ्य अच्छा हो। इस बदलाव को समर्थन देने के लिए डब्लू डब्लू एफ –इंडिया ने सतपुड़ा पेंच कॉरिडोर में स्थित सौंसर और पांढुर्णा ब्लॉकों में एक विस्तृत मूल्यांकन किया, ताकि खेतों पर उत्पन्न होने वाली विभिन्न बायोमास धाराओं का मानचित्रण किया जा सके। विश्लेषण से (चित्र 1) पता चला कि परियोजना के गाँवों में वर्मी–कम्पोस्ट और बायोचार उत्पादन की काफी संभावनाएँ हैं, जिनका मुख्य आधार दो प्रमुख फसल के अवशेष हैं, कपास और तुअर (अरहर) की तने । कुल अवशेषों में से लगभग 74% हिस्सा कपास की तनों का था, जो कम्पोस्ट और बायोचार–दोनों के लिए उपयुक्त पाया गया; जबकि शेष 26% तुअर की तनों से प्राप्त हुआ। सर्वेक्षण किए गए गाँवों में औसतन प्रति ग्राम 154 टन अवशेष उत्पन्न होने का अनुमान लगाया गया, जिनमें से लगभग 77 टन प्रत्येक सीजन में बिना उपयोग के रह जाते हैं।



चित्र 1 : सौंसर और पांढुर्णा ब्लॉकों में उत्पन्न फसल अवशेषों तथा फसल अवशेष उपयोग की स्थिति के मूल्यांकन परिणाम

अध्ययन स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि कपास के तनों की प्रचुरता, उसके जैव–रासायनिक गुणों और आसानी से एकत्रित होने की क्षमता के कारण– कम्पोस्टिंग और बायोचार उत्पादन के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में अत्यधिक संभावनाएँ रखती हैं। यह उन्हें मिट्टी के स्वास्थ्य पुर्नस्थापन प्रयासों का एक मूल्यवान घटक बनाती है। प्रभावी अवशेष प्रबंधन प्रणाली की कमी और मूल्य–वर्धित विकल्पों के प्रति सीमित ज्ञान के कारण कपास के तनों (बायोमास) का एक बड़ा हिस्सा आज भी खुले में जला दिया जाता है। यह प्रथा वायु प्रदूषण, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन और मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ की कमी का कारण बनती है। मूल्यांकन से पता चलता है कि वर्तमान में कम उपयोग किए जा रहे इस बायोमास को उच्च–मूल्य वाले जैव–इनपुट में बदलने का एक बड़ा अवसर उपलब्ध है। अतिरिक्त अवशेषों को वर्मी–कम्पोस्ट और बायोचार में बदलने से मिट्टी में कार्बन की मात्रा में वृद्धि हो सकती है, जिनमें पोषक तत्वों को रोककर रखने की क्षमता बढ़ती है, नमी संधारण क्षमता में सुधार होता है, और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है।

कपास के तनों को वर्मी–कम्पोस्ट में बदलना–मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने का जैविक मार्ग

कपास की तनों में रेशेदार कार्बन कि समृद्ध संरचना होती है, जो उन्हें वर्मी–कम्पोस्टिंग के लिए उपयुक्त बनाती है। कपास की जैवरासायनिक संरचना में सेल्यूलोज, हेमिसेल्यूलोज और लिग्निन प्रचुर मात्रा में होता हैं। जब इन कपास कि तनों को गोबर, गौ मूत्र और केचुओं जैसे ईसेनिया फेटिडा (लाल कीड़ा/वर्मी कीड़ा) और यूड्रिलस यूजेनिया (ट्रॉपिकल वर्मी/उष्णकटिबंधीय वर्मी कीड़ा) द्वारा उपचारित किए जाने के बाद, जो उत्पाद मिलता है वह नाईट्रोजन/फास्फेट/पोटैशियम जैसे पोषक तत्वों से भरपूर होता हैं और साथ ही लाभकारी सूक्ष्मजीवों से युक्त रहता है। कपास–तनों आधारित वर्मी–कम्पोस्ट का उपयोग करने से मिट्टी की बनावट, नमी धारण क्षमता और पोषक तत्त्वों की उपलब्धता में सुधार की रिपोर्ट दी है, जो इसे कपास उगाने वाले क्षेत्रों में एक प्राकृतिक मिट्टी सुधारक के रूप में अत्यंत मूल्यवान साबित करता है।



चित्र 2 : सतपुड़ा पेंच कॉरिडोर (एसपीसी) में डब्लू डब्लू एफ–इंडिया द्वारा विकसित बायोइनपुट रिसोर्स सेंटर्स (बीआरसी)

कपास की तनों से बायोचार- मिट्टी के स्वास्थ्य में दीर्घकालिक निवेश :

कपास की तनों से प्राप्त होने वाले विभिन्न उप–उत्पादों में, बायोचार अपने दीर्घकालिक लाभों के कारण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। नियंत्रित, कम–ऑक्सीजन स्थितियों में गर्म करके तैयार किया गया बायोचार मिट्टी में एक स्थिर कार्बन भंडार के रूप में कार्य करता है। सतपुड़ा पेंच कॉरिडोर में तैयार कपास–डंठल आधारित बायोचार ने प्रयोगशाला विश्लेषण के दौरान निम्नलिखित आशाजनक गुण दर्शाए : उच्च स्थिर कार्बन मात्रा (71–34%); कम राख सामग्री (9–87%); अत्यधिक क्षारीय पीएच (12–55); बड़ा सतही क्षेत्रफल (118–11 मी2/ग्रा); अच्छी तरह विकसित छिद्र आयतन (1–28 सेमी^{3}/ग्रा)।

ये गुण एक छिद्रयुक्त, पोषक–तत्वों को थामकर रखने वाला ढांचा (मैट्रिक्स) बनाते हैं, जो मिट्टी में वायु संचार को बेहतर करता है, अम्लता को संतुलित करता है और लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए अनुकूल आवास प्रदान करता है। कम्पोस्ट के साथ मिलाने या सीधे खेत में डालने पर बायोचार पोषक–तत्वों के संरक्षण को बढ़ाता है और लीचिंग को कम करता है, जिससे यह वर्षा–आधारित कृषि प्रणालियों में विशेष रूप से उपयोगी बन जाता है।

पिछले दो वर्षों में डब्लू डब्लू एफ–इंडिया गाँव–स्तर पर बायोइनपुट रिसोर्स सेंटस (बीआरसी) के क्षमतावर्धन पर विशेष ध्यान दे रहा है (चित्र 2), ताकि गाँव–स्तर के ऐसे केंद्रों के रूप में विकसित किया जा सके जहाँ किसानों को स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री से तैयार उच्च–गुणवत्ता वाले जैव–इनपुट जैसे वर्मी–कम्पोस्ट, बायोचार और जैव–घोल सहज रूप से प्राप्त हो सकें। ये केंद्र प्रशिक्षण प्लेटफॉर्म के रूप में भी कार्य करते हैं, जहाँ किसानों को विभिन्न प्रकार के जैव–इनपुट और जैव–घोल अपने खेतों पर ही तैयार करने की क्षमता विकसित की जाती है। बायोइनपुट रिसोर्स सेंटर्स के सुचारु संचालन को बढ़ावा देने से किसानों को कम लागत पर मिट्टी सुधारक उपलब्ध होते हैं और साथ ही कृषि बायोमास के परिपत्र उपयोग को प्रोत्साहन मिलता है, जिससे बायोमास अपव्यय कम होता है और पोषक तत्वों का चक्रण बेहतर होता है। इस पहल से उभरने वाले सबसे संभावनाशील अवसरों में से एक है कपास की डंठलों को वर्मी–कम्पोस्ट और बायोचार में परिवर्तित करना, जो मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार और फसल प्रदर्शन को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।




चित्र 3 : किसान कपास के तनों से बायोचार और वर्मी कंपोस्ट तैयार करते हुए

कपास की तनों को उच्च–गुणवत्ता वाले मृदा सुधारक में बदलना यह दर्शाता है कि कृषि अवशेष किस प्रकार खेत स्तर पर एक सुखरू जैव–अर्थव्यवस्था को गति दे सकते हैं। (चित्र 3) कचरे के रूप में जलाने के बजाय, ये तने उत्पादन चक्र में मूल्यवान संसाधनों के रूप में दोबारा प्रवेश कर सकते हैं, जो मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती हैं, किसानों की लागत कम करती हैं और पर्यावरणीय परिणामों में सुधार लाती हैं। कपास के तनों को कचरे के बजाय एक संपत्ति के रूप में परिभाषित करके, किसान अपनी मिट्टी को सुदृढ़ करने, रासायनिक इनपुट पर निर्भरता कम करने और अधिक लचीली कृषि प्रणालियाँ अपनाने के नए अवसर प्राप्त करते हैं। यह परिवर्तन री–जेनेरेटिव कृषि के सिद्धांतों के साथ भी गहराई से जुड़ा है–जहाँ पर्यावरणीय स्वास्थ्य, खेत की उत्पादकता और स्थानीय आजीविकाएँ एक–दूसरे को सुदृढ़ करती हैं।

"कपास के तनों का पुनः उपयोग" यह यात्रा दिखाती है कि किस प्रकार साधारण हस्तक्षेप–जैसे कपास चुनने के बाद बचे हुए तनों का पुनः उपयोग कृषि परिदृश्य में व्यापक परिवर्तन ला सकता हैं। स्थानीय बायोमास का उपयोग कर वर्मी कम्पोस्ट और बायोचार तैयार करने के माध्यम से, एसपीसी क्षेत्र के किसान स्वस्थ मिट्टी, कम उत्सर्जन और अधिक पर्यावयरण अनुकुल कपास प्रणालियों की दिशा में एक नया मार्ग बना रहे हैं।

12

"कपास फॉरेस्ट की संकल्पना : योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी), नागालैंड का एक मॉडल"

एच.जी. केंचरड्डी[1] (सहायक प्रोफेसर), ज्योतिवी वस्त्रद[2] (अध्यक्ष),
रामकृष्णा जी. आय.[3] (वरिष्ठ वैज्ञानिक), एवं
संजीव कुमार सिंह[4] (वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख केविके)
[1,2]कॉलेज ऑफ कम्युनिटी साइंस, सीएयू(आय) तुरा (मेघालय)
[3] भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर (महाराष्ट्र)
[4]भाकृअनुप – राष्ट्रीय मिथुन अनुसंधान केंद्र, केवीके फेक, पोर्बा (नागालैंड)

फेक जिले, नागालैंड में योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) द्वारा अपनाया गया कॉटन फॉरेस्ट मॉडल कपास की खेती, प्रसंस्करण और पारंपरिक वस्त्र उत्पादन के लिए एक सृजनात्मक और सतत दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह प्रणाली स्थायी प्रजाति *गॉसिपियम बारबाडेंस* एल., के इर्द–गिर्द केंद्रित है, जिसे स्थानीय रूप से कई पीढ़ियों से उगाया जाता रहा है, और यह कम उपयोग की भूमि को कपास की उत्पादकता से भरे परिदृश्य में बदल देती है। यह मॉडल उच्च–गुणवत्ता वाले फाइबर की सतत आपूर्ति भी सुनिश्चित करता है। उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में, जहाँ बुनाई सांस्कृतिक पहचान का एक अभिन्न हिस्सा है, शिल्पकार कच्चे कपास की लगातार कमी का सामना करते हैं। वही कॉटन फॉरेस्ट की अवधारणा स्थानीय और समुदाय–प्रबंधित फाइबर उत्पादन को सक्षम बनाकर व्यावहारिक समाधान प्रदान करती है। योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) इस मॉडल की प्रभावशीलता को इसकी पूरी मूल्य श्रृंखला के माध्यम से प्रदर्शित करता है। स्थायी कपास की खेती, फाइबर का प्रसंस्करण स्थानीय तकनीकों का उपयोग करके, स्थानीय रूप से उपलब्ध पौधों से प्राकृतिक रंग तैयार करना, और सांस्कृतिक प्रतीकों से समृद्ध कपास वस्त्र बुनना इसके अंतर्गत है। ये प्रथाएँ पर्यावरण के अनुकूल, आर्थिक रूप से व्यवहार्य और पारंपरिक पारिस्थितिक ज्ञान में गहराई से निहित हैं। "योरोबा" गाँव में कपास की खेती और बुनाई के पुनरुद्धार से महिलाओं की आजीविका सशक्त हुई है, समुदाय की सहनशीलता/मजबूती बढ़ी है तथा एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक विरासत को पुनर्जीवित किया गया है। सीमित उपकरणों और बाजार तक पहुंच जैसी चुनौतियों के बावजूद, योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) का सामूहिक प्रयास एक घटते शिल्प को सतत आजीविका प्रणाली में बदलने में सफल रहा है। संगठनों के समर्थन, गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री और बेहतर प्रसंस्करण तकनीकों के साथ, कॉटन फॉरेस्ट मॉडल उत्तर–पूर्व के अन्य बुनाई समुदायों के लिय भी महत्वपूर्ण क्षमता रखता है। यह कृषि, पर्यावरण और संस्कृति को एकीकृत करने वाला समग्र ढांचा है, जो सतत फाइबर उत्पादन, ग्रामीण सशक्तिकरण और स्वदेशी वस्त्र परंपराओं के संरक्षण की दिशा में एक प्रशस्त मार्ग प्रदान करता है।

सी आइलैंड कपास (*गॉसिपियम बारबाडेंस* एल.), जिसे आमतौर पर एक्स्ट्रा लॉन्ग स्टेपल कपास के नाम से जाना जाता है, दुनिया में अपनी उत्कृष्ट फाइबर गुणवत्ता के कारण सबसे बेहतरीन कपास प्रजातियों में से एक है। इन असाधारण गुणों के कारण, इसकी घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में उच्च मांग रहती है। अधिकांश अन्य कपास प्रजातियों के विपरीत, जिन्हें वार्षिक फसल के रूप

में उगाया जाता है, *गॉसिपियम बारबाडेंस* एल., बहुवर्षीय फसल है और एक बार स्थापित होने के बाद इसे 10 से 15 वर्षों तक सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। यह अनोखी विशेषता सतत कपास आधारित प्रणालियों के लिए नए मार्ग खोलती है, जो बार–बार भूमि की तैयारी और इनपुट आवश्यकताओं को कम करती हैं, इस प्रकार उत्पादन लागत घटती हैं और समय के साथ मिट्टी के स्वास्थ्य का संरक्षण भी होता हैं।

गॉसिपियम बारबाडेंस एल. का उपयोग करके एक कॉटन फॉरेस्ट विकसित करने की अवधारणा सतत कपास की खेती और संसाधन प्रबंधन की दिशा में एक सृजनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। इस प्रणाली में, स्थायी कपास के पौधों को समूहों या निर्धारित भूमि के हिस्सों में उगाया जाता है, जैसे कि एक कृषि–वनस्पति मॉडल, जो क्षतिग्रस्त या कम उपयोग वाली भूमि को उत्पादक पारिस्थितिकी तंत्र में बदल देता है। ऐसे कॉटन फॉरेस्ट न केवल उच्च–गुणवत्ता वाले फाइबर का सतत स्रोत प्रदान करते हैं, बल्कि मिट्टी के स्थिरीकरण, जैव विविधता में वृद्धि, और सूक्ष्म जलवायु को बेहतर बनाने में भी योगदान करते हैं। इसके अतिरिक्त, ये बार–बार जुताई और पुनः रोपण की आवश्यकता को कम करके कार्बन पृथक्करण और दीर्घकालिक पर्यावरणीय लाभ का अवसर भी प्रदान करते हैं।

यह अवधारणा विशेष रूप से भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण है, जहाँ हथकरघा और वस्त्र उद्योग ग्रामीण आजीविका को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह क्षेत्र अपनी समृद्ध बुनाई विरासत के लिए प्रसिद्ध है, जिसमें प्रत्येक जनजाति अपनी अनूठी परंपराएँ, रूपांकनों और सांस्कृतिक कथाओं को संरक्षित करती है। कुशल शिल्पकला के इस मजबूत आधार के बावजूद, बुनकर अभी भी कच्चे कपास की लगातार कमी की चुनौती का सामना कर रहे हैं। कपास के लिए बाहरी बाजारों पर निर्भरता अनियमित आपूर्ति, उच्च इनपुट लागत, मुख्यतः स्वदेशी कपास आधारित वस्त्रों के उत्पादन में कमी का कारण बनती है। उत्तर–पूर्व क्षेत्र में हालांकि कई प्राकृतिक और पारिस्थितिक लाभ हैं, जो इस समस्या को प्रभावी ढंग से संबोधित कर सकते हैं। इस क्षेत्र का अनुकूल जलवायु, विस्तृत वन सीमाओं और क्षतिग्रस्त भूमि के बड़े हिस्सों के साथ, जो अधिकांशतः कम उपयोग में हैं, कपास की खेती के लिए उत्कृष्ट अवसर प्रदान करता है। स्थानीय रूप से अनुकूलित या संभावित कपास जीनोटाइप्स को कॉटन फॉरेस्ट मॉडल के माध्यम से प्रस्तुत करने से इन क्षेत्रों को उत्पादक परिदृश्यों में परिवर्तित किया जा सकता है, जो क्षेत्र की कृषि–जलवायु क्षमता के अनुकूल है। यह दृष्टिकोण न केवल पारंपरिक बुनकरों के लिए फाइबर की सतत और विश्वसनीय आपूर्ति सुनिश्चित करेगा, बल्कि एक स्थायी और स्थानीय रूप से लचीली आपूर्ति श्रृंखला बनाने में भी मदद करेगा। अंततः यह कपास उगाने वालों और हथकरघा शिल्पकारों दोनों को सशक्त करेगा, जिससे पूरे क्षेत्र में आजीविका के अवसर बढ़ेंगे।

इस संदर्भ में, नागालैंड के योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) के प्रयास उल्लेखनीय हैं और इन्हें दोहराने योग्य मॉडल के रूप में देखा जा सकता है। योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) ने कई पीढ़ियों तक समुदाय द्वारा प्रबंधित कॉटन फॉरेस्ट को सफलतापूर्वक बनाए रखा है। इन्होंने प्रभावी रूप से यह प्रदर्शित किया है कि पारंपरिक पारिस्थितिक ज्ञान और स्थानीय सृजनात्मकता के संयोजन से सतत कपास आधारित आजीविका प्रणाली बनाई जा सकती है। समूह के सदस्य गाँव की भूमि में स्थायी कपास के पौधों की खेती और प्रबंधन करते हैं, फाइबर की कटाई करते हैं और इसे समुदाय के भीतर ही धागे और वस्त्र में संसाधित करते हैं। बुनाई पारंपरिक करघों का उपयोग करके की जाती है, और स्थानीय रूप से उपलब्ध पौधों से प्राप्त प्राकृतिक रंगों का उपयोग पर्यावरण–अनुकूल कपास वस्त्र बनाने के लिए किया जाता है।



चित्र : 1 योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी)

यह आत्म–निर्भर मॉडल समुदाय के भीतर ही प्रबंधित कपास की खेती से लेकर वस्त्र उत्पादन तक की पूरी मूल्य श्रृंखला का प्रतिनिधित्व करता है। यह स्थिर कच्चा माल उपलब्धता सुनिश्चित करता है, आय के अवसर बढ़ाता है, और समुदाय की सांस्कृतिक एवं वस्त्र विरासत का संरक्षण करता है। यह अवधारणा पर्यावरण संरक्षण के सिद्धांतों के साथ भी संरेखित है, क्योंकि यह जैविक प्रथाओं, जैव विविधता संरक्षण और कृत्रिम इनपुट के न्यूनतम उपयोग को बढ़ावा देती है। प्राकृतिक रंगों का उपयोग केवल अंतिम उत्पादों में मूल्य नहीं जोड़ता, बल्कि स्थानीय रूप से उपलब्ध पौधों के संसाधनों के उपयोग को भी बढ़ावा देता है, जिससे पारंपरिक ज्ञान प्रणाली मजबूत होती है और सिंथेटिक रंगों से होने वाला पर्यावरणीय प्रदूषण कम होता है।

योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) द्वारा विकसित कॉटन फॉरेस्ट मॉडल पारंपरिक प्रथाओं को आधुनिक सततता लक्ष्यों के साथ जोड़ने की संभावनाओं को उजागर करता है। इस अवधारणा का उत्तर–पूर्वी राज्यों में अन्य इच्छुक बुनाई समुदायों तक विस्तार करके स्थानीय कपास उत्पादन को पुनर्जीवित किया जा सकता है और आयातित कपास पर निर्भरता को कम किया जा सकता है। इसके अलावा, यह महिलाओं के सशक्तिकरण, ग्रामीण उद्यमिता और स्थानीय संसाधनों एवं ज्ञान पर आधारित मूल्य संवर्धित वस्त्र उत्पादन के लिए नए अवसर पैदा कर सकता है। यह मॉडल समुदाय की भागीदारी और स्वामित्व को भी प्रोत्साहित करता है, जहाँ प्रत्येक सदस्य कपास आधारित उत्पादों की खेती, प्रसंस्करण और विपणन में योगदान देता है, जिससे समूह के भीतर लाभ का समान वितरण सुनिश्चित होता है।

कृषि अनुसंधान संस्थाओं, वस्त्र बोर्डों और ग्रामीण विकास एजेंसियों से संस्थागत समर्थन इस पहल को और मजबूत कर सकता है, जो गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री, तकनीकी मार्गदर्शन और सतत कपास प्रबंधन प्रथाओं में प्रशिक्षण प्रदान करता है। स्थानीय स्तर पर आधुनिक जिनिंग और स्पिनिंग तकनीकों का समावेश फाइबर की गुणवत्ता और उत्पादकता को बढ़ा सकता है, जिससे यह मॉडल आर्थिक रूप से व्यवहार्य और विस्तार योग्य बन सकता है। कॉटन फॉरेस्ट आधारित हस्तनिर्मित

वस्त्रों को पर्यावरण–अनुकूल और नैतिक रूप से उत्पादित उत्पाद के रूप में ब्रांडिंग और बाजार से जोड़ना राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दोनों स्तरों पर विशेष बाजार खोल सकता है। *गॉसिपियम बारबाडेंस* एल. आधारित कॉटन फॉरेस्ट का विकास केवल कृषि की सृजनात्मकता नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और आर्थिक हस्तक्षेप भी है, जो क्षेत्र में ग्रामीण बुनाई परिदृश्य को बदल सकता है। इसमें कृषि, पर्यावरण और संस्कृति के बीच एक सेतु का कार्य करने की क्षमता है, जो पारंपरिक कौशल के संरक्षण के साथ सतत आय के अवसर भी प्रदान करता है। यह अवधारणा सतत फाइबर उत्पादन, आजीविका सुरक्षा और सांस्कृतिक संरक्षण का समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है, जो वास्तव में प्रकृति, लोगों और परंपरा को एक सशक्त और आत्मनिर्भर प्रणाली में जोड़ने के विचार का प्रतिनिधित्व करती है।

योरोबा सेल्फ हेल्प ग्रुप, फेक, नागालैंड

नागालैंड के फेक जिले की शांत पहाड़ियों में स्थित है योरोबा गाँव, एक ऐसा स्थान जहाँ प्रत्येक करघे पर बुने गए धागे में परंपरा जीवित है। पीढ़ियों से, योरोबा की महिलाएँ कपास की खेती, कताई और बुनाई की कला को पोषित करती आ रही हैं, वह साधारण रेशों को पहचान कर उन्हें संस्कृति की जीवंत अभिव्यक्तियों में बदलती हैं। यहाँ बुनाई केवल एक शिल्प नहीं है; यह एक जीवित विरासत है, एक भाषा है जिसके माध्यम से नागा महिलाएँ अपनी कहानियाँ सुनाती हैं, अपने स्त्रीत्व का उत्सव मनाती हैं और अपने समुदाय के बंधनों को मजबूत करती हैं।

हालाँकि 2012 तक, करघों की लय धीरे–धीरे फीकी पड़ने लगी थी। आधुनिकीकरण और बदलती जीवनशैलियों ने चुपचाप प्रवेश किया, जिससे युवा पीढ़ियाँ उस पूर्वजों के शिल्प से दूर हो गईं जिसने कभी उनके गाँव के जीवन की पहचान बनाई थी। इसी अनिश्चितता के क्षण में योरोबा की महिलाएँ एक साथ आयी, एक साझा उद्देश्य से जुड़कर धीरे–धीरे खोती जा रही विरासत को पुनर्जीवित और सुरक्षित किया। योरोबा गाँव का स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) फेडरेशन इसी सामूहिक संकल्प से जन्मा। विभिन्न क्षेत्रों की महिलाओं द्वारा गठित, लेकिन एक सामान्य सपने से बंधी इस फेडरेशन ने अतीत और वर्तमान को सशक्तिकरण और लचीलापन की नई चादर में बुनने का प्रयास किया। उन्होंने केवल अपनी स्वदेशी कौशलों के संरक्षण की कल्पना नहीं की, बल्कि उन कौशलों को आजीविका और सम्मान का स्रोत बनाने का भी सपना देखा। सामूहिक शक्ति के माध्यम से, उन्होंने फिर से कपास की खेती शुरू की, कताई और बुनाई की, जैसे उनकी माताओं और दादी–नानी ने किया था, लेकिन इस बार एक नवीनीकृत उद्देश्य और संगठन के साथ। स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) फेडरेशन की स्थापना एक महत्वपूर्ण मोड़ थी, जो कि विरासत और आशा के बीच एक पुल बना। इसने गाँव में करघों की आवाज को पुनर्जीवित किया और पुनः पुष्टि की कि परंपरा के धागे, जब समुदाय द्वारा मजबूती से थामे जाएँ, तो यह संस्कृति और प्रगति दोनों को बनाए रखने के लिए पर्याप्त मजबूत वस्त्र बना सकते हैं।

योरोबा के कॉटन फॉरेस्ट



चित्र 2 : कॉटन फॉरेस्ट

फेक जिले की ढलानदार पहाड़ियों में बसा योरोबा गाँव अपने परिदृश्य में कॉटन फॉरेस्ट की एक असाधारण विरासत समेटे हुए है। यह जंगल, किसी अन्य की तरह केवल प्रकृति की रचना नहीं था, बल्कि गाँववासियों के पूर्वजों की दूरदर्शिता और

बुद्धिमता का परिणाम था। पीढ़ियों पहले, उन्होंने अपनी समुदाय की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए एक आत्म–निर्भर कपास स्रोत की कल्पना की, और इस प्रकार उन्होंने *गॉसिपियम बारबाडेंस*, लंबे रेशे वाली कपास प्रजाति, जिसे इसके महीन रेशमी बनावट और बेहतर फाइबर गुणवत्ता के लिए जाना जाता है, के पौधे लगाए। अधिकांश उगाई जाने वाली फसलों के विपरीत, ये कपास के पौधे स्थायी थे, जो बिना पुनः रोपण के दस से पंद्रह वर्षों तक फल–फूल सकते थे। योरोबा के लोग फसल के साथ तालमेल में जीना सीख गए, इसे पोषित करते,



चित्र 3 : कपास की चुनाई

छंटाई करते, और जहाँ पुराने पौधे कमजोर होने लगते वहाँ नए पौधे लगाते। समय के साथ, यह हरित क्षेत्र कॉटन फॉरेस्ट के रूप में जाना गया – परंपरा और सततता दोनों का जीवित स्मारक। योरोबा में बुनाई एक अलग शिल्प नहीं है, बल्कि इस जंगल में गहराई से निहित एक कला रूप है। यहाँ उगाई गई कपास गाँव के जीवन के प्रत्येक चरण में बीज से लेकर वस्त्र तक प्रवाहित होती है। जब महिलाएँ कताई और बुनाई करती हैं, तो वे केवल वस्त्र नहीं बना रही होतीं; वे भूमि, श्रम और विरासत के बीच पूर्वजों की वार्तालाप को जारी रखती हैं।

चुनने के बाद, चुने गये कपास से किसी भी प्रकार की नमी को निकालने के लिए दो से तीन दिनों तक धूप में सावधानीपूर्वक सुखाया जाता है। पूरी तरह से सूख जाने के बाद, कपास को पारंपरिक पाउंडिंग प्रक्रिया से गुजारा जाता है, जिसमें थ्रैशिंग स्टोन्स का उपयोग किया जाता है, जिसे स्थानीय रूप से *फ्रोन्यो त्सु* कहा जाता है, ताकि रेशों को ढीला किया जा सके और अलग किया जा सके। यह विधि, जो पीढ़ियों से चली आ रही है, यह सुनिश्चित करती है कि कपास की प्राकृतिक बनावट और गुणवत्ता बनी रहे।

मुलायम की गई कपास को फिर पारंपरिक कताई चकरी जिसे *फ्रोस कहते है* पर कुशलतापूर्वक



चित्र 4 : कपास की धुनाई

तैयार किया जाता है, जहाँ निपुण हाथ रेशों की नाजुकता से खींचकर असाधारण महीन धागों में बदलते हैं। प्रत्येक धागे को आगे बांस की लट्ठियों के माध्यम से कताई किया जाता है, जिन्हें स्थानीय रूप से *थूमरू* कहा जाता है, ये उपकरण उसी सामग्री से बने होते हैं जो गाँव के आसपास उपलब्ध होती है जो कि साधारण, प्राकृतिक और टिकाऊ हो।



चित्र 5 : महिलाएं सूखी कपास से धागा बनाने की प्रक्रिया करती हुई

रंगाई की प्रक्रिया

योरोबा में रंगाई की कला प्रकृति और परंपरा दोनों को दर्शाती है। धागा तैयार करने के बाद, महिलाएँ पास के जंगलों और खेतों में जाती हैं और उन पौधों को इकट्ठा करती हैं जिनका उपयोग पीढ़ियों से रंगाई के लिए किया जाता रहा है। उन्हें पता होता है कि कौन से जड़, पत्ते और छाल सबसे अच्छे रंग देते हैं और उन्हें पर्यावरण को नुकसान पहुँचाए बिना कैसे इकट्ठा किया जाए। सबसे सामान्य रूप से उपयोग किए जाने वाले कुछ पौधे हैं *म्यूजाकू यी (रुबिया सिकीमेंसिस), बेशो कु, लोतुप्री* (*इंडिगोफेरा टिन्क्टोरिया*), *लॉचिलोमो (बडलेजा कॉर्डाटा)* एवं *त्सुन्ही* प्रत्येक पौधा अलग–अलग रंग देता है, जैसे की *म्यूजाकू यी* गहरे लाल और भूरे रंग प्रदान करता है, *लोतुप्री* हल्के पीले रंग देता है, और *त्सुन्ही* हल्के हरे और नीले रंग प्रदान करता है। ये प्राकृतिक रंग मिलकर एक सुंदर पृथ्वी–सम्बंधित रंगों की श्रृंखला बनाते हैं जो नागालैंड की पहाड़ियों, जंगलों और आकाश को प्रतिबिंबित करती है।



चित्र 6 : रंगाई की प्रक्रिया

रंगाई की प्रक्रिया धीमी और सावधानीपूर्वक होती है। महिलाएँ पौधों के अर्क को बड़े मिट्टी के बर्तनों में उबालती हैं, उनके हर कदम सटीक और लयबद्ध होता है। धागे को धीरे–धीरे उबलते रंगों में डुबाया जाता है, जिससे प्राकृतिक रंगद्रव्य उसमें समा जाते हैं और प्रत्येक धागे में जीवन आ जाता है। यहाँ कोई रासायनिक पदार्थ नहीं, कोई कृत्रिम रंग नहीं सिर्फ प्रकृति और मानवीय स्पर्श के बीच सामंजस्य है। जब रंगा हुआ धागा खुले आकाश के नीचे सुखता है, तो ऐसा लगता है जैसे यह उस परिदृश्य की गूँज है जहाँ से यह आया था। प्रत्येक रंग पृथ्वी, मौसम और उन लोगों की कहानी बताती है जिन्होंने पीढ़ियों से अपने पर्यावरण के साथ संतुलन में जीवन जिया है। इस पारंपरिक रंगाई प्रथा के माध्यम से, योरोबा की महिलाएँ केवल अपने वस्त्रों को रंग नहीं देतीं, बल्कि उस जीवन शैली को भी संरक्षित करती हैं जो सततता, शिल्पकला और प्रकृति के प्रति गहरे सम्बन्ध का सम्मान करती है।

रंगाई में उपयोग होने वाले पौधे :

➢ स्थानीय नाम – *लोतुप्री;*
वैज्ञानिक नाम : इंडिगो
रंगाई का मौसम– जनवरी और फरवरी ;

- इंडिगो के पत्तों को पीसकर उबाला जाता है, उसके बाद इसे एक दिन के लिए छोड़ दिया जाता है और फिर उपयोग के लिए निकाला जाता है।



चित्र 7 : इंडिगो *(लोतुप्री)* एवं नील रंग आधारित सूत

➢ स्थानीय नाम – *त्सुन्हायी;*
वैज्ञानिक नाम – *रूबिया सिकीमेंसिस*

- इस पौधे की कटाई किसी भी मौसम में की जा सकती है। इस पौधे से प्राप्त रंग लाल, नारंगी और गुलाबी होते हैं, जो पौधे की परिपक्वता पर निर्भर करते हैं और यह मुख्यतः पर्वतीय क्षेत्रों में पाया जाता है। इसका उपयोग जड़ों की परिपक्वता के आधार पर किया जाता है।



चित्र 8 : *सिकीमेंसिस रूबिया* एवं *क्विंस*

➢ स्थानीय नाम – *लॉचिलोमो* ;
वैज्ञानिक नाम – *बडलेजस कॉर्डाटा*
यह रंग *बडलेजा कॉर्डाटा* के फूल से निकाला जाता है, जिसकी कटाई मुख्य रूप से फरवरी और मार्च में की जाती है। इस फूल की कटाई साल में केवल एक बार की जा सकती है और इसका रंग पीला होता है।



चित्र 9 : बुड्लेजा कॉर्डाटा के फूल तथा फूल से बनाये रंग का सूत/धागा

धागा संसाधन और बुनाई में स्वदेशी तकनीकें

धागे की मजबूती और टिकाऊपन को बढ़ाने के लिए, इसे स्थानीय रूप से उपलब्ध मक्का से बने प्राकृतिक स्टार्च से संसाधित किया जाता है। यह स्टार्चिंग प्रक्रिया न केवल धागे को मजबूत करती है बल्कि इसे हल्का चमक भी देती है, जिससे यह मजबूत और सुरुचिपूर्ण वस्त्र बुनने के लिए उपयुक्त हो जाता है। स्टार्चिंग के बाद, धागे को फिर से धूप में सुखाया जाता है और इसे सावधानीपूर्वक गुच्छों में लपेटकर करघे के लिए तैयार किया जाता है।

मुलायम रेशों को फिर पारंपरिक कताई चकरी *(फ्रोस)* का उपयोग करके संसाधित किया जाता है, जो रेशों को नरमी से संरेखित करती है, इसके बाद इन्हें पतली बांस की लट्टियों *थूमरू* की सहायता से धागे में काता जाता है। कताई की लयबद्ध गति कच्चे रेशों को महीन, समान धागों में बदल देती है, प्रत्येक फंदा स्वदेशी शिल्पकला की आत्मा को समेटे हुए होता है। अंततः, कुशल बुनकर तैयार धागे को सुंदर पारंपरिक परिधानों जैसे शॉल और मेखेला में बदल देते हैं, प्रत्येक टुकड़ा जटिल रूपांकनों और रूपांकनों के साथ बुना होता है, जिनमें गहरी सांस्कृतिक प्रतीकात्मकता निहित होती है। ये वस्त्र केवल पोशाक नहीं हैं, ये समुदाय की पहचान, कला और विरासत का प्रतीक हैं, जो प्रकृति के साथ सामंजस्य में निहित एक कालातीत शिल्पकला को संरक्षित करते हैं।

कॉटन फॉरेस्ट से वस्त्र तक : योरोबा स्वयं सहायता समूह (एसएचजी), फेक, नागालैंड की कहानी

यह यात्रा चुनौतियों के बिना नहीं रही, फिर भी योरोबा गाँव की महिलाएँ असाधारण शक्ति और संकल्प के साथ लगातार प्रयासरत हैं। उनका शिल्प पूरी तरह से हाथ के काम पर निर्भर करता है, जिसमें लंबे घंटे, सटीकता और धैर्य आवश्यक होते हैं। आधुनिक उपकरणों, बाजारों और संस्थागत समर्थन की सीमित पहुँच ने अक्सर उनकी परीक्षा ली, लेकिन उनके पूर्वजों के शिल्प के प्रति अडिग समर्पण ने योरोबा के करघों को जीवित रखा है। सहयोग और आपसी समर्थन के माध्यम से, उन्होंने कठिनाइयों को सामूहिक विकास के अवसर में बदल दिया है, एक आत्मनिर्भर समुदाय का पोषण किया है जो आर्थिक और सांस्कृतिक सततता दोनों को बनाए रखता है। योरोबा का कॉटन फॉरेस्ट मॉडल इस बात का सशक्त उदाहरण है कि कैसे पारंपरिक ज्ञान, पारिस्थितिक सामंजस्य, और समुदाय–संचालित सृजानात्मक एक सतत आजीविका प्रणाली बना सकते हैं। जो प्रारंभ में स्थायी कपास की खेती का पूर्वजों का अभ्यास था, अब यह पूरी मूल्य श्रृंखला में विकसित हो गया है। कपास की खेती और प्राकृतिक रंग अर्क से लेकर कताई, बुनाई और वस्त्र उत्पादन तक, पूरी तरह गाँव के भीतर प्रबंधित किया जाता है। यह मॉडल यह दर्शाता है कि सामूहिक इच्छा और विरासत के सम्मान के साथ, एक घटते हुए शिल्प को भी पहचान और आय के जीवंत स्रोत में पुनर्जीवित किया जा सकता है। उत्तर पूर्वी क्षेत्रों जैसे स्थानों में, जहाँ बुनाई संस्कृति में गहराई से निहित है, कॉटन फॉरेस्ट मॉडल स्थानीय वस्त्र अर्थव्यवस्थाओं को मजबूत करने का एक व्यावहारिक और प्रेरक मार्ग प्रस्तुत करता है। अनुकूल कृषि–जलवायु परिस्थितियों और कम उपयोग किए गए भूमि का उपयोग करके, कॉटन फॉरेस्ट शिल्पकारों के लिए कच्चे माल की कमी को पूरा करने में मदद कर सकते हैं, साथ ही पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक सशक्तिकरण को बढ़ावा देते हैं। संस्थागत समर्थन और आधुनिक मूल्य संवर्धन तकनीकों के साथ, इस दृष्टिकोण को अन्य बुनाई समुदायों में भी विस्तारित किया जा सकता है, जिससे स्वदेशी प्रथाओं में निहित लचीली आपूर्ति श्रृंखलाएँ बन सकती हैं।



चित्र 10 : कॉटन फॉरेस्ट से अंतिम उत्पाद तक

अंततः कॉटन फॉरेस्ट मॉडल यह प्रदर्शित करता है कि सतत फाइबर उत्पादन, सांस्कृतिक संरक्षण और ग्रामीण विकास को सहजता से एक साथ बुना जा सकता है, एक ऐसा समृद्ध प्रणाली तैयार करता है जो परंपरा का सम्मान करता है, समुदायों का समर्थन करता है, और आने वाली पीढ़ियों के लिए पर्यावरण का पोषण करता है।

13

उत्तरी भारत में नरमा-कपास की अगली फसल में गुलाबी सुण्डी के प्रकोप को कम करने के लिए लकड़ियों का प्रबन्धन

सतपाल सिंह (वरिष्ठ तकनीकी सहायक), ऋषि कुमार (प्रधान वैज्ञानिक),
अमरप्रीत सिंह (वरिष्ठ वैज्ञानिक), सुभाष चन्द्र (वैज्ञानिक), सज्जन कुमार पूनियां (वाय पी I),
राहुल कुमार (वाय पी I), अवनीन्द्र सिंह (वाय पी II), महेन्द्र सिंह (स्काउट)
भा.कृ.अ.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, सिरसा (हरियाणा)

भारत वर्ष में नरमा–कपास (*गोसीपियम हिर्सुटम व गोसीपियम आरबोरियम*) एक महत्वपूर्ण नगदी फसल है। विश्व में कपास को आमतौर पर सफेद सोना के नाम से जाना जाता है। भारत वर्ष में, कपास की खेती तीन अलग–अलग कृषि पारिस्थितिक क्षेत्रों जैसे– उत्तरी, मध्य व दक्षिणी क्षेत्र में सिंचित व वर्षा आधारित की जाती है। उत्तरी क्षेत्र में पंजाब, हरियाणा व राजस्थान और मध्य क्षेत्र में गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा तथा दक्षिणी क्षेत्र में आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, तमिलनाडु व कर्नाटक राज्य शामिल है।

उत्तर क्षेत्र के हरियाणा, पंजाब, राजस्थान, राज्य में कपास खरीफ ऋतु की मुख्य फसल है। उत्तर भारत के हरियाणा, पंजाब व राजस्थान में वर्ष 2024–25 के अंदर अनुमानित 13.05 लाख हेक्टेयर में कपास की बुवाई की गयी और जिससे अनुमानित कुल रूई का उत्पादन 33.61 लाख गाँठ (170 कि.ग्रा./गाँठ) हुआ।

उत्तरी कपास उत्पादक प्रमुख राज्यों में कपास की फसल में मुख्यरूप से नुकसान पहुंचाने वाले रस चूसक कीटों में आमतौर पर सफेद मक्खी, हरा तेला, थ्रिप्स (चूरड़ा/भूरी जूँ) और कभी–कभी मिलीबग, दीमक, रेड काटन बग व डस्की काटन बग का प्रकोप देखा जाता है। देसी व अमेरिकन कपास में चार प्रकार की बोल्स की सुण्डीयां जैसे– अमेरिकन सुण्डी, चितीदार सुण्डी, गुलाबी सुण्डी और तम्बाकु सुण्डी का प्रकोप देखा जाता है। जबकि वर्ष 2002 बी.जी.–I व 2006 बी.जी.–II



चित्र 1 : स्वस्थ्य कपास

अमेरिकन कपास आने के बाद किसी प्रकार की सुण्डी का प्रकोप नही देखा गया। परन्तु वर्ष 2014 में दक्षिण I व मध्य भारत के कुछ उत्पादक क्षेत्रों में बी.जी.–II अमेरिकन कपास में गुलाबी सुण्डी का प्रकोप देखा गया।

उत्तरी भारत में पहली बार वर्ष 2018 में दक्षिण व मध्य भारत से खली बनाने के लिए खरीदे गये बिनौले के साथ कुछ बी.जी.–II अमेरिकन कपास के प्रति प्रतिरोधी/सहनशील सुण्डियों के आने से गुलाबी सुण्डी का प्रकोप हरियाणा के जींद जिले के आस–पास देखने को मिला। जो साल दर साल फैलता गया और वर्ष 2023 तक पूरे उत्तर भारत के हरियाणा, पंजाब, राजस्थान राज्य में फैल

गया। उत्तर भारत में कपास की फसल कटने के बाद गुलाबी सुण्डी गैर ऋतु में कपास की लकड़ियों के ढेर, कपास या बिनौले के ढेर में अपना जीवन सुसुप्तावस्था (डायपॉज) के रूप में व्यतीत करती है। अतः इन गैर ऋतु में जीवित रहने के स्त्रोतों का उचित प्रबंधन करके आगामी फसल में इसके प्रकोप को कम किया जा सकता है। ताकि फसल में नुकसान को कम कर उच्च पैदावार ली जा सकें।

गैर ऋतु में जीवित रहने के स्त्रोत :
(क) कपास की लकड़ियों के ढेर में अधखुले बोल्स, (ख) कपास के ढेर, (ग) बिनौले के ढेर बोल्स

गुलाबी सुण्डी का जीवन चक्र : गुलाबी सुण्डी (*पेक्टिनोफोरा गोसीपीयेला*, कुल–गलेचिडी), एक एकल भक्षी कीट है। यह अपना एक जीवन चक्र अनुकूल वातावरण में लगभग 35–45 दिन में पूरा कर लेता है। गुलाबी सुण्डी एक वर्ष में 5–7 पीढ़ियां पूरी कर लेती है। उत्तरी भारत में आमतौर पर लगभग 5 पीढ़ियां ही पूरी कर पाती है। क्योंकि दिसम्बर माह में कम तापमान व दिन की अवधि छोटी होने के कारण गुलाबी सुण्डी का लार्वा डायपॉज यानि सुसुप्तावस्था में चला जाता है। विपरीत मौसम के कारण गुलाबी सुण्डी का लार्वा लगभग 56–120 दिन तक सुसुप्तावस्था में जीवित रह सकता है। जो कि अप्रैल–मई माह में अनुकूल मौसम मिलते ही अपना जीवन चक्र पुनः शुरू कर लेता है। उत्तरी भारत में यही वर्ष की पहली पीढ़ी कहलाती है। जो कपास की फसल में नुकसान शुरू करती है।

डायपॉज यानि सुसुप्तावस्था : आथ्रोपोड्स कीटों में कुछ कीटों के जीवन विकास के दौरान एक विशेष अवस्था देखनें को मिलती है, जिसे डायपॉज यानि सुसुप्तावस्था कहते है। इस अवस्था के दौरान प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों जैसे– न्यूनतम या अधिकतम तापमान, भोजन की कमी, दिन की अवधि का छोटा या बड़ा होना व वातावरण में नमी में उतार–चढ़ाव आदि के कारण कीट अपने जीवन की शारारिक, चयापचय व अन्य क्रियाओं को रोक कर कुछ समय के लिए अस्थायी निष्क्रिय अवस्था में चला जाता है। जैसे ही कीट को अनुकूल वातावरण के संकेत मिलते है यह अपना सामान्य जीवन चक्र पुनः शुरू कर देता है। उत्तरी भारत में आमतौर पर गुलाबी सुण्डी में गैर ऋतु के दौरान यह अवस्था देखी जाती है।

गुलाबी सुण्डी के जीवन चक्र की अवस्थायें :

अण्डा : अण्डे सफेद मोती जैसे चमकीले, अर्द्ध चन्द्राकार, चपटे, अण्डाकार लगभग 0.5 मि.मी. लम्बे, 0.25 मि.मी. चौड़े होते है। गुलाबी सुण्डी की मादा अण्डे आमतौर पर 4–5 के समूह में देती है जबकि कभी कभी एक एक करके भी दे देती है। अण्डे की अवधि 4–5 दिन की होती है।

लार्वा : अण्डे से लार्वा निकलते ही 4–6 घण्टे के अन्दर पोषण शुरू कर देता है। लार्वा कुल चार अवस्थाओं से गुजरता है। इसमें पहली दो अवस्थाओं में लार्वा का रंग सफेद होता है। जबकि तीसरी और चौथी अवस्थाओं में लार्वा का रंग गुलाबी होता है। लार्वा का सिर गहरे भूरे रंग का होता है। लार्वा की अवधि 10–14 दिन की होती है।

प्यूपा : लार्वा चारों अवस्थाओं को पूरा करने के बाद पौधों के अवशेष, रूई, अधखुले बोल्स में प्यूपा में बदल जाता है। पहले प्यूपा हल्के भूरे रंग का व धीरे–धीरे गहरे भूरे रंग में परिवर्तित हो जाता है। आमतौर पर प्यूपा की लम्बाई 6–7 मि.मी. होती है। आकार में गुलाबी सुण्डी की मादा का प्यूपा नर प्यूपा की तुलना में थोड़ा बड़ा दिखाई देता है। प्यूपा की अवधि 09–13 दिन की होती है।

वयस्क/प्रौढ : गुलाबी सुण्डी का वयस्क धूसर–भूरे रंग का होता है। यह रात के समय में ज्यादा सक्रिय रहता है। गुलाबी सुण्डी की व्यस्क मादा कपास के पौधे पर फलीय भागों के आस–पास अण्डे देती है। गुलाबी सुण्डी की मादा का उदर आकार में नर की तुलना में थोड़ा बड़ा व मोटा दिखाई देता है। व्यस्क की अवधि 15–20 दिन की होती है।

गैर ऋतु में जीवित रहने के स्त्रोत यानि लकड़ियों का प्रबन्धन

- **समय पर फसल की कटाई :** नरमें–कपास की फसल को 180 दिनों से ज्यादा समय तक खेत में खड़ा ना रखें। क्योंकि अन्तिम समय में आये फूल, कलियों से बने अधखुले बोल्स में गुलाबी सुण्डी के लार्वा गैर ऋतु में जीवित रहते है। अतः समय पर फसल की कटाई करने से फूल, कलियां व बोल्स में उपस्थित गुलाबी सुण्डी के लार्वा को परभक्षी कीटों द्वारा व अन्य कारणों से नष्ट हो जायेंगें।

- **खेत में भेड़-बकरियों आदि जानवरों को चराना :** नरमें–कपास की अन्तिम चुनाई के बाद में खेत में भेड़–बकरियों आदि जानवरों को चरने दें। ताकि अपरिपक्व व अधखूले बोल्स में उपस्थित गुलाबी सुण्डी के लार्वा को भेड़–बकरियाँ आदि जानवर भोजन के रूप में निगल जायेंगे। फलस्वरूप गुलाबी सुण्डी के लार्वा की संख्या काफी कम हो जायेगी।



चित्र 2 : जानवरों का चरना

- **लकड़ियों को जमीन में मिलाना :**



चित्र 3 : डंठलों को जमीन में मिलाना

नरमें–कपास की अन्तिम चुनाई के बाद में अगर संभव हो तो लकड़ियों को श्रेडर या रोटावेटर की सहायता से जमीन में मिलाना चाहिए। जिससे गुलाबी सुण्डी के लार्वा जमीन में मिलकर अपने आप नष्ट हो जायेगी।

- **लकड़ियों को कटाई उपरान्त खेत में सूखाना :** नरमें–कपास की लकड़ियों को काटकर कुछ समय के लिए खेत में छोटी–छोटी ढेरियों के रूप में रखना चाहिए। ताकि इनमें उपस्थित गुलाबी सुण्डी के लार्वा को परभक्षी कीटों के द्वारा नष्ट कर दिया जाए।

- **लकड़ियों को खेत की बजाए गांव में भण्डारित करना :** नरमें–कपास की लकड़ियों को किसानों को अपने घरों में ईधन के रूप में काम लेने के लिए लकड़ियों को काटकर खेत से दूर गांव में लम्बवत भण्डारित करें। जिससे आगामी फसल में गुलाबी सुण्डी के पतंगें निकलकर अण्डें नही दें पायेंगें।

- **लकड़ियों को लम्बवत यानि सीधा खड़ा करना :** नरमें–कपास की लकड़ियों को हमेशा बड़ा ढेर बनाने की बजाए लम्बवत यानि सीधा खड़ा करना चाहिए। लम्बवत रखी लकड़ियों में अपरिपक्व व अधखूले बोल्स में विराजमान गुलाबी सुण्डी के ज्यादातर लार्वा को पशु–पक्षियों द्वारा गैर ऋतु में ही नष्ट कर दिया जायेगा। इसके



चित्र 4 : लम्बवत क्रम में रखी गई लकड़ियाँ

आलावा गैर ऋतु में जीवित लार्वा अनुकूल वातावरण के संकेत जल्दी मिलने से गुलाबी सुण्डी के लार्वा मार्च माह में ही डायपॉज यानि सुसुप्तावस्था तोड़कर पतंगें बाहर निकल आयेंगें। सुसुप्तावस्था तोड़कर बाहर निकले पतंगें उपयुक्त फसल ना मिलने के कारण अण्डें नही दें पायेंगें और गुलाबी सुण्डी का जीवन–चक्र तोड़ने में मदद मिलेगी। जिससे आम भाषा में आत्मघाती अवतरण भी कहतें है।

- **लकड़ियों के ढेर को ढक कर रखना :** अगर किसी कारणवश लकड़ियों का ढेर खेत में ही लगाया हुआ है। तो उसे मार्च माह में मच्छरदानी या किसी प्लास्टिक की चद्दर से अवश्य ढक दें। ताकि सुसुप्तावस्था तोड़कर बाहर निकले पतंगें बाहर न आ पाये और आगामी फसल में अण्डें देकर अपना जीवन चक्र शुरू ना कर पायें।



चित्र 5 : ढके हुए लकड़ियों के ढेर

- **भण्डारित लकड़ियों को झाड़ना :** लकड़ियों को भण्डारित करने से पहले कुछ समय के लिए खेत में सुखाकर अच्छे से झाड़कर ही भण्डारित करना चाहिए। मार्च के माह में खेत में भण्डारित लकड़ियों को एक बार अच्छे से झाड़ लेना चाहिए। झाड़ने के बाद निकले कचरे व अधखूले बोल्स को गड्ढा करके जमीन में दबा दें और लकड़ियों को अलग भण्डारित करें। ऐसा करने से अधखुले बोल्स में उपस्थित गुलाबी सुण्डी के लार्वा अलग हो जायेंगें और मिट्टी में दबाने के कारण सुसुप्तावस्था तोड़कर बाहर निकल में असक्षम हो जायेंगें। संभव हो तो झाड़ने के बाद लकड़ियों को लम्बवत यानि सीधा खड़ा करें।



चित्र 6 : लकड़ियों को सूखाना

- **फेरोमोन ट्रेप से गैर ऋतु में निगरानी :** नरमें–कपास की फसल की अच्छी पैदावार लेने के लिये गैर ऋतु से ही गुलाबी सुण्डी की निगरानी बहुत जरूरी है। अतः गैर ऋतु में लकड़ियों के ढेर के पास एक–दो फेरोमोन ट्रेप लगाकर निगरानी अवश्य करें। ताकि किसानों को गुलाबी सुण्डी की सुसुप्तावस्था टूटने व जनसंख्या का समय रहते अंदाजा आ जाए। ऐसा करने से किसान को गैर ऋतु में जीवित रहने के स्त्रोत की महत्वता का पता चलेगा और वह समय रहते सभी गैर ऋतु में जीवित रहने के स्त्रोतों का प्रबंधन कर पायेगा।

नरमें–कपास फसल की अच्छी पैदावार लेने के लिए सबसे पहले गुलाबी सुण्डी के जीवन चक्र को समझना बहुत ही जरूरी है। इसके बाद गैर ऋतु में जीवित रहने के स्त्रोतों की पहचान कर उनका समय पर प्रबंधन बहुत ही आवश्यक है। विभिन्न अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि गैर ऋतु में जीवित रहने के स्त्रोतों के उचित रूप से प्रबंधन करने से फसल में 30–60 प्रतिशत तक गुलाबी सुण्डी का प्रकोप कम किया जा सकता है। अतः समय पर गैर ऋतु में जीवित रहने के स्त्रोतों का उचित प्रबंधन कर, नरमें–कपास की अच्छी व गुणवत्तापूर्ण पैदावार ले सकते है।

14

गुजरात में बीटी कपास में रस चूसक कीटों का प्रतिरोधकता प्रबंधन

पटेल आर. डी.(मददनीश संशोधन वैज्ञानिक),
उघरेजा अमिषा आर. (वाय पी 1), पिपरीया प्रतीक्षा आर.,
देसाई एच. आर. (सह संशोधन वैज्ञानिक),
चौहान एम. एम. (सीनियर रिसर्च फेलो), भंडेरी जी. आर. (मददनीश संशोधन वैज्ञानिक), एवं
पटेल एम. सी. (संशोधन वैज्ञानिक –कपास)
मुख्य कपास संशोधन केंद्र, नवसारी कृषि यूनिवर्सिटी, अठवाँ फार्म, सूरत–395007 (गुजरात)

गुजरात कपास के क्षेत्र में अग्रणी है। गुजरात में कपास के 85 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र में बीटी कपास का, जबकि 15 प्रतिशत क्षेत्र में देशी और संकर किस्मों का रोपण होता है। बीटी कपास में विशेष रूप से रसचूसने वाले कीट जैसे कि जैसिड्स (हरा तेला), एफिड्स (चेपा), सफेद मक्खी, मिलीबग और थ्रिप्स (चूरड़ा) का प्रकोप रहता है। फसल संरक्षण प्रबंधन दृष्टिकोण की पूरी जानकारी के लिए कपास की फसल में आने वाले मुख्य रस चूसने वाले कीटों की पहचान, नुकसान और एकीकृत कीट नियंत्रण के घटकों की जानकारी यहाँ प्रस्तुत है।

रस चूसक प्रकार के कीट

हरा तेला (जैसिड्स/फुदका) : पहचान : वयस्क कीट हल्के हरे रंग के, वेज आकार के और बहुत फुर्तीले होते हैं जो पत्तों पर तिरछी दिशा में तेजी से चलते हैं। इनके निम्फ नाजुक, पंखहीन और हल्के पीले रंग के होते हैं।

नुकसान : निम्फ जैसिड्स का और वयस्क कीट दोनों ही पत्तों की निचली सतह से रस चूसते हैं जिससे पत्तों के किनारे पीले पड़ जाते हैं। जैसे–जैसे प्रकोप बढ़ता है, पत्ते पीले होकर नीचे की ओर मुड़कर सिकुड़ जाते हैं और अंत में तांबे (ताम्र) जैसे रंग के होकर झड़ जाते हैं। जिस कारण पौधे की वृद्धि रुक जाती है।

चेपा (एफिड्स) : पहचान : यह कीट लंबे–गोलाकार आकार का, पीलापन लिए हुए या काले रंग का, पंखहीन और पंख वाला होता है। वयस्क कीट के पिछले भाग में दो नली जैसी संरचनाएं होती हैं।

नुकसान : चेपा पत्तों के नीचे रहकर रस चूसता है जिससे पत्ते सिकुड़ जाते हैं। कीट के शरीर से शहद जैसे चिपचिपे पदार्थ के स्राव के कारण काली फफूंद का प्रकोप होता है, जिससे पत्ते और पौधे काले पड़ जाते हैं और पौधों का विकास रुक जाता है।

थ्रिप्स (चूरड़ा) : पहचान : यह कीट बारीक, हल्का पीला, धुरी (स्पिन्डल) आकार का और 1मिमी से छोटा होता है। इसके निम्फ नग्न आँखों से नहीं देखे जा सकते।

नुकसान : निम्फ और वयस्क पत्तों पर खुरचकर रस चूसते हैं जिससे पत्तों की निचली सतह चमकदार दिखने लगती है। पहले पत्तों के किनारे पीले पड़ते हैं; अधिक नुकसान से पत्ते पीले होकर सिकुड़ जाते हैं और गिर जाते हैं।

सफेद मक्खी : पहचान : यह पत्तों की निचली सतह पर पायी जाती है। वयस्क 1 मिमी लंबा होता है। इसके पंख दूधिया सफेद, शरीर पीलापन लिए हुए और निम्फ हल्के पीले, अंडाकार पैमाने स्केलस जैसे होते हैं। वे एक ही स्थान पर चिपके रहते हैं।

नुकसान : पत्तों के नीचे से लगातार रस चूसने से पत्तों पर पीले धब्बे पड़ते हैं। अधिक नुकसान होने पर धब्बे बड़े हो जाते हैं और पत्ते लाल होकर खुरदरे हो जाते हैं और समय से पहले गिर जाते हैं।

लाल मकड़ी (रेड स्पाइडर माइट) : पहचान : यह कीट नहीं बल्कि अष्टपदी (आठ पैरों वाला) मकड़ी वर्ग का जीव है। वयस्क लाल रंग के, छोटे आकार के और गोलाकार होते हैं जो पत्तों के नीचे पाए जाते हैं। अधिक प्रकोप के समय पत्तों के नीचे रूई जैसे जाले दिखाई देते हैं।

नुकसान : पत्तों के नीचे से माइट द्वारा रस चूसने से पत्ते फीके और पीले हो जाते हैं। अधिक प्रकोप के समय पत्ते और छोटे बॉल्स गिर जाते हैं। इसके प्रकोप को 'पीतळीयां' के नाम से भी जाना जाता है।

कढ़ी कीट (मिलीबग) पहचान : निम्फ और वयस्क दोनों अंडाकार, कोमल शरीर वाले, मुख्य रूप से हल्के पीले से गुलाबी रंग के और 3–4 मिमी लंबे होते हैं। शरीर पर सफेद मोमी आवरण होता है। शरीर पर मोम के तंतु होते हैं, शरीर के पिछले भाग पर तंतु की लंबाई शरीर के चौथे भाग के बराबर होती है। शरीर पर दो गहरे भूरे रंग की खड़ी पट्टियाँ भी पायी जाती हैं।

नुकसान : कपास के हर भाग जैसे कोमल पत्ते, डंठल, कलियाँ, फूल, बॉल्स, तना आदि पर मिलीबग स्थिर होकर लगातार रस चूसती है। शुरुआत में प्रकोप कुछ पौधों की कोमल टहनियों या पत्तों पर छिटपुट दिखाई देता है। इसके शरीर से शहद जैसे चिपचिपे पदार्थ के स्राव के कारण काली फफूंद विकसित होती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है और पौधों का विकास धीमा पड़ता है। इस पदार्थ के कारण चींटियाँ आकर्षित होती हैं जो मिलीबग को फैलाने में मदद करती हैं। कलियों का विकास नहीं होता, बॉल्स छोटे रह जाते हैं या गिर जाते हैं, और रूई की गुणवत्ता प्रभावित होती है। भारी प्रकोप में बॉल्स सहित पूरा पौधा सूखने लगता है।

कपास के रस चूसक कीटों का एकीकृत प्रबंधन

- गुजरात राज्य में, कपास की रोंयेदार किस्म जीआईएसवी–218 (जीएन.कॉट–22) हरे तेला के प्रति प्रतिरोधी साबित हुई है। प्रभावि क्षेत्र के उपयुक्त प्रमुख रस चूसक कीटों के प्रति प्रतिरोधी किस्मों का चयन करना, रस चूसक कीटों के प्रबंधन के लिए अत्यंत आवश्यक है।
- गर्मियों में गहरी जुताई करने से जमीन की दरारों में भरे हुए मिलीबग का नियंत्रण होता है।
- बीज को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्लू.एस. 7.5 मिली/किलो बीज अथवा थायोमीथोक्साम 70 डब्लू.एस. 2.8 मिली/किलो बीज के अनुसार उपचारित करके बुवाई करनी चाहिए जिससे फसल की शुरुआती अवस्था में इन कीटों से सुरक्षा प्राप्त की जा सके ।
- मेढ़ (बॉर्डर) पर उगने वाले खरपतवारों, विशेष रूप से स्मॉल बर डॉक/कांसकी/जंगली भिंडी/कांग्रेस घास आदि प्रकार के खरपतवारों के ग्रसित पौधों को उखाड़कर नष्ट करने से इस कीट के प्रकोप को फैलने से रोका जा सकता है।
- अवशेषों एवं खरपतवार का हर माह उचित रूप से निदान करे ।
- चेपा (एफिड्स) तथा हरा तेला (जैसिड्स) के जैविक नियंत्रण के लिए परभक्षी क्रायसोपा के अंडे अथवा इल्ली को प्रति हेक्टेयर 10,000 की संख्या में दो बार छोड़ना चाहिए।

- परभक्षी जीवों की आबादी को सुरक्षित रूप से बनाए रखने के लिए कपास के साथ लोबिया की अंतरफसल का प्रयोग करें।
- नीम के बीज का 5% का घोल अथवा एजाडाइरेक्टिन जैसे गैर–रासायनिक तत्व वाले 1500, 3000 या 10000 पीपीएम का क्रमशः 5 लीटर, 2.5 लीटर अथवा 750 मिली प्रति हेक्टेयर उपयोग करने से भी इन कीटों का प्रभावी नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।
- रसचूसने वाले प्रकार के कीट जब अपनी आर्थिक सीमा स्तर (ईटीएल) पार करें, तब एसिटामीप्रीड 20 एस.पी. 2 ग्राम, इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 4 मिली, थायोमीथोक्साम 25 डब्लू.जी. 4 ग्राम, फ्लोनीकामीड 50 डब्लू.जी. 3 ग्राम, डायफेन्थीयुरोन 50 डब्लू.पी. 10 ग्राम में से किसी भी एक कीटनाशक को 10 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से इन कीटों का प्रभावी नियंत्रण मिलता है। ड्रोन या पारंपरिक छिड़काव के माध्यम से छिड़के गए फ्लोनीकामीड 50 डब्लू.जी. और डायफेन्थीयुरोन 50 डब्लू.पी. से लम्बे समय के लिए प्रभावी नियंत्रण मिलता है एवं ड्रोन या पारंपरिक विधि से, कीटनाशक की निर्धारित मात्रा से 10% और 25% अधिक मात्रा छिड़कने पर भी पौधों पर किसी प्रकार के विषाक्त प्रभाव नहीं होता।
- सफेद मक्खी के लिए पीले चिपचिपे जाल (येलो स्टीकी ट्रेप) का निगरानी के लिए 10 जाल प्रति हेक्टेयर और नियंत्रण के लिए 100 जाल प्रति हेक्टेयर उपयोग करना चाहिए।
- सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए एजाडाइरेक्टिन 1500 पीपीएम 50 मिली 10 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें अथवा बुप्रोफेजिन 25 एस.सी. 20 मिली, फ्लोनीकामिड 50 डब्लू.जी. 3 ग्राम, एसीफेट 75 एस.पी. 15 ग्राम 10 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।
- रसचूसने वाले प्रकार के कीटों के नियंत्रण के लिए सूक्ष्म जैविक नियंत्रक जैसे कि वर्टीसीलियम लेकानी अथवा बुवेरिया बसियाना 50 ग्राम 10 लीटर पानी में फसल की शुरुआती अवस्था में, जब वातावरण में नमी हो तब छिड़काव करना चाहिए।
- मिलीबग का अधिक प्रकोप होने पर 15 दिनों के अंतराल पर क्लोरपायरीफॉस 20 ईसी 25 मिली अथवा एसिटामीप्रीड 20 एसपी 2 ग्राम अथवा प्रोफेनोफॉस 50 ईसी 20 मिली 10 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

अन्य रसचूसक प्रकार के कीट :

रेड कॉटन बग : पहचान : पूरे वर्ष के दौरान इसकी आबादी कपास में देखी जाती है। मुख्य रूप से रेड कॉटन बग का प्रकोप अक्टूबर से दिसंबर महीनों में अधिक देखा जाता है। वयस्क और निम्फ लाल रंग के, सफेद पट्टियों वाले और लंबे शरीर वाले होते हैं। रेड कॉटन बग की मादा अंडे जमीन में देती हैं। कपास के अतिरिक्त यह कीट जंगली भिंडी, गुड़हल पर भी जीवन निर्वाह करता है।

नुकसान : निम्फ और वयस्क पत्तों और बॉल्स से रस चूसकर नुकसान करते हैं। इस कीट के मल के कारण रूई के रेशे लाल रंग के और सड़े हुए पाए गए हैं ।

डस्की कॉटन बग : पहचान : वयस्क कीट भूरे रंग के और धुंधले सफेद पंखों वाले होते हैं, जिनके अग्र पंखों पर काले धब्बे और गहरे लाल पैर होते हैं। मालवेसी और सोलेनेसी कुल की फसलें पर भी यह कीट अपना जीवन यापन करता है।

नुकसान : वयस्क और निम्फ फटे हुए बॉल्स में अविकसित बीजों को नुकसान पहुँचाते हैं और जिनिंग के दौरान इस कीट की उपस्थिति से रूई की गुणवत्ता बिगड़ती है ।

रेड कॉटन बग और डस्की कॉटन बग का नियंत्रण :

- गर्मियों में गहरी जुताई करने से जमीन में सुप्त अवस्था में रहे प्यूपा का नाश होता है।
- मेढ़ों पर उगे हुए जंगली गुड़हल या जंगली भिंडी जैसे खरपतवारों का नाश करना चाहिए।
- बॉल्स परिपक्व होते ही तुरंत कपास की चुनाई कर लेनी चाहिए।
- मिट्टी के तेल (केरोसिन) वाले पानी में अर्ध–खुले या पूरे खुले बॉल्स को झटककर बग्स को इकट्ठा कर नष्ट करना चाहिए अथवा पौधों को हिलाकर और दोनों सिरों से रस्सी पकड़कर कतार में तेजी से चलने से इन बग्स को नीचे गिराकर नष्ट किया जा सकता है।
- फ्लुवालिनेट 25 ईसी 4 मिली 10 लीटर पानी में अथवा उपरोक्त चूसने वाले कीटों के खिलाफ इस्तेमाल होने वाले कीटनाशकों का उपयोग नियंत्रण के लिए किया जा सकता है।

फलों से रस चूसने वाला पतंगा : नींबू वर्ग की फसलें और चीकू, बोर (बेर), अरंडी के साथ–साथ विशेष रूप से उत्तर गुजरात में कपास में नुकसान पहुँचाते हुए देखी जाती है।

नुकसान : वयस्क पतंगा सुई जैसे मजबूत मुखांगों को चुभोकर फल से रस चूसता है और जिस कारण बॉल्स में छेद होने से वे सड़ जाते हैं। छेद के आसपास का हिस्सा सड़ने से बॉल्स गिर जाते हैं। इल्ली अवस्था जंगली लताओं पर अपना जीवन व्यतीत करती है ।

नियंत्रण :

- मेढों पर उगे हुए जंगली घास/लताओं की साफ–सफाई रखनी चाहिए।
- गिरे हुए बॉल्स को हाथ से बीनकर नष्ट करना चाहिए।
- पतंगों को आकर्षित कर नष्ट करने के लिए जहरीली प्रलोभिका का उपयोग करना चाहिए (गुड़ : 100 ग्राम, सिरका–6 ग्राम, 25 मिली मैलाथियान दवा को 1 लीटर पानी में मिलाकर बड़ी बरनी में रखें)।
- मैलाथियान दवा को गुड़ के घोल के साथ मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

टी मॉस्किटो बग – यह कपास का नया शत्रु है। **पहचान :** इस कीट के निम्फ आकार में छोटे, पंखहीन और नारंगी रंग के होते हैं। निम्फ लंबे पैरों वाली चींटियों जैसे दिखते हैं। जबकि वयस्क लालिमा लिए हुए भूरे रंग के, 6–8 मिमी लंबे होते हैं। इसका सिर काला, वक्ष लाल, उदर काला और सफेद रंग का होता है। इस कीट के अंडे गोल और सफेद रंग के होते हैं। कपास के अतिरिक्त यह काजू, चाय और अमरूद पर भी अपना जीवन यापन करते है।

नुकसान : इस कीट के निम्फ और वयस्क कपास के पत्ते, कोमल शाखाएं, कपास की कलियाँ और छोटे बॉल्स से रस चूसकर नुकसान पहुँचाते हैं। पत्तों पर नुकसान के कारण पत्ते किनारों से मुड़ जाते हैं और पत्तों की मुख्य शिराओं के आसपास भूरापन लिए हुए काले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। यह कीट कोमल शाखाओं से रस चूसता है, जिससे पौधों का विकास रुक जाता है और धीरे–धीरे सम्पूर्ण पौधा सूख जाती हैं। पौधे के नीचे के हिस्से में रहे बॉल्स से रस चूसने के कारण उन पर उभरे हुए धब्बे (जैसे चेचक के दाग) दिखाई देते हैं। इस कीट द्वारा परिपक्व बॉल्स की चोटी पर नुकसान के कारण कालेपन लिए हुए भूरे रंग के गोलाकार गड्ढे दिखाई देते हैं । यदि ऐसे में वर्षा होती है, तो वर्षा का पानी उन गड्ढों से बॉल्स में प्रवेश करता है, जिससे बॉल्स में फफूंद लगती है और बॉल्स सड़ जाते हैं ।

नियंत्रण :पौधों के क्षतिग्रस्त भाग को तोड़कर नष्ट करना चाहिए। नीम आधारित कीटनाशक एजाडाइरेक्टिन 1500 पीपीएम (0.15 ईसी) 50 मिली अथवा ब्यूवेरिया बासियाना नामक फफूंद का पाउडर 40 ग्राम 10 लीटर पानी में मिलाकर कीट की शुरुआत दिखने पर छिड़काव करना चाहिए। खेत के अंदर छाया न पड़े इसका ध्यान रखना चाहिए क्योंकि यह कीट छाया वाले हिस्से में ज्यादा नुकसान करता है। खेत के अंदर के तथा मेढ़ (बॉर्डर) पर के खरपतवार पौधे जैसे 'स्मार्ट वीड' और 'लेंटाना' का नाश करना चाहिए क्योंकि यह कीट ऐसे खरपतवार के पौधों में छिपा रहता है।

मिरीड बग : पहचान : मिरीड बग मुख्य रूप से तीन अलग–अलग प्रजातियों द्वारा बीटी कपास में नुकसान करता है। निम्फ हल्के हरे रंग के और पंख बादामी रंग के होते हैं। वयस्क कीट बादामी रंग के और आगे का 'टी' आकार का हिस्सा गहरे बादामी रंग का होता है।

कपास के अतिरिक्त यह कीट तुअर, सूरजमुखी, कुसुम, ज्वार, मक्का, बाजरा, अरंडी एवं सन हेम्प को नुकसान पहुँचाता है।

नुकसान : निम्फ और वयस्क कली, फूल और छोटे बॉल्स से मुखांगों के द्वारा रस चूसते हैं।

नियंत्रण :
गिरी हुई फूल–कलियों और बॉल्स को हाथ से बीनकर नष्ट करना चाहिए। कीट जब आर्थिक सीमा स्तर पार करे (5 से 10 वयस्क प्रति पौधा) तब एसिफेट 75 एस.पी. 15 ग्राम अथवा थायाक्लोप्रिड 240 एस.सी. 10 मिली अथवा नीम आधारित कीटनाशक 50 मिली प्रति 10 ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

तालिका 1 : रसचूसक कीटों के नियंत्रण के लिए कीटनाशकों का चयन :

कीटनाशक	कीट लक्ष्य और कीट के विरुद्ध पंजीकरण	10 लीटर पानी में प्रमाण मिली/ग्राम
एजाडाइरेक्टिन 1500 पीपीएम (0.15%)	चेपा, हरा तेला, सफेद मक्खी	50 मिली
एसिफेट 75 एसपी	हरा तेला	15 ग्राम
प्रोफेनोफॉस 50 ईसी	हरा तेला, चेपा, थ्रिप्स(चूरड़ा), सफेद मक्खी	20 मिली
फिप्रोनिल 5 एससी	चेपा, हरा तेला, थ्रिप्स(चूरड़ा), सफेद मक्खी	20 मिली
बायफेनथ्रिन 10 ईसी	सफेद मक्खी	20 मिली
इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल	चेपा, सफेद मक्खी, हरा तेला, थ्रिप्स	4 मिली

	(चूरड़ा),	
एसिटामीप्रीड 20 एसपी	चेपा, हरा तेला, सफेद मक्खी	2 ग्राम
थायोमीथोक्साम 25 डब्लूजी	हरा तेला, चेपा, थ्रिप्स(चूरड़ा), सफेद मक्खी	4 ग्राम
थायाक्लोप्रिड 21.70 एससी	चेपा, हरा तेला, थ्रिप्स(चूरड़ा),	2– 2.5 मिली
डीनोटेफ्युरान 20 एसजी	सफेद मक्खी, चेपा, हरा तेला, थ्रिप्स (चूरड़ा),	2.5 – 3 ग्राम
स्पाइनेटोरम 11.70 एससी	थ्रिप्स(चूरड़ा),	8 मिली
पायरीप्रोक्सीफेन 10 ईसी	सफेद मक्खी	20 मिली
फ्लोनीकामीड 50 डब्लूजी	चेपा, हरा तेला, थ्रिप्स(चूरड़ा), सफेद मक्खी	3 ग्राम
डायफेन्थीयुरोन 50 वेपा	सफेद मक्खी, चेपा, थ्रिप्स(चूरड़ा), हरा तेला	10 – 12 ग्राम
बुप्रोफेजिन 25 ईसी	सफेद मक्खी, चेपा, हरा तेला, चूरड़ा	20 मिली
स्पायरोमेसीफेन 22.9 एससी	सफेद मक्खी, लाल मकड़ी (माइट्स)	10 मिली
फ्लुवालिनेट 25 ईसी	चेपा, हरा तेला, लाल कपास बग	4 मिली
एफीडोपायरोपेन 50 डीसी	सफेद मक्खी, हरा तेला	20 मिली
क्लोथियानीडिन 50 डब्लूडीजी	सफेद मक्खी, हरा तेला	1 मिली
फिप्रोनिल 15% + फ्लोनीकामीड 15% डब्लूडीजी	हरा तेला, थ्रिप्स(चूरड़ा), चेपा, सफेद मक्खी	8 ग्राम
डीनोटेफ्युरान 4%+ एसिफेट 50% एसजी	सफेद मक्खी, हरा तेला, थ्रिप्स (चूरड़ा), चेपा	17.6 ग्राम

पायरीप्रोक्सीफेन 5%+ डीनोटेफ्युरान 25% एसई	थ्रिप्स(चूरड़ा), चेपा, हरा तेला, सफेद मक्खी	20 मिली
बुप्रोफेजिन 15%+ एसिफेट 35% वेपा	हरा तेला, थ्रिप्स(चूरड़ा), सफेद मक्खी	25 ग्राम
पायरीप्रोक्सीफेन 8% +डीनोटेफ्युरान 5%+ डायफेन्थीयुरोन 18% एससी	सफेद मक्खी, हरा तेला, थ्रिप्स (चूरड़ा), चेपा	12 मिली

15

समागम व्यवधान (रुकावट) की तकनीक से कपास में महत्वपूर्ण कीट, गुलाबी इल्ली का नियंत्रण एवं व्यवस्थापन

पटेल आर. डी. (मददनीश संशोधन वैज्ञानिक),
उघरेजा अमिषा आर. (वाय पी 1), देसाई एच. आर. (सह संशोधन वैज्ञानिक),
चौहान एम. एम. (सीनियर रिसर्च फेलो), भंडेरी जी. आर. (मददनीश संशोधन वैज्ञानिक), एवं
पटेल एम. सी. (संशोधन वैज्ञानिक –कपास)
मुख्य कपास संशोधन केंद्र, नवसारी कृषि यूनिवर्सिटी, अठवाँ फार्म, सूरत–395007 (गुजरात)

भारत में मुख्य नकदी फसलों में कपास का प्रमुख स्थान है और यह अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बुवाई की दृष्टि से भारत और चीन में सबसे अधिक क्षेत्र में कपास उगाया जाता है। वर्ष 2024–25 में भारत देश में 114.47 लाख हेक्टेयर क्षेत्र से कुल 294.25 लाख गांठ कपास का उत्पादन दर्ज किया गया है, जो 436.99 किलो रुई/हेक्टेयर की उत्पादकता दर्शाता है। भारत में बुवाई क्षेत्र की दृष्टि से गुजरात देश का दूसरे नंबर का राज्य है, जहाँ लगभग 25 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में कपास की बुवाई होती है। गुजरात में कपास के कुल बुवाई क्षेत्र के लगभग 80% से अधिक क्षेत्र में बीटी कपास की बुवाई की जाती है। पिछले दशक में कपास की उत्पादकता औसतन स्थिर रहने के कई कारकों में से रोग और कीट एक महत्वपूर्ण भूमिका रहीं हैं। बीटी कपास के गुलाबी इल्ली के खिलाफ प्रभावी न रहने के कारण इसका प्रकोप कुछ वर्षों से कपास उगाने वाले राज्यों (उत्तर, मध्य और दक्षिण क्षेत्रों) में व्यापक और लगातार देखा जा रहा है। इस प्रकार, रस चूसने वाले कीटों और गुलाबी इल्ली के एकीकृत और कीटनाशक प्रतिरोध प्रबंधन (आईआरएम) के लिए किसानों को उचित मार्गदर्शन और प्रशिक्षण मिले, इस उद्देश्य से राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय) के अंतर्गत केंद्रीय पुरस्कृत नेटवर्क प्रोजेक्ट आई.सी.ए.आर.–सी.आई.सी.आर., नागपुर द्वारा कपास उगाने वाले देश के 10 राज्यों के 21 जिलों में वर्ष 2020 से कार्यान्वयन किया गया है। इस प्रोजेक्ट के अंतर्गत राष्ट्रीय स्तर पर मुख्य रस चूसने वाले कीटों और गुलाबी इल्ली के प्रबंधन के लिए सटीक सिफारिश की गई कीटनाशक प्रतिरोध प्रबंधन की पद्धति के प्रचार–प्रसार के लिए किसानों को अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन, ई–वॉइस मैसेज मार्गदर्शन और प्रशिक्षण के माध्यम से नुकसान बचाने और वातावरण की उचित देखभाल के लिए कदम सुझाए जाते हैं। गुलाबी इल्ली के एकीकृत प्रबंधन में गुलाबी इल्ली के पतंगों की निगरानी के लिए, पतंगों के सामूहिक विनाश के लिए और पतंगों के समागम में व्यवधान डालकर अगली पीढ़ियों की आबादी नियंत्रित करके नुकसान कम करने के लिए फेरोमोन रसायनों का उपयोग किया जाता है। इस फेरोमोन पद्धति की तकनीक की जानकारी यहाँ प्रस्तुत है।

फेरोमोन : सेक्स फेरोमोन कीट की किसी एक जाति की मादा द्वारा उसी जाति के नर को समागम के लिए आकर्षित करने के उद्देश्य से उत्पन्न किए जाने वाले प्राकृतिक जैविक रसायन हैं। इस प्रकार कीट की किसी एक जाति की मादा द्वारा उत्पन्न किया जाने वाला सेक्स फेरोमोन केवल उसी जाति के नर कीटों को आकर्षित करता है। मादा गुलाबी इल्ली का वयस्क पतंगा नर पतंगे को समागम के लिए आकर्षित करने के लिए वातावरण में प्राकृतिक रूप

से सेक्स फेरोमोन उत्पन्न करता है, जो दो रसायनों की निश्चित मात्रा के अनुपात (61:39) क्रमशः जेड 7 जेड 11– हेक्साडेकाडीनील एसीटेट और जेड 7 ई 11–हेक्साडेकाडीनील एसीटेट में पाया गया है।

लेपीडोप्टेरा वर्ग के कीटों में यह सेक्स फेरोमोन आम तौर पर दो से चार रसायनों का मिश्रण होता है, जिसकी पहचान स्थापित कर अनुसंधान के आधार पर संयोजित रसायनों का प्रमाण निश्चित किया जाता है। इसके पश्चात नर पतंगों को आकर्षित करने के लिए व्यापारिक स्तर पर इन्हें उपलब्ध कराया जाता हैं। कपास की फसल में अमेरिकन इल्ली (हेलीकोवर्पा), लश्करी इल्ली (स्पोडोप्टेरा) चित्तीदार इल्ली (स्पॉटेड बॉलवर्म) और गुलाबी इल्ली के सेक्स फेरोमोन अब व्यापारिक स्तर पर उपलब्ध हैं और अधिकांश देशों में किसान फेरोमोन ट्रैप के साथ इसका उपयोग करने लगे हैं। इन कृत्रिम रूप से बनाए गए सेक्स फेरोमोन की जानकारी तालिका में दी गई है।

तालिका 1 : विभिन्न इल्लियों के लिए फेरोमोन रसायन और ल्युर

कीट का नाम	फेरोमोन रसायन और उसका अनुपात	ल्युर का नाम
अमेरिकन इल्ली / *हेलिकोवर्पा आरमीजेरा*	जेड 11–हेक्साडेसीनाल और जेड 9–हेक्साडेसीनाल (97:3)	हेलील्युर
गुलाबी इल्ली *(पेक्टीनोफोरा गॉसीपीयेला)*	जेड 7 जेड 11– हेक्साडेकाडीनील एसीटेट और जेड 7 जेड ई 11– हेक्साडेकाडीनील एसीटेट (1:1)	गोसिपल्युर
चित्तीदार इल्ली *(इयारीस वीटेला* एवं *इयारीस इन्सुलाना)*	(ई, ई) 10, 12 (हेक्साडेकाडीएनाल	एर्विटल्युर
लश्करी इल्ली *(स्पोडोप्टेरा लिटूरा)*	(जेड, ई) 9, 11–टेट्रा डेकाडीएनील एसीटेट और (3एस, 6) 9, 12 – टेट्रा डेकाडीएनील एसीटेट (10:1)	स्पोडोल्युर / लिट–ल्युर
फॉल आमीवर्म / *(स्पोडोप्टेरा फ्रुजीपर्डा)*	जेड 9–टेट्राडेसीनाल एसीटेट और जेड 7–डोडेसीनाल एसीटेट और जेड 7–डोडेसीनाल एसीटेट	एफ.ए.डब्ल्यू

कपास में सेक्स फेरोमोन के उपयोग

- कीट की निगरानी के लिए (मॉनिटरिंग)
- कीट को समूह में पकड़ने के लिए (मास ट्रैपिंग)
- कीट के वयस्क पतंगों में समागम व्यवधान के रूप में (मेटिंग डिसरप्शन)

कीट के नर पतंगे की निगरानी और समूह में आकर्षित करके नष्ट करने के लिए फेरोमोन ट्रैप-ल्युर का उपयोग : सेक्स फेरोमोन का उपयोग करके बॉल्स को छेदकर खाने वाली इल्लियों के नर पतंगों को आकर्षित करके फंसाने के लिए मुख्य तीन वस्तुओं की आवश्यकता होती है :

1. **सेक्स फेरोमोन रसायन आधारित संबंधित कीट के लिए ल्युर** : सेक्स फेरोमोन विशिष्ट संयोजित रसायनों को रबर या प्लास्टिक की नली या डिब्बी की अंदरूनी सतह में लेपित किया जाता है। इस प्रकार की बनावट को

आमतौर पर 'ल्युर' के रूप में जाना जाता है। विशिष्ट प्रकार की ल्युर का उपयोग केवल विशिष्ट जाति के कीटों के लिए ही किया जा सकता है। बाजार में वर्तमान में अमेरिकन इल्ली, गुलाबी इल्ली, चित्तीदार इल्ली और स्पोडोप्टेरा की इल्ली के लिए अलग–अलग ल्युर उपलब्ध हैं।

2. **विभिन्न आकार और माप के ट्रैप** : ल्युर को उचित ट्रैप में रखकर खेत में लटकाया जाता है। बाजार में अलग–अलग प्रकार के ट्रैप उपलब्ध हैं। ट्रैप के अंदर मौजूद सेक्स फेरोमोन ल्युर नर पतंगे को ट्रैप के अंदर खींच लाती है और फंसाती है। नर पतंगों के एक बार ट्रैप में दाखिल होने के बाद उनके फँसकर मरने के लिए ट्रैप की रचना (डिजाइन) महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

3. **ट्रैप को खेत में लटकाने के लिए आधार** : कपास की वृद्धि के दौरान उपरोक्त आधार/डंडे (दो मीटर लंबाई का लकड़ी का डंडा)सहित ट्रैप और ल्युर को पौधे की ऊंचाई के अनुसार व्यवस्थित करना चाहिए।

कपास के खेत में फेरोमोन ट्रैप-ल्युर का उपयोग करने की पद्धति

- कपास की अलग–अलग इल्लियों की निगरानी के लिए प्रति हेक्टेयर 5 ट्रैप, 30 मीटर की दूरी पर रखें। कपास की वृद्धि के साथ ट्रैप को पौधे की ऊंचाई से 1 से 1.5 फुट ऊपर रखें।
- आमतौर पर बुवाई के 45 दिनों बाद कपास में कलियाँ (स्क्वेर) बनने की शुरुआत होती है, तब बॉल को छेदकर खाने वाली इल्लियों के पतंगे पौधे के कोमल भागों पर अंडे देने की शुरुआत करते हैं। इसलिए कपास की खरीफ ऋतु में बुवाई के 45 दिनों से लेकर फसल पूर्ण होने तक निगरानी के लिए फेरोमोन ट्रैप का उपयोग करना चाहिए।
- अनुसंधान के आधार पर अलग–अलग फेरोमोन ट्रैप की जांच करने पर फेरो सेंसर टी.एम.–एस. पी. स्लीव ट्रैप गुलाबी इल्ली के नर पतंगों को आकर्षित करने के लिए सबसे अधिक प्रभावी पाया गया है।
- ट्रैप में पकड़े गए पतंगों को रोजाना निकालकर नष्ट करें और ल्युर को हर 15–20 दिनों में अवश्य बदलें। वर्तमान में, अनुसंधान के आधार पर 45 दिनों के प्रभाव वाली या पूरी सीजन तक प्रभावी रहने वाली ल्युर बाजार में उपलब्ध है।
- ट्रैप में पकड़े गए पतंगों की संख्या आर्थिक क्षति स्तर (इटीएल) की गणना करने में मददगार होती है। उदाहरण के लिए : जब आठ (8) गुलाबी इल्ली के नर पतंगे लगातार तीन रातों तक ट्रैप में पकड़े जाएं, तब सिफारिश के अनुसार कपास की फसल में कीटनाशकों का छिड़काव (इंडोक्साकार्ब 14.5 एससी @ 5 मिली, एमामेक्टिन बेंजोएट 5 एसजी @ 3 ग्राम, स्पिनोसाड 45 एससी @ 3 मिली या प्रोफेनोफोस 50 ईसी @ 20 मिली प्रति 10 लीटर पानी) करना जरूरी हो जाता है।
- यदि फेरोमोन ट्रैप में आकर्षित होने वाले नर पतंगों की संख्या लगातार 10 नर पतंगे प्रति ट्रैप प्रति दिन से अधिक दिखाई दे, तो नर पतंगों को समूह में पकड़कर उनका सफाया करने के लिए ट्रैप की संख्या बढ़ाकर 40 ट्रैप प्रति हेक्टेयर के अनुसार उपयोग किया जा सकता है।
- नवसारी कृषि यूनिवर्सिटी द्वारा तीन साल के अनुसंधान के आधार पर वर्ष 2021 में कपास के खेत में गुलाबी इल्ली की निगरानी के लिए बुवाई के 45 दिनों बाद फेरो–सेंसर टीएम–एसपी ट्रैप प्रति हेक्टेयर 5 के अनुसार लगाने और इस फेरोमोन ट्रैप में 40 दिनों के अंतराल पर 3 बार पेक्टिनो–ल्युर उपयोग में लेने की सिफारिश की गई है।



चित्र 1 : फेरोमोन ट्रैप

फेरोमोन ट्रैप–ल्युर का उपयोग करने के लिए सामान्य सावधानियां

- कपास उगाने वाले क्षेत्र में किसान सामूहिक रूप से फेरोमोन का उपयोग करें तो अधिक अच्छा परिणाम मिल सकता है।
- कपास की बुवाई होने से पहले कीटों की निगरानी के लिए आवश्यक संख्या में फेरोमोन ट्रैप–ल्युर (समय अवधि के अनुसार) अधिकृत विक्रेता से खरीदें और 2 मीटर लंबाई के डंडे काटें।
- कपास के खेत में 2 ट्रैप के बीच न्यूनतम 30 मीटर की दूरी बनी रहे, इस तरह नाली–मेड़ पद्धति से बुवाई की गई कपास में मेढ़ पर डंडे लगाकर ट्रैप लगाएं।
- बाजार से खरीदे गए ल्युर पैकेट फ्रिज में संभालकर रखें और साबुन से हाथ धोकर जरूरत के अनुसार ल्युर पैकेट से निकालकर फेरोमोन ट्रैप में लगाएं। खरीदे गए ल्युर पैकेट पर निर्देशित समय अवधि तक उपयोग कर लेना चाहिए।
- कपास में जब कीटनाशकों का छिड़काव किया जाए तब फेरोमोन ट्रैप को प्लास्टिक की थैली से ढक दें।
- सीजन पूरी होने के बाद उपयोग किए गए फेरोमोन ट्रैप–ल्युर और रासायनिक दवा की प्लास्टिक की थैलियों और खराब हो चुके ट्रैप का उचित तरीके से निपटान करें।
- समय–समय पर फेरोमोन ट्रैप की प्लास्टिक की थैली/डिब्बे में पकड़े गए नर पतंगों की

गिनती करके पतंगों का निपटान करें और थैलियों का सिरा बंद करें।

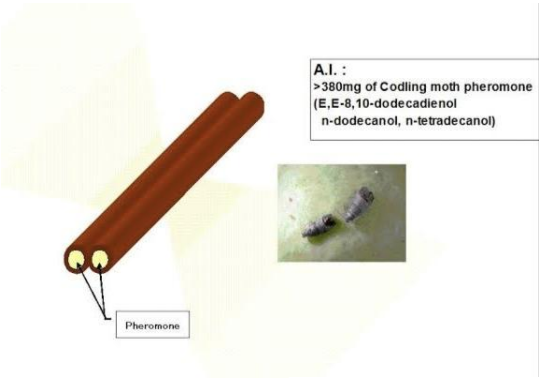
सेक्स फेरोमोन की तीव्र गंध से वयस्क पतंगों को भ्रमित कर समागम व्यवधान पद्धति से प्रबंधन

सेक्स फेरोमोन, अलग–अलग पहचान स्थापित किए गए विशिष्ट रसायनों के संयोजन पर आधारित एक व्यापारिक तकनीक है। जब सेक्स फेरोमोन का नर पतंगों की निगरानी या समूह में पकड़कर सफाया करने के उद्देश्य से उपयोग किया जाता है, तब निर्धारित अनुपात के अनुसार सक्रिय रसायन कम मात्रा में समय अवधि के अनुसार (45 दिन या 6 महीने की सीजन तक) वातावरण में फैले, इसके लिए प्लास्टिक माध्यम (ल्युर) में मिलाकर लेबल सहित पैकेट में रखा जाता है। जब सेक्स फेरोमोन का समागम व्यवधान के लिए उपयोग किया जाता है, तब निर्धारित अनुपात के अनुसार सक्रिय रसायन अधिक मात्रा में समय अवधि के अनुसार यूनिट प्रति वातावरण में फैले, इसके लिए अलग–अलग माध्यमों जैसे कि, प्लास्टिक की पॉली ट्यूब (पीबी रोप एलटीटी), एयरोसोल डिवाइस (पफर/मिस्टर), माइक्रो एनकैप्सुलेटेड, वेक्सी ड्रॉपलेट (स्पलैट), जैल आदि में मिलाकर लेबल सहित पैकेट में रखा जाता है। यह नर पतंगों को समागम के लिए भ्रमित करके मादा पतंगों को खोजने में बाधा उत्पन्न करता है और समागम न होने देकर कीट की दूसरी पीढ़ी की वृद्धि को रोकने में मददगार होता है।

पीबी रोप लॉग ट्विन ट्यूब (एलटीटी)

गुलाबी इल्ली के नर पतंगों को भ्रमित करके उनके मादा पतंगों के साथ समागम में व्यवधान डालने के लिए शीने–इत्सु केमिकल कंपनी, जापान द्वारा कृत्रिम रूप से व्यापारिक स्तर पर पीबी–रोप एलटीटी (पिंक बॉलवर्म लॉन्ग ट्विन ट्यूब) विकसित किया गया था। जिसमें जेड, जेड/जेड, ई–7,11 हेक्साडेकाडीनील एसीटेट रसायनों के संयोजन को (320 मि.ग्रा.) प्लास्टिक की दो पॉली ट्यूब में (2–3 मि.मी. व्यास और 20 से.मी. लंबाई वाली) भरा होता है। दोनों नलियों को एक–दूसरे के साथ सिरे से जोड़कर चूड़ी का आकार बनाया गया होता है। ऐसी सेक्स फेरोमोन युक्त चूड़ी के आकार की नली/रस्सी को पीबी रोप एलटीटी कहा जाता है, जिसकी कोशिकीय दीवारों से फेरोमोन वातावरण में धीरे–धीरे फैलता है। एक बार लगाने के बाद पीबी रोप 90 से 120 दिनों तक प्रभावी रहता है। भारत में धानुका इंडिया कंपनी द्वारा व्यापारिक स्तर पर विकसित इस पीबी रोप टेक्नोलॉजी का परीक्षण पूर्व में नवसारी कृषि यूनिवर्सिटी, सूरत और आनंद कृषि यूनिवर्सिटी, आनंद में हुआ है। कपास में गुलाबी इल्ली के प्रबंधन के लिए 150 प्रति हेक्टेयर की दर से पीबी रोप एलटीटी का उपयोग प्रभावी साबित हुआ है। यूनिवर्सिटी की सिफारिश के अनुसार रासायनिक दवा का उपचार (इंडोक्साकार्ब 14.5 एससी @ 5 मिली या स्पिनोसाड 45 एससी @ 3 मिली या एमामेक्टिन बेंजोएट 5 एसजी @ 5 ग्राम बुवाई के 75 और 90 वें दिन) अथवा कली अवस्था से पीबी रोप का उपचार (पीबी रोप एल 265 प्रति हेक्टेयर और अतिरिक्त खेत की मेढ़ पर प्रति 2 मीटर पर 1 पीबी रोप एल); ये दोनों उपचार गुलाबी इल्ली के प्रबंधन के लिए समान रूप से प्रभावी साबित हुए और दोनों उपचारों में इल्ली की आबादी और बॉल, बीज और रुई का नुकसान सबसे कम देखा गया।

वर्ष 2023 में भारत सरकार के कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय के केंद्रीय कीटनाशक बोर्ड और पंजीकरण समिति (सीआयबीआरसी) द्वारा कपास की गुलाबी इल्ली में पीबी रोप टेक्नोलॉजी को मान्यता दी गई थी। जिसमें फेरोमोन रसायनों के संयोजनों के सक्रिय तत्व 140 मिली प्रति डिस्पेंसर के अनुसार कपास के किसानों को सामूहिक रूप से कम से कम 25 हेक्टेयर क्षेत्र के लिए कुल 9875 डिस्पेंसर के अनुसार उपयोग करने की सिफारिश की गई है।





चित्र 2 : पीबी रोप एलटीटी

स्प्लैट (विशेषीकृत फेरोमोन ल्युर अनुप्रयोग प्राद्यौगिकी)

- गुलाबी इल्ली के नर पतंगों को भ्रमित कर उसके मादा पतंगों के साथ समागम में व्यवधान डालने के लिए कृत्रिम रूप से व्यापारिक स्तर पर स्प्लैट (विशेषीकृत फेरोमोन ल्युर अनुप्रयोग प्राद्यौगिकी) भी विकसित की गई थी। जिसमें फेरोमोन के रसायन संयोजनों (जेड जेड/जेड ई) 7, 11–हेक्साडेकाडीनील एसीटेट– 4% होता है, जबकि वाहक (जो मुख्य तत्व को वातावरण में धीमी गति से फैलाता है) का प्रमाण 96% होता है। बाजार में व्यापारिक स्तर पर इन रसायन संयोजनों को वहन करने के लिए जेल, मोम या कैप्सूल जैसे पदार्थों का उपयोग होता है। यह स्प्लैट टेक्नोलॉजी एटीजीसी बायोटेक प्राइवेट लिमिटेड, तेलंगाना द्वारा गुलाबी इल्ली के समागम व्यवधान आधारित प्रबंधन के लिए रेडी टू यूज 4% गोसिप ल्युर वेक्सी ड्रॉपलेट जैसे वहन करने वाले वाहक पदार्थ में मिश्रित होता है। जो 125 ग्राम की ट्यूब के पैकिंग में बाजार में उपलब्ध है। कपास की सीजन के दौरान गुलाबी इल्ली के प्रकोप के आधार पर एकड़ प्रति ऐसी 125 ग्राम की ट्यूब कुल 4 बार यानी कि बुवाई के 30,60,90 और जरूरत हो तो 120 दिनों बाद उपयोग किया जाता है। खेत में इस ट्यूब का उपयोग एकांतर कपास की कतार में दो पौधों के बीच 5 मीटर की दूरी पर पौधे के अग्रभाग (3 से 4 इंच नीचे) मटर के आकार के छोटे बिंदुओं के रूप में पौधे पर लगाया जाता है। अनुमानित एकड़ प्रति 400 से 500 पौधों पर मजदूर के उपयोग से यह उपचार दिया जाता है।
- वर्ष 2018 में कीट विज्ञान विभाग, जूनागढ़ कृषि यूनिवर्सिटी, जूनागढ़ द्वारा कपास की फसल में गुलाबी इल्ली के प्रभावी, किफायती और पर्यावरण के अनुकूल नियंत्रण के लिए प्रति हेक्टेयर टेक्नोलॉजी की 400 ग्राम की ट्यूब (एक समान 1000 बिंदु को दो शाखाओं के बीच की जगह पर), पहला उपचार जब कीट का प्रकोप दिखे (फूल अवस्था) तब और बाद के दो उपचार, पहले उपचार के 30 दिनों के अंतराल पर देने की सिफारिश है।
- हाल ही में वर्ष 2023 में नवसारी कृषि यूनिवर्सिटी, नवसारी द्वारा कपास में गुलाबी इल्ली के अधिक प्रभावी और किफायती नियंत्रण के लिए किसानों को सामूहिक रूप से गोसिप ल्युर स्प्लैट 4% आर.टी.यू. (रेडी टू यूज) ट्यूब का (अनुमानित 800 पौधे/हेक्टेयर, 200–250 ग्राम/हेक्टेयर) उपयोग एकांतर कपास की कतार में दो पौधों के बीच 5 मीटर के अंतराल पर पौधे के अग्रभाग (3 से 4 इंच नीचे) मटर के आकार के छोटे बिंदुओं के रूप में बुवाई के 45, 75 और 105 वें दिन लगाने की सिफारिश की गई है।

समागम व्यवधान टेक्नोलॉजी का उपयोग करने के लिए सामान्य सावधानियाँ : यह तकनीक गांवों में किसान सामूहिक रूप से (क्लस्टर बेस्ड अप्रोच) उपयोग करें तो ही कारगर साबित हो सकती है।

- कपास की सीजन की शुरुआत से पहले किसानों को सहकारी स्तर पर जरूरत के अनुसार मात्रा मंगवा लेनी चाहिए।
- मजदूर के पास जब समय अवधि के अनुसार खेत में कपास के पौधों पर सुझाए गए मार्गदर्शन के अनुसार जेल लगाना हो, तो मजदूरों को सामान्य प्रशिक्षण दें कि वे उपयोग करते समय जेल सांस में लेना टालें, त्वचा को न छुए इसकी सावधानी रखें, सुरक्षित कपड़े और दस्ताने पहनें और बारिश न हो ऐसे 4–5 दिनों के खुले मौसम की अवधि में ही जैल को पौधो पर लगाएं
- काम पूरा होने के बाद हाथों को साबुन और पानी से धोएं और दूषित कपड़े धो डालें, बिना उपयोग की गई मात्रा को उचित जगह पर सुरक्षित रखें और खुले पैकेटों और ट्यूब का उचित निपटान करें।
- खेत में इस तकनीक के उपयोग के बाद पुनः प्रवेश 24 घंटे बाद करें और यदि चुनाई करनी हो तो 2 दिन बाद करें।



चित्र 3 : गॉसिपल्यूर 4% आरटीयू





चित्र 4 : केंद्रीय प्रायोजित योजना एनएफएसएम के तहत वित्त पोषित : कपास : कीटनाशक प्रतिरोध प्रबंधन (आईआरएम) : "गुलाबी सुंडी प्रबंधन रणनीतियों का प्रसार"

16

कीटों में बायोरेशनल कीटनाशकों द्वारा हॉर्मोलिगोसिस

विरेश देवाक्कलवार[1] (विद्यार्थी), रचना पाण्डे[2] (वरिष्ठ वैज्ञानिक),
शिवाजी ठुबे[2] (वरिष्ठ वैज्ञानिक), पूजा घोंगे[2] (वरिष्ठ तकनीशियन),
आर. अश्विनी[1] (विद्यार्थी), किशोर त्रिभुवन[2] (वरिष्ठ वैज्ञानिक)
[1]भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान मेगा विश्वविद्यालय (नागपुर हब)ए नागपुर – 441108,, (महाराष्ट्र), [2]भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–441108 (महाराष्ट्र)

कपास वैश्विक कृषि का एक महत्त्वपूर्ण स्तंभ है, जो अनेक देशों में आर्थिक स्थिरता और ग्रामीण आजीविका को आधार प्रदान करता है। भारत, विश्व का दूसरा सबसे बड़ा कपास उत्पादक देश होने के नाते, इस क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और लगभग 13.06 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में कपास की खेती करता है। हालाँकि, इतने विस्तृत क्षेत्र के बावजूद भारत की कपास उत्पादकता वैश्विक औसत से कम बनी हुई है। इस असमानता का मुख्य कारण अजैविक एवं जैविक तनाव कारकों का जटिल प्रभाव है। अजैविक कारक जैसे–लंबे समय तक रहने वाला सूखा, तापमान में अनियमित उतार–चढ़ाव, तथा मिट्टी का निरंतर क्षरण–पौधों की वृद्धि क्षमता और उपज संभावनाओं को कमजोर करते हैं। इसके साथ ही, जैविक कारक विशेषकर कीटों का प्रकोप, फसल के स्वास्थ्य और उत्पादकता के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करते हैं।

कपास को प्रभावित करने वाले अनेक कीटों में से गुलाबी सुंडी (पेक्टिनाफोरा गॉसिपिएला) सबसे विनाशकारी कीटों में से एक के रूप में उभरी है। यह कीट बॉल्स, रेशे तथा बीजों को गंभीर क्षति पहुँचाता है, जिससे उपज हानि 2.8% से लेकर 61. 9% तक हो सकती है, जो क्षेत्र की कृषि– जलवायु परिस्थितियों और कीट दबाव पर निर्भर करती है। गुलाबी सुंडी की अद्भुत अनुकूलन क्षमता तथा पारंपरिक नियंत्रण विधियों–यहाँ तक कि बीटी कपास के प्रति बढ़ती प्रतिरोधकता ने इसकी समस्या को और अधिक गंभीर बना दिया है। इसके प्रकोप के लक्षण जैसे– बोल्स का झड़ना, बोल्स का समय से पहले खुलना, रोजेट गुलाबवत् पुष्प जैसी संरचना का बनना, तथा रेशे का दागदार होना–न केवल रेशे की गुणवत्ता को कम करते हैं बल्कि फसल के वाणिज्यिक मूल्य को भी घटा देते हैं।



चित्र 1 : गुलाबी सुंडी

विस्तृत स्तर पर और अंधाधुंध तरीके से उपयोग किए जाने वाले व्यापक–प्रभावी कीटनाशकों ने अनजाने में गुलाबी सुंडी की आबादी में प्रतिरोधक क्षमता के विकास को तेज कर दिया है। साथ ही, इन कीटनाशकों ने प्राकृतिक शत्रुओं और उपयोगी आर्थोपोड्स को नष्ट करके पारिस्थितिक संतुलन को भी गंभीर रूप से बाधित किया है। यह स्थिति इस बात पर जोर देती है कि वर्तमान परिस्थिति में अधिक पर्यावरण अनुकूल और पारिस्थितिक दृष्टि से सुरक्षित कीट प्रबंधन समाधानों की तत्काल आवश्यकता है।

इसके प्रत्युत्तर में, बायोरेशनल कीटनाशक एकीकृत कीट प्रबंधन आइपीएम ढाँचों के अंतर्गत एक व्यवहार्य विकल्प के रूप में उभरकर सामने आए हैं। स्पिनेटोरम, इंडोक्साकार्ब, एमामेक्टिन बेंजोएट तथा नीम का तेल (एजाडिरैक्टिन) जैसे यौगिक कीटों पर चयनात्मक और लक्षित प्रभाव प्रदान करते हैं, जिससे गैर–लक्षित जीवों पर पड़ने वाला अनावश्यक दुष्प्रभाव कम होता है और पर्यावरण में इनकी स्थायित्व अवधि भी घटती है। ये कीटनाशक न केवल उपयोगी जीव–जंतुओं को संरक्षित करने में सहायक हैं, बल्कि कीट आबादी पर चयन दबाव को कम करके प्रतिरोध प्रबंधन के सिद्धांतों के अनुरूप भी हैं। आइपीएम कार्यक्रमों में इनका रणनीतिक समावेश पारिस्थितिक संतुलन पुनर्स्थापित करने, प्रतिरोध के विकास को कम करने, तथा भारत और अन्य देशों में कपास उत्पादन प्रणालियों की दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। परन्तु लगातार उपयोग से यह कीटनाशक किटों में हॉर्मोलिगोसिस का कारण बनते है जिसका वर्णन निम्नवत है।

हॉर्मोलिगोसिस : हॉर्मोलिगोसिस, जिसका उल्लेख पहली बार 1940 के दशक में किया गया था, एक डोज–निर्भर जैविक प्रतिक्रिया को संदर्भित करता है, जिसमें किसी तनावकारक–जैसे कीटनाशक–की कम सांद्रता पर जीवों की शारीरिक क्रियाएँ दबने के बजाय उत्तेजित होती हैं। इस द्वि–चरणीय प्रतिक्रिया की विशेषता है कि उप–घातक मात्रा पर कीटों की प्रजनन क्षमता, आयु में वृद्धि और मृत्यु दर में कमी देखने को मिलती है। इसके परिणामस्वरूप, कीटों का पुनः प्रकोप तथा प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि हो सकती है।

हाल के अध्ययनों ने विभिन्न जीवों में हॉर्मोलिगोसिस की समझ को विस्तारित किया है, जिससे यह स्पष्ट हुआ है कि इसका प्रभाव जैविक, चयापचयी, आणविक, संज्ञानात्मक और प्रतिरक्षा प्रक्रियाओं पर पड़ता है। ऐसी प्रतिक्रियाएँ अल्पकालीन लाभ–जैसे प्रजनन सफलता में वृद्धि– और दीर्घकालीन लाभ–जैसे आगामी पीढ़ियों में आयु और अनुकूलन क्षमता में वृद्धि–दोनों प्रदान कर सकती हैं। विभिन्न कीटनाशकों की उप–घातक मात्रा प्रमुख कपास कीटों में शारीरिक और व्यवहारिक परिवर्तन उत्पन्न करने के लिए जानी जाती है। कीटों की शारीरिक एवं प्रजनन प्रतिक्रियाएँ जब अलग–अलग कीटनाशी यौगिकों के प्रति जांची गईं, तो यह स्पष्ट हुआ कि इनके प्रभाव अत्यंत जटिल हैं और कीट प्रबंधन रणनीतियों को गहराई से प्रभावित करते हैं। ऑर्गेनोफॉस्फेट और पाइरेथ्रॉइड–जैसे एसिफेट, साइपरमेथ्रिन पौधों की आकृति–विन्यास में परिवर्तन कर और ऐसे वाष्पशील संकेत जारी करते है जो अंडोत्सर्ग अवस्था वाली मादाओं को आकर्षित करते हैं, एवं अंडे देने की क्रिया को बढ़ावा देने के लिए जाने जाते हैं। इससे अंडे देने की गतिविधि बढ़ सकती है और कीट प्रकोप और अधिक गहन हो सकता है। थायमेथॉक्सम और प्रोफेनोफॉस जैसे यौगिकों में हॉर्मेटिक प्रतिक्रियाएँ दर्ज की गई हैं, जिनमें उप–घातक मात्रा पर आश्चर्यजनक रूप से प्रजनन मानकों में वृद्धि तथा डिटॉक्सिफिकेशन–संबंधित जीनों की अभिव्यक्ति में वृद्धि होती है। ये निष्कर्ष इस बात को रेखांकित करते हैं कि अनचाहे कीट–सहिष्णुता उत्तेजन से बचने के लिए सटीक मात्रा निर्धारण और उचित समय पर छिड़काव अत्यावश्यक है। ट्राइजोफॉस उल्लेखनीय बहु–पीढ़ीगत विषाक्तता प्रदर्शित करता है, जिसका प्रभाव

केवल तत्काल संपर्क तक सीमित नहीं रहता। यह कई पीढ़ियों में विकासीय प्रक्रियाओं और प्रजनन क्षमता को बाधित कर सकता है। कृषि कीट विज्ञान के व्यापक संदर्भ में, हॉर्मोलिगोसिस कई कीट प्रजातियों में दर्ज की गई है। उदाहरण के लिए, लुफेन्यूरॉन को फिनॉकॉकस में प्रजनन को उत्तेजित करते हुए रिपोर्ट किया गया है, जबकि एसिटेमिप्रिड और नाइटेनपायरम ने एफिस गॉसीपी प्रजनन क्षमता बढ़ाई है। विशेष रूप से, टेट्रामेथ्रिन और पर्मेथ्रिन की उच्च मात्रा ने गैर–लक्षित जीवों–विशेषकर मधुमक्खियों–पर प्रतिकूल प्रभाव दिखाए हैं, जिससे पर्यावरणीय सुरक्षा और परागणकर्ता स्वास्थ्य के प्रति चिंताएँ बढ़ जाती हैं।

ये निष्कर्ष कीटनाशक–कीट अंतः क्रियाओं की सूक्ष्म एवं गहन समझ की आवश्यकता पर बल देते हैं। हॉर्मोलिगोसिस संबंधी ज्ञान को कीट प्रबंधन ढाँचों में शामिल करना अत्यंत महत्वपूर्ण है, ताकि ऐसी पर्यावरण अनुकूल और पारिस्थितिक रूप से उत्तरदायी रणनीतियाँ विकसित की जा सकें जो प्रतिरोध के विकास को कम करें और कृषि–परितंत्र की अखंडता को बनाए रखें।

अनुसंधान अंतराल और उद्देश्य : यद्यपि सभी कीटों में कीटनाशक प्रतिरोध पर व्यापक शोध उपलब्ध है, लेकिन बायोरेशनल कीटनाशकों के हॉर्मोलिगोसिस प्रभावों पर बहुत सीमित अध्ययन किए गए हैं। इन प्रभावों को समझना आवश्यक है, ताकि पर्यावरण अनुकूल और पारिस्थितिक रूप से सुरक्षित कीट प्रबंधन रणनीतियाँ विकसित की जा सकें। महत्वपूर्ण जैविक मापदंडों–जैसे प्रजनन क्षमता, आयु, मृत्यु दर और अंडे देने की क्षमता – पर प्रभावों का मूल्यांकन करने का उद्देश्य रखता है। इन उप–घातक प्रभावों की जाँच करके, शोध का लक्ष्य उन सूक्ष्म शारीरिक और व्यवहारिक परिवर्तनों को उजागर करना है, जो कीट जनसंख्या की गतिशीलता को प्रभावित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, अध्ययन में चयनित जीवन–चरणों पर बहु–पीढ़ीगत प्रभावों का भी विश्लेषण किया जाना चाहिए, जिससे यह समझने में सहायता मिलेगी कि एक पीढ़ी में हुए संपर्क का प्रभाव आगामी पीढ़ियों पर किस प्रकार पड़ सकता है। इन निष्कर्षों से एकीकृत कीट प्रबंधन (आइपीएम) रणनीतियों को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान मिलेगा, क्योंकि यह हॉर्मोलिगोसिस–आधारित प्रतिक्रियाओं को सम्मिलित कर कीट नियंत्रण उपायों की पारिस्थितिक स्थिरता और सटीकता में वृद्धि करेगा।

यह अध्ययन कीटों के लिए जो कपास उत्पादन के लिए एक प्रमुख खतरा है के प्रबंधन परिणामों को निर्धारित करने में हॉर्मोलिगोसिस की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करता है। हॉर्मोलिगोसिस यह दर्शाता है कि उप–घातक मात्रा वाले कीटनाशकों के संपर्क पर होने वाली जैविक प्रतिक्रियाओं द्वारा, पारंपरिक रासायनिक रणनीतियाँ अनजाने में किन परिणामों को जन्म दे सकती हैं। विशेष रूप से कीट की बढ़ी हुई जीवनीयता और प्रतिरोध विकास की तीव्र गति। हॉर्मोलिगोसिस की गहन समझ अधिक पर्यावरण अनुकूल और लक्षित हस्तक्षेपों को डिजाइन करने में रणनीतिक लाभ प्रदान करती है। इस ज्ञान को प्रतिरोध प्रबंधन ढाँचों में शामिल करने से बायोरेशनल कीटनाशकों के संतुलित एवं विवेकपूर्ण उपयोग को बढ़ावा दिया जा सकता है, पारिस्थितिक व्यवधान को कम किया जा सकता है, और दीर्घकालीन फसल सहनशीलता को सुदृढ़ किया जा सकता है। अंततः, हॉर्मोलिगोसिस की हमारी समझ में वृद्धि न केवल कीट नियंत्रण की प्रभावशीलता को मजबूत करेगी, बल्कि बदलते जैविक तनाव कारकों के बीच टिकाऊ कपास उत्पादन के व्यापक लक्ष्य में भी महत्त्वपूर्ण योगदान देगी।

17

कीट प्रबंधन में एलिसिटर की भूमिका : पौधों की प्राकृतिक रक्षा प्रणाली का सशक्तिकरण

अश्विनी आर.[1] (विद्यार्थी), रचना पाण्डे[2] (वरिष्ठ वैज्ञानिक),
शिवाजी ठुबे[2] (वरिष्ठ वैज्ञानिक), विरेश देवाक्कलवार[1] (विद्यार्थी)
[1]भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान मेगा विश्वविद्यालय (नागपुर हब), नागपुर– 441108, (महाराष्ट्र), [2]भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर– 441108, (महाराष्ट्र)

कीट पौधों से पोषक तत्व प्राप्त करने के लिए विविध प्रकार की आहार रणनीतियों का उपयोग करते हैं। पौधे इसके प्रत्युत्तर में विषैले यौगिकों तथा रक्षा प्रोटीनों का उत्पादन करते हैं। पौधों में कीटों के विरुद्ध एक सुविकसित एवं प्रभावी रक्षा तंत्र होता है, जो स्थायी अथवा प्रेरित हो सकता है।



चित्र 1 : एफिड्स

स्थायी बनाम प्रेरित प्रतिरोध तंत्र : स्थायी प्रतिरोध पौधों में हर समय उपस्थित रहता है, जबकि प्रेरित प्रतिरोध कीटों के विरुद्ध पहली और प्राथमिक रक्षा होती है, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो सकती है तथा कीटों के आक्रमण, रोगजनक संक्रमण एवं एलिसिटर के प्रयोग जैसे विभिन्न उद्दीपनों के प्रत्युत्तर में उत्पन्न होती है। प्रत्यक्ष प्रेरित प्रतिरोध एंटीक्सेनोसिस और/या एंटीबायोसिस तंत्रों के माध्यम से कीटों को प्रभावित करता है, जबकि अप्रत्यक्ष प्रेरित प्रतिरोध पौधों द्वारा कीट क्षति के प्रत्युत्तर में उत्सर्जित वाष्पशील यौगिकों के माध्यम से होता है, जो कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं (परजीवी एवं परभक्षी) एवं किसानों के मित्रकीट को आकर्षित करते हैं।

फाइटोहार्मोन एवं एलिसिटर की भूमिका: पादप हार्मोन/फाइटोहार्मोन एलिसिटर के रूप में कार्य करते हैं और कीटों के विरुद्ध पौधों की रक्षा में सम्मिलित पादप प्रतिरोध को प्रेरित करते हैं। जैस्मोनिक अम्ल, सैलिसिलिक अम्ल, मिथाइल जैस्मोनेट, मिथाइल सैलिसिलेट, एथिलीन, एबीए, पॉलीएमाइन्स, ब्रैसिनोस्टेरॉयड्स, ट्राइकोंटानोल जैसे एलिसिटर तथा अजेलाइक अम्ल, बेंजोथियाडायजोल, जिबरेलिक अम्ल, हार्पिन, जैस्मोनिक अम्ल, पॉलीएमाइन्स, सैलिसिलिक अम्ल, काइटोसान, ब्रैसिनोस्टेरॉयड्स, ट्राइकोंटानोल, लिनालूल, 2,4–डी जैसे कृत्रिम एलिसिटर कीटों के विरुद्ध फसलों में सिस्टमिक अधिग्रहित प्रतिरोध उत्पन्न करने के लिए रिपोर्ट किए गए हैं।

प्राकृतिक एलिसिटर या रक्षा संकेत अणुओं के अपने संबंधित पादप रिसेप्टर्स के साथ होने वाली अंत:क्रिया की नकल करके, अथवा अन्य रक्षा संकेत तंत्रों में हस्तक्षेप करके, कृत्रिम एलिसिटर पौधों में रक्षा प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न कर सकते हैं, जो पौधों की रक्षा प्रणाली में एक नवीन योगदान हैं।

एलिसिटर क्रिया के लाभ एवं कार्यविधि : एलिसिटर पौधों में संकेत संचरण मार्गों को सक्रिय करते हैं, जिससे विभिन्न रक्षा संबंधी द्वितीयक चयापचयी यौगिक और प्रोटीन का उत्पादन होता है। एलिसिटर के कई लाभ हैं, जिनमें यह तथ्य शामिल है कि वे गैर–विषैले और पर्यावरण–अनुकूल हैं और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि कम मात्रा में भी ये पौधों को विभिन्न रोगजनकों से दीर्घकालिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए पर्याप्त हैं। एलिसिटर के बाह्य अनुप्रयोग से ऐसे वाष्पशील यौगिकों का उत्सर्जन होता है जो उन वाष्पशील मिश्रणों के समान होते हैं, जिन्हें कीटों के कारण हुए घावों से प्रेरित किया गया था। वाष्पशील यौगिकों का उत्पादन करके या द्वितीयक चयापचयी जैसे प्रतिपोषक घटकों को बढ़ाकर, एलिसिटर पौधों को कीटों या कीट आक्रमण से बचाने में मदद कर सकते हैं। रक्षा एंजाइमों, प्रतिपोषक एंजाइमों और द्वितीयक चयापचयी यौगिकों को बढ़ाकर, एलिसिटर पौधों को विभिन्न तनावों के प्रति अधिक सहनशील बना सकते हैं। एलिसिटर के उपयोग से कीट क्षति को कम किया जा सकता है। कीटों के भोजन के दौरान सक्रिय हुए द्वितीयक चयापचयी यौगिकों और अन्य प्रतिरोध–संबंधी गुणों का उत्पादन बढ़ता है। ये विशेषताएँ कीटों की सक्षमता को कम कर सकती हैं, खाने से रोक सकती हैं और लाभकारी कीटों को आकर्षित कर सकती हैं।

प्रमुख कीटों के प्रति क्षेत्रीय प्रभावशीलता : आइपीएम कार्यक्रमों में एक अतिरिक्त रणनीति एलिसिटर का उपयोग करके पौधों की रक्षा प्रणाली को सक्रिय करना है। ग्रीनहाउस में चार फसलों–कपास, मक्का, धान और सोयाबीन का संभावित एलिसिटर के साथ उपचार किया गया। *स्पोडोप्टेरा फ्रुजीपेर्डा* लार्वा के वजन वृद्धि का मूल्यांकन करके, पौधों की रक्षा तंत्र में एलिसिटर के प्रभाव का आकलन किया गया। जैस्मोनिक अम्ल ने सोयाबीन में 35% और कपास में 48% तक कीट क्षति को कम किया। जैस्मोनिक अम्ल और सैलिसिलिक अम्ल का अरहर पर बाह्य रूप से प्रयोग बाजरा फली छेदक कीट *(मारुका विट्राटा)* के विरुद्ध रक्षा प्रतिक्रिया को सक्रिय कर सकता है, जिससे पौधों के जैव रासायनिक स्तर में वृद्धि और *एम. विट्राटा* लार्वा के पोषण सूचकांक में कमी आती है।



चित्र 2 : स्पोडोप्टेरा फ्रुजीपेर्डा

गेहूँ और चने पर एलिसिटर का बाह्य अनुप्रयोग किया गया, जिससे जैविक वाष्पशील यौगिक उत्पन्न हुए। जैस्मोनिक अम्ल के अनुप्रयोग ने गेहूँ में पिंक तना भेदक (स्टेम बोरर) द्वारा होने वाली क्षति को (24.43–29.48%) और चने में पॉड बोरर द्वारा होने वाली क्षति को (19–29.82%) तक कम किया। गेहूँ और चने के पौधों में वाष्पशील यौगिकों का उत्पादन अंडा परजीवी *ट्राइकोग्रामा चिलोनिस* की खोज एवं भोजन गतिविधियों को बढ़ावा देता है।

जैस्मोनिक अम्ल द्वारा उत्पन्न प्रतिक्रियाओं में प्रोटीनएज इनहिबिटर, निकोटिन, पॉलीफेनोल ऑक्सीडेज, लिपॉक्सीज और कई वाष्पशील जैविक

यौगिकों का उत्पादन शामिल है। अंगूर के पौधों में एलिसिटर के अनुप्रयोग के बाद उत्सर्जित वाष्पशील यौगिकों की ओर एंसरिटिड (मेटाफाइसस जाति) और माइमारिड (अनाग्रस प्रजाति) परजीवी कीट आकर्षित हुए।

अनाग्रस प्रजाति को मिथाइल सैलिसिलेट और मिथाइल जैस्मोनेट से भरे ब्लॉक्स में प्रमुख रूप से फँसा पाया गया, और मक्का में कोटेसिया करियाई भी रिपोर्ट किया गया। मक्का के पौधों से वाष्पशील जैविक यौगिक उत्सर्जित करके और *स्पोडोप्टेरा फ्रुजीपेर्डा* के खिलाफ वाष्पशील यौगिकों में बदलाव करके, अंडा परजीवी *ट्राइकोग्रामा प्रेटियोसुम* को आकर्षित करके, बाह्य रासायनिक एलिसिटर ने मक्का की रक्षा तंत्र को बेहतर बनाया। विशेष रूप से यह भी पाया गया कि सैलिसिलिक अम्ल परजीवीकरण दर और वाष्पशील जैविक कार्बन उत्सर्जन बढ़ाने में एक प्रभावी एलिसिटर था।

चावल के लीफ फोल्डर (नाफालोक्रोसिस मेडिनेलिस) पर एलिसिटर (मिथाइल सैलिसिलेट) का बाह्य रूप से अनुप्रयोग करने से प्रतिरोध उत्पन्न हुआ और 80% तक अधिक मृत्यु दर दर्ज की गई। टमाटर में जैस्मोनिक अम्ल प्रेरित रक्षा प्रतिरोध (मांडुका सेक्टा के विरुद्ध) का प्रभाव और टमाटर के प्रजनन सफलता से संबंधित कई कारक, जैसे फल की संख्या, फल का वजन, पकने का समय, फल लगने का समय, प्रति फल बीजों की संख्या, प्रति पौधा कुल बीजों की संख्या, तथा फल के वजन और बीज संख्या और अंकुरण सफलता के बीच सहसंबंध को प्रभावित किया। सोयाबीन में, जैस्मोनिक अम्ल के बाह्य उपयोग ने क्षति को 20–40% तक कम किया और *स्पोडोप्टेरा एग्जिगुआ* के विरुद्ध रक्षा प्रतिक्रियाएँ उत्पन्न कीं। ज्वार जातियों में जैस्मोनिक अम्ल और सैलिसिलिक अम्ल के उपचार ने रक्षा एंजाइमों की गतिविधियों को बदल दिया, जैसे पेरऑक्सीडेज, पॉलीफेनोल ऑक्सीडेज, सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज, कैटालेज, और कुल फिनोल, हाइड्रोजन पेरऑक्साइड और प्रोटीन की मात्रा। पौधों की ऊतकों की पचने की क्षमता और स्वाद में बदलाव करके, ये एंजाइम और अन्य रक्षा तत्व कीटों की वृद्धि और विकास को प्रभावित करते हैं, साथ ही पौधों को जैविक और अजैविक तनावों से सुरक्षा भी प्रदान करते हैं। सैलिसिलिक अम्ल और जैस्मोनिक अम्ल ने द्वितीयक चयापचयी यौगिकों और एंजाइम गतिविधि को बढ़ाया।

सैलिसिलिक अम्ल और जैस्मोनिक अम्ल का छिड़काव किए जाने के बाद, कीट–प्रतिरोधी मूंगफली जीनोटाइप्स को *एच. आर्मीजेरा* से संक्रमित किया गया। सैलिसिलिक अम्ल और जैस्मोनिक अम्ल द्वारा *एच. आर्मीजेरा* के विरुद्ध प्रति ऑक्सीकृत एंजाइम गतिविधि को प्रेरित किया गया, जिसके परिणामस्वरूप पौधों की क्षति, लार्वा का भार तथा उनकी जीवित रहने की क्षमता में कमी आई, साथ ही उनकी वृद्धि और विकास पर भी प्रभाव पड़ा। जैस्मोनिक अम्ल ने मूंगफली में कीट–क्षति को 5–40% तक कम किया, जबकि सैलिसिलिक अम्ल ने मूंगफली की कीट–क्षति को 13–19% तक घटाया। *ब्रैसिका ओलेरेसिया* में, जैस्मोनिक अम्ल और काइटोसान द्वारा बीज–लेपन, पत्ती–चबाने एवं रस–चूसने वाले कीटों के विरुद्ध दीर्घकालिक रक्षा–प्राइमिंग प्रदान करता है। एलिसिटर्स के प्रयोग से *प्लूटेला जाइलोस्टेला* तथा *मायजस पर्सिके* में



चित्र 3 : हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा

84% कीट मृत्यु दर्ज की गई। कपास अनुसंधान

द्वारा भी इस क्षेत्र में कार्य अग्रसिति है जिसके परिणाम अभी आने है।

कीट पौधों से पोषक तत्व प्राप्त करने के लिए विविध प्रकार की आहार रणनीतियाँ अपनाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पौधे स्थायी अथवा प्रेरित रक्षा तंत्र विकसित करते हैं। इन रक्षा तंत्रों में विषैले यौगिक, रक्षा प्रोटीन तथा वाष्पशील यौगिकों का उत्सर्जन शामिल है। प्रेरित प्रतिरोध प्रत्यक्ष (एंटीक्सेनोसिस, एंटीबायोसिस) अथवा अप्रत्यक्ष (परजीवी/परभक्षी कीटों को आकर्षित करना) तंत्रों के माध्यम से कार्य करता है, जिसे जैस्मोनिक अम्ल, सैलिसिलिक अम्ल जैसे फाइटोहार्मोन तथा बेंजोथियाडायजोल और काइटोसान जैसे कृत्रिम एलिसिटर द्वारा नियंत्रित किया जाता है। ये एलिसिटर संकेत संचरण मार्गों को सक्रिय करते हैं, जिससे द्वितीयक चयापचयी यौगिकों, रक्षा एंजाइमों (जैसे पीओडी/पीपीओ/एसओडी) तथा वाष्पशील यौगिकों का उत्पादन बढ़ता है, जो कीट क्षति, उनकी क्षमता (फिटनेस) और जीवित रहने की दर को कम करते हैं। कपास, सोयाबीन, धान, गेहूँ और ज्वार जैसी फसलों पर ग्रीनहाउस तथा खेत स्तर के अध्ययनों में एलिसिटर की प्रभावशीलता प्रदर्शित हुई है, जहाँ जैस्मोनिक अम्ल द्वारा कीट क्षति में 48% तक की कमी तथा परजीवी कीटों (जैसे ट्रायकोग्रामा प्रजाति) के आकर्षण में वृद्धि देखी गई। बाह्य रूप से किए गए एलिसिटर को अनुप्रयोग गैर–विषैले एवं पर्यावरण–अनुकूल संरक्षण प्रदान करते हैं, दीर्घकालिक प्रतिरोध को प्राइम करते हैं तथा स्पोडोप्टेरा फ्रुजीपेर्डा और हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा जैसे कीटों के विरुद्ध समेकित कीट प्रबंधन (आरपीएम) रणनीतियों में एकीकृत किए जा सकते हैं।

18

एकीकृत कृषि प्रणाली में मधुमक्खी पालन

रचना पाण्डे (वरिष्ठ वैज्ञानिक), रामकृष्णा जी. आय. (वरिष्ठ वैज्ञानिक),
जी. टी. बेहेरे (विभाग प्रमुख), विजय नामदेव वाघमारे (निदेशक)
भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर–441108 (महाराष्ट्र)

एकीकृत कृषि प्रणाली, संसाधनों के कुशल उपयोग के लिए सभी संभावित और व्यवहार्य कृषि उद्यमों का एकीकरण है, ताकि सतत और आर्थिक रूप से लाभकारी कृषि प्राप्त की जा सके। मधुमक्खी पालन एक ऐसी गतिविधि है जो आसानी से किसी भी अन्य कृषि गतिविधि का अभिन्न हिस्सा बन सकती है। यह एक कार्य है जिसके अनेक लाभ हैं। पालतू मधुमक्खियों का वैज्ञानिक अध्ययन जिसमें उनका पालन–पोषण, मौसमी प्रबंधन ताकि छत्ते के उत्पाद और परागण सेवाएँ अधिकतम प्राप्त हो सकें, शामिल है, मधुमक्खी पालन कहलाता है। यह एक ऐसा उद्योग है जहाँ सभी को लाभ होता है। पौधों को परागण और विविधता के रूप में मधुमक्खियों को उनके भोजन के रूप में और मनुष्यों को छत्ते के उत्पाद और फसल उपज के रूप में। इसमें कई विशेषताएँ हैं जो इसे खेती प्रणाली में अपनाने के लिए सर्वोत्तम विकल्प बनाती हैं।

परागण : परागण में परागकणों का पुंकेसर/परागकोष से स्त्रीबीजाण्ड (फूल का वह हिस्सा जहाँ परागकण गिरता है और फल/बीज का विकास शुरू होता है) तक स्थानांतरण शामिल है, जो निषेचन के बाद उचित फल और बीज के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। पृथ्वी पर केवल 5 प्रतिशत फूलों में स्वः–परागण की क्षमता होती है, जिसका अर्थ है कि 95 प्रतिशत को पराग के स्थानांतरण के लिए एक बाहरी कारक की आवश्यकता होती है, जो पर–परागण फसल के अंतर्गत आता है। प्रकृति में खाद्य आपूर्ति का एक–तिहाई हिस्सा पर–परागण से पूरा होता है, जिसमें वायु, जल और पशु शामिल हैं।

इनमें से लगभग 94 प्रतिशत की निर्भरता कीट परागण पर होती है। पर–परागित पौधों में एकलिंगी फूल होते हैं, जो या तो अलग–अलग पौधों पर या एक ही पौधे पर हो सकते हैं (जैसे कद्दू, कीवी आदि) परंतु परागकोष (नर) और स्त्रीबीजाण्ड (मादा) के परिपक्व होने का समय अलग होता है (जैसे आलूबुखारा, आड़ू, बादाम आदि)। परागण मधुमक्खी और फसल के बीच एक प्रकार का पारस्परिक संबंध है क्योंकि फसल को उचित निषेचन मिलता है और परागकण वाहक को भोजन मिलता है, मुख्यतः पराग (प्रोटीन स्रोत) और/या मधुरस (कार्बोहाइड्रेट स्रोत) और कभी–कभी तेल/रेजिन।

मधुमक्खी परागण : कीट परागकों में मधुमक्खियाँ सबसे महत्वपूर्ण परागकण समूह का प्रतिनिधित्व करती हैं। जिन क्षेत्रों में पौधों की अधिक विविधता होती है, वहाँ अधिक स्थानीय मधुमक्खियाँ परागवाहक के रूप में पाई जाती हैं। पारिस्थितिकी तंत्र में 80 प्रतिशत से अधिक पर–परागण मधुमक्खी द्वारा ही किया जाता है, इसलिए हमारे खाद्य आपूर्ति का एक–तिहाई हिस्सा उनके परागण सेवा पर निर्भर करता है (चित्र 1)। भारत में सभी छह महत्वपूर्ण मधुमक्खी प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जैसे कि एपिस डोरसाटा; छोटी मधुमक्खी, एपिस फ्लोरेआ (आंशिक रूप से पालतू) प्रजाति; यूरोपीय या इटालियन मधुमक्खी, एपिस मेलीफेरा (पालित); भारतीय मधुमक्खी, एपिस सेराना (पालित); हिमालयन मधुमक्खी, एपिस लेबोरियोसा, और काली बौनी मधुमक्खी, एपिस एन्ड्रेनिफॉर्मिस।



चित्र : 1 मधुमक्खियों द्वारा परागण

मधुमक्खियाँ एक कुशल परागकण के रूप में

इन मधुमक्खियों के कुछ व्यवहारिक विशेषताएँ और प्राकृतिक गुण होते हैं, जो नीचे उल्लेखित हैं।

- मधु मक्खियों का परिवार (रानी, ड्रोन, कार्यकर्ता) केवल अपने जीवित रहने के लिए मधुरस और पराग पर निर्भर होते हैं। एक पूरी कॉलोनी जिसमें 50,000 तक मधुमक्खी कार्यकर्ता हो सकते हैं, भोजन के लिए पराग और मधुरस पर निर्भर करते है।
- यह भोजन मधुमक्खियों के लार्वा के लिए भी है। क्योंकि उन्हें पूरे वर्ष पराग की आवश्यकता होती है।
- यह निरंतर पराग–मधुरस संग्रहक होते हैं; यदि मधुरस और पराग प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हों, तो मधुमक्खियाँ इसे भंडारण करना शुरू कर देते हैं ताकि इसे भोजन संकट काल (नजदीकी क्षेत्र में फूल न होने पर) में उपयोग किया जा सके, इसलिए इन्हें श्रेष्ठ वाहक माना जाता है।
- मधुमक्खियाँ मधुरस और पराग एकत्र करने के लिए खराब मौसम की परिस्थितियों में भी भोजन एकत्र करती हैं।
- मधुमक्खियों के पूरे शरीर पर बालों की उपस्थिति उन्हें परागकोष से परागकण झाड़ने में मदद करती है।
- श्रमिक मधुमक्खियों की संरचनात्मक अनुकूलन –पीछे की टांग में चपटा आकार होता है, जो लंबे और घने बालों से ढका होता है, और यह परागकण ले जाने के लिए पराग टोकरी बनाता है।
- मधुमक्खी के शरीर का आकार और लंबी मुखप्रणाली की लंबाई कई फसलों के लिए बहुत उपयुक्त होती है, जिससे वे परागकोष और स्त्रीबीजाण्ड तक जा सकती हैं और मधुररस चूस सकती हैं।
- टांगों पर उपस्थित छोटे और सख्त काँटे उन्हें छत्ते में शरीर के बालों से परागकण हटाने में मदद करते हैं।
- मधुमक्खियाँ सर्वोत्तम परागकणकर्ता होती हैं क्योंकि उनमें फूलों के प्रति वर्तनीय अनुकूलन होता है, जिसका अर्थ है कि मधुमक्खियाँ लगातार एक ही प्रकार के फूल पर ही जाती हैं।
- मधुमक्खियों के लिए परागण सेवा में कोई सीमा नहीं होती, क्योंकि वे कृषि, बागवानी और वानस्पतिक फसलों की विस्तृत विविधता के साथ–साथ खरपतवारों को भी परागित कर सकती हैं।
- मधुरस और पराग संग्रह करते समय मधुमक्खियाँ फूलों या पौधों को कोई क्षति नहीं पहुँचाती।
- लंबे समय तक काम करने की क्षमता और विभिन्न जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल होने की क्षमता उन्हें दूसरों के लिए प्रेरणा बनाती है।

पालतू मधुमक्खियाँ ही एकमात्र ऐसी परागकणकर्ता हैं जिन्हें किसान आवश्यकतानुसार किसी भी समय और किसी भी स्थान पर आसानी से उपलब्ध करा सकते है, यह एक स्थान से दूसरे स्थान पर कॉलोनी के स्थानांतरण द्वारा किया जाता है, जिसे स्थानांतरण मधुमक्खी पालन कहते हैं।

फसल उत्पादकता और परागण :

फसल की उत्पादकता कृषि संबंधी संसाधनों पर निर्भर करती है, जैसे अच्छी गुणवत्ता

के बीज/रोपण सामग्री, सिंचाई, खाद/उर्वरक और कीटनाशक। मिट्टी, पानी की तरह, परागण भी फसल उत्पादकता में एक नियामक कारक है, क्योंकि परागकणों की अनुपस्थिति में परागण नहीं होगा, जिस कारण कोई फल या बीज नहीं बनेगा।



चित्र 2 : सरसों के पुष्प पर मधुमक्खी द्वारा परागण

मधुमक्खी परागण के लाभ :

मधुमक्खी परागण से होने वाले लाभ विभिन्न फसल पारिस्थितिक तंत्रों जैसे खीरा, टमाटर, मिर्च, प्याज, मूली, गाजर, भिंडी, अजवाइन, कोल फसलें, ककड़ी वर्ग, ब्रोकली, बैंगन, शलगम, तरबूज और अन्य कई फसलों में कई शोधकर्ताओं द्वारा उत्कृष्ट रूप में सिद्ध और अध्ययनित किए गए हैं। संक्षेप में निम्नलिखित बिंदुओं को सार रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है :

- मधुमक्खियों द्वरा परागण फसलों की उपज बढ़ाता है।
- यह बीजों की संख्या और आकार में वृद्धि करता है। प्याज, पत्ता गोभी, फूलगोभी, तंबाकू, सन हेम्प, अल्फाल्फा, चौड़ी पत्ती वाली सरसों और क्लोवर जैसी सब्जियाँ भी बीज उत्पादन के लिए मधुमक्खियों पर निर्भर करती हैं (चित्र 2)।
- यह प्रारम्भिक चरण में फल झड़ने को कम करता है, जिससे फल के परिपक्व होने में वृद्धि होती है।
- खट्टे फलों में, मधुमक्खियों द्वारा परागण के बाद फल के रस और शर्करा की मात्रा में वृद्धि पाई गई।
- मधुमक्खियों द्वारा परागित फसलें अधिक पोषक और सुगंधित फल उत्पन्न करती हैं।

प्रयोगात्मक रूप से सिद्ध किया गया है कि मधुमक्खी परागण सूर्यमुखी के बीजों में तेल की मात्रा बढ़ाता है। मधुमक्खियों की अनुपलब्धता सीधे तौर पर फसलों की उपज को गुणात्मक और मात्रात्मक दोनों रूप में कम कर सकती है।

एकीकृत कृषि प्रणाली में मधुमक्खी पालन का प्रमोशन :

अपर्याप्त परागण कम उपज का मूल कारण है, इसलिए मधुमक्खी परागकों के संरक्षण और वृद्धि के माध्यम से परागकणों की संख्या बढ़ाई जा सकती है। वैज्ञानिक मधुमक्खी पालन को बढ़ावा देना इस दिशा में कार्य शुरू करने का सर्वोत्तम तरीका है। मधुमक्खी पालन में रुचि रखने वाले ग्राम–स्तरीय कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण दिया जा सकता है। मधुमक्खी पालन आय के अनेक स्रोत प्रदान करता है और एकीकृत कृषि प्रणाली के लिए सर्वश्रेष्ठ रूप से उपयुक्त है। किसी भी एकीकृत कृषि प्रणाली के एक घटक के रूप में मधुमक्खी पालन की उपयुक्तता को निम्नलिखित गुणों के आधार पर समझा जा सकता है।

- क्षेत्र में मधुमक्खी–पालन की स्थापना के लिए किसी विशेष या विस्तृत इमारत या संरचना की आवश्यकता नहीं होती है। यह एक खेत–आधारित कृषि उद्योग है, इसलिए इसे घर के पीछे के

आँगन, रसोई बागान और आसपास के खेतों में रखा जा सकता है।

- मधुमक्खी–पालन व्यक्तिगत या सामुदायिक स्तर पर प्रारम्भ किया जा सकता है।
- यह सभी प्रकार की कृषि प्रणालियों के लिए अनुकूल है क्योंकि इसमें भारी प्रारंभिक निवेश की आवश्यकता नहीं होती और बार–बार होने वाला व्यय भी बहुत कम होता है।
- मधुमक्खी–पालन भोजन के लिए अन्य एकीकृत कृषि घटकों से प्रतिस्पर्धा नहीं करता है, क्योंकि मधुमक्खियाँ फसलों, वृक्षों और खरपतवारों के फूलों के पराग व मधु पर निर्भर रहती हैं।
- मधुमक्खी–पालन को गाँव स्तर पर महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए आजीविका का एक प्रमुख कारक भी माना जाता है, क्योंकि इसमें निरंतर श्रम या किसी भारी शारीरिक कार्य की आवश्यकता नहीं होती।
- युवाओं को मधुमक्खी–पालन का प्रशिक्षण दिया जा सकता है और वे इसे अंशकालिक व्यवसाय के रूप में अपना सकते हैं।
- मधुमक्खी–पालन के लिए आवश्यक बक्सों, उपकरणों और सहायक सामग्रियों का निर्माण (फैब्रिकेशन) एकीकृत कृषि प्रणाली में नए रोजगार के अवसर उत्पन्न कर सकता है।
- एकीकृत कृषि प्रणाली में एक घटक के रूप में मधुमक्खी–पालन परागण के माध्यम से अधिक फल एवं बीज उत्पादन सुनिश्चित करेगा।
- खेत या बाग में बॉक्स रखने से किसानों की फसल–पद्धति और उनकी मौजूदा कृषि प्रथाओं में कोई बदलाव नहीं आता।
- किसान मधुमक्खियों से प्राप्त उत्पाद बेचकर प्रत्यक्ष लाभ पा सकते हैं और परागणकर्ताओं के रूप में अप्रत्यक्ष लाभ भी प्राप्त कर सकते हैं।
- प्रत्यक्ष लाभ
  - अ. किसान स्थानीय बाजार में शहद बेचकर अच्छा आय कमा सकते हैं।
  - आ. मोमबत्ती, वाटरप्रूफ शीट, वार्निश और कॉम्ब फाउंडेशन शीट आदि बनाने में मोम का वाणिज्यिक और औद्योगिक महत्व अच्छी तरह ज्ञात है।
  - इ. रॉयल जेली, मधुमक्खी विष, प्रोपोलिस और पराग अन्य छत्ता उत्पाद हैं जो आगे आय के स्रोत बन सकते हैं।
  - ई. किसान शहद निष्कर्षण, प्रसंस्करण और बॉटलिंग यूनिट खोल सकते हैं।
  - उ. मधुमक्खी–पालन के लिए आवश्यक बक्से और सहायक सामग्रियाँ बनाकर भी पैसा कमाया जा सकता है।
  - ऊ. आय का एक और स्रोत स्वस्थ कालोनियों और स्वस्थ रानी की बिक्री है।
- अप्रत्यक्ष लाभ : मधु–मक्खी परागण के कारण फसल उत्पादन में वृद्धि से 20–25 गुना अधिक आय प्राप्त होती है, जो शहद व मधुमोम जैसे छत्ता उत्पादों से मिलने वाली आय की तुलना में कहीं अधिक है।

फसलों के लिए अनुशंसित मधुमक्खी कालोनियाँ : बहुत सी कृषि एवं उद्यानिकी फसलें



चित्र : 3 मधुमक्खि का बक्सा

मधुमक्खी परागण से लाभान्वित होती हैं। पुष्पीय संरचना तथा पुष्पीय जीवविज्ञान, एन्थेसिस समय के अनुसार प्रत्येक फसल की मधुमक्खी बॉक्सों की भिन्न आवश्यकताएँ होती हैं (चित्र : 3)। कालोनियों

की एक आदर्श संख्या महत्वपूर्ण है क्योंकि कम संख्या लक्ष्य को पूरा नहीं करेगी और अधिक मधुमक्खियाँ प्रति इकाई क्षेत्र में अनावश्यक प्रतिस्पर्धा उत्पन्न करेंगी। स्वस्थ कालोनियाँ कमजोर कालोनियों की तुलना में बेहतर प्रदर्शन करेंगी क्योंकि मधुमक्खी कालोनियों का प्रदर्शन श्रमिक मधुमक्खियों की शक्ति तथा विद्यमान मौसम की स्थिति पर निर्भर करता है। कालोनियों की संख्या फसल के आधार पर 3–9 कालोनिया/हेक्टेयर तक भिन्न होती है, जिसे तालिका 3 में दर्शाया गया है।

तालिका 1 : विभिन्न फसलों में कोलोनियों की अनुशंसित संख्या

अनु. क्र.	फसल	कालोनियों की संख्या/हेक्टेयर (लगभग)
1	खीरा	6–20
2	प्याज / कीवी फल	8–10
3	गाजर	6
4	संतरा / कद्दू / बरसीम	4
5	खट्टे फल / सूरजमुखी / तरबूज / बादाम	2–5
6	लीची / स्ट्रॉबेरी	3–5
7	सेब / नाशपाती / आड़ू / आलूचा / अखरोट / कद्दूवर्गीय फसलें / फूलगोभी	2–3

परागण के लिए मधुमक्खियों का प्रबंधन : एकीकृत कृषि प्रणाली के अंतर्गत खेत विविधीकृत फसलों से भरा होगा, इसलिए हमें यह योजना बनानी होगी कि मधुमक्खियों को वर्ष भर किसी न किसी फसल से भोजन मिलता रहे। इसके लिए किसानों को मधुमक्खी फ्लोरा कैलेंडर विकसित करने की सलाह दी जाती है, जिसमें यह उल्लेख होगा कि कौन सी फसल और फूल किस महीने में उपलब्ध होंगे। मधुमक्खी फ्लोरा कैलेंडर की तैयारी एकीकृत कृषि प्रणाली के अंतर्गत मधुमक्खियों के लिए सतत भोजन आपूर्ति सुनिश्चित करती है। हालांकि, मधुमक्खी बॉक्स रखने से पहले, दौरान और बाद में कुछ मुख्य बिंदुओं पर विचार किया जाना चाहिए।

- **मधुमक्खियों की ऊर्जा बचाएँ :** हमेशा बॉक्सों को खेत के बहुत पास रखें क्योंकि इससे मधुमक्खियों की ऊर्जा बचती है और साथ ही कम समय में अधिक मधुमक्खियाँ खेत तक पहुँचती हैं। अधिक मधुमक्खियाँ मतलब अधिक परागण, जो अधिक उपज को दर्शाता है।
- **फूल आने की स्थिति :** खेत में 10 प्रतिशत फूल आने पर कालोनियों को लक्ष्य खेत में स्थानांतरित करने का उपयुक्त समय होता है।



चित्र : 4 मधुमक्खी की कॉलोनी में फ्रेम

यदि मधुमक्खी को फसल में पर्याप्त संख्या में फूल नहीं मिलते हैं, तो वह अन्य फसलों पर भोजन खोजने लगेगी, जो कि खरपतवार भी हो सकते हैं।

- **अनुशंसित कालोनियों की संख्या :** हमेशा विशिष्ट फसल के लिए अनुशंसित बॉक्सों का ही संदर्भ लें।
- **समय :** हमेशा मधुमक्खियों को रात में फसल पर स्थानांतरित करें क्योंकि वे अगले ही दिन अपनी गतिविधियाँ शुरू कर देंगी।
- **कालोनी की आबादी :** कालोनी में मधुमक्खियों की संख्या अच्छी होनी चाहिए, जिसमें 5–6 फ्रेम (चित्र : 4), सील किया हुआ ब्रूड (अंडे लारवा प्यूपा) और एक युवा मिलन कर चुकी रानी हो।
- **अतिरिक्त फ्रेम :** पराग के भंडारण और ताजे अंडे देने के लिए एक अतिरिक्त फ्रेम जोड़ें और शहद के भंडारण के लिए एक सुपर चौम्बर भी प्रदान करें।
- **आकर्षक पदार्थ का उपयोग :** किसान अधिक मधुमक्खियों को आकर्षित करने के लिए अनुशंसित आकर्षक पदार्थ का उपयोग कर सकते हैं। हालांकि, कुछ मामलों में शक्कर का घोल और गुड़ का घोल भी अनुशंसित है।
- **रासायनिक छिड़काव :** रसायनों के छिड़काव से बचने का प्रयास करें, और यदि आवश्यकता–आधारित हो तो छिड़काव देर शाम के बाद करें।

परागणकर्ताओं में गिरावट : विश्वभर में परागणकर्ता घट रहे हैं। इसका अर्थ है कि पारिस्थितिकी तंत्र में परागणकर्ताओं की संख्या कम हो रही है। कई बार कई जैविक और अजैविक कारक इस गिरावट के लिए जिम्मेदार होते हैं, जो नियंत्रण में नहीं होते। लेकिन दूसरी ओर, इसके पीछे कई सामाजिक–आर्थिक कारण भी हैं। जिनमें कुछ मुख्य बिंदु हैं – शहद के लिए मधुमक्खी–पालन से होनेवाली की अलाभप्रदता में कमी, बदलते फसल पैटर्न, छत्तों का नष्ट होना, वायु प्रदूषण, कीटनाशकों का दुरुपयोग आदि।

किसी भी पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य को वहाँ विद्यमान जैव–विविधता से मापा जा सकता है। परागणकर्ता पौधों की विविधता के संरक्षण में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। विविधीकृत परागणकर्ताओं की उपस्थिति स्वयं में एक स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र का बड़ा संकेतक है। भारत में 50 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र एंटोमोफिलस (कीट–परागित) फसलों के अंतर्गत आता है। एकीकृत कृषि प्रणाली में विविधीकृत फसल पारिस्थितिकी तंत्र होने के कारण यह कीट परागणकर्ताओं के संरक्षण के लिए सर्वोत्तम विकल्प है। कुछ अन्य सुरक्षित प्रथाएँ भी उपलब्ध हैं जो इस संरक्षण में सहायक हैं, जैसे पौध परागणकर्ता संबंधों को समझना, छत्ते के स्थान के रूप में प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र का संरक्षण, कृषि रसायनों का विवेकपूर्ण एवं आवश्यकता आधारित उपयोग, मानवीय हस्तक्षेप को न्यूनतम करना, मोनो क्रॉपिंग प्रणाली से बचना। एकीकृत कृषि प्रणाली को बढ़ती खाद्य माँग, आय में स्थिरता और किसानों के पोषण सुरक्षा जैसे मुद्दों के समाधान का प्रमुख घटक माना जाता है। ये मुद्दे सीधे तौर पर अच्छी फसल उपज और गुणवत्तापूर्ण उत्पादन से जुड़े हैं, जिन्हें उचित परागण द्वारा बनाए रखा जा सकता है। मधुमक्खी पालन एक उत्कृष्ट उद्यम है जो आर्थिक, पर्यावरण हितैषी है और परागण को बढ़ाने के साथ–साथ अतिरिक्त उचित आय भी प्रदान करता है। वैज्ञानिक मधुमक्खी पालन पर उचित प्रशिक्षण किसानों को बहुत प्रारंभिक अवस्था में समस्याओं का निदान करने में मदद कर सकता है। इसलिए वैज्ञानिक मधुमक्खी पालन को एकीकृत कृषि प्रणाली का अभिन्न घटक के रूप में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

19

डिजिटल युग में पढ़ने के आनंद को फिर से खोजना

स्वाती दीक्षित (मुख्य तकनीकी अधिकारी)
भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र–441108, भारत

पढ़ना इसलिए जरूरी है क्योंकि यह ज्ञान का विस्तार करता है, शब्दावली और समझ जैसे भाषा कौशलों में सुधार करता है, और कल्पनाशीलता और आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा देकर मन को उत्तेजित करता है। यह मानसिक लाभ भी प्रदान करता है जैसे तनाव और चिंता को कम करना, मनोरंजन का एक माध्यम प्रदान करना, और दुनिया और विभिन्न संस्कृतियों के प्रति सहानुभूति और व्यापक दृष्टिकोण विकसित करने में मदद करना।



चित्र 1 : पुस्तकालय में विद्यार्थी पढ़ते हुए

दुर्भाग्य से, पढ़ने की कला धीरे–धीरे गुमनामी में खोती जा रही है। सोशल मीडिया, स्ट्रीमिंग सेवाओं और वीडियो गेम्स के बढ़ते चलन के साथ, हम पाते हैं कि किताब पढ़ने (या सुनने) के साधारण आनंद में हम कम समय बिता पा रहे हैं। हालाँकि, पढ़ने के लाभ, चाहे किसी भी प्रारूप में हों, पहले की तरह ही प्रभावशाली और आवश्यक हैं, और हम पढ़ने के लाभों को प्राप्त करने के लिए अपनी आदतों को बदल सकते हैं।

पिछले कुछ दशकों में, हमने दुनिया भर में पढ़ने की आदतों में उल्लेखनीय गिरावट देखी है। सर्वेक्षणों और अध्ययनों से लगातार पता चलता है कि लोग, खासकर युवा पीढ़ी, अपने माता–पिता और

दादा–दादी की तुलना में कम पढ़ रहे हैं। इस गिरावट में योगदान देने वाले कई कारक हैं : स्मार्टफोन और अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का सर्वव्यापक उपयोग, सोशल मीडिया का आकर्षण, और मनोरंजन के दृश्य और इंटरैक्टिव रूपों पर बढ़ता जोर।

नेशनल एंडोमेंट फॉर द आर्ट्स (एनईए) के 2023 के एक सर्वेक्षण के अनुसार :



चित्र 2 : नवीन शोध का अद्यतन करते हुए

- 2022 में 53 प्रतिशत वयस्क किसी भी प्रकार की किताबें पढ़ते पाये गए, जबकि 2017 में यह संख्या 57.1 प्रतिशत थी।
- 2022 में कम से कम एक किताब (प्रिंट या इलेक्ट्रॉनिक) पढ़ने वाले वयस्कों का प्रतिशत 48.5 था, जो 2012 की तुलना में 6.1 प्रतिशत कम है।
- 2017 (45.2 प्रतिशत) की तुलना में 2022 में कम वयस्क साहित्य (उपन्यास, लघु कथाएँ, कविता, नाटक) है 37.6 प्रतिशत)। यह 17 प्रतिशत की गिरावट है, जो इस सर्वेक्षण के अनुसार अब तक का सबसे कम हिस्सा है।

हालाँकि तकनीक ने पढ़ने के चलन में कमी ला दी है, लेकिन यह इस शौक को फिर से जीवंत करने में भी मदद कर सकती है। हम # बुक्स्टाग्राम (जैसे इंस्टाग्राम), # बुकटॉक (टिकटॉक) और यूट्यूब पर पढ़ने के पुनर्जागरण का एक दौर देख रहे हैं। हर उम्र के लोग पढ़ने के आनंद और लाभों को फिर से पा रहे हैं, चाहे वह ऑडियोबुक के माध्यम से हो, मुद्रित पुस्तकों के माध्यम से हो या ई–बुक्स के माध्यम से। वास्तव में, प्रत्येक प्रारूप अपने अनूठे लाभ प्रदान करता है जो अलग–अलग प्राथमिकताओं और जीवनशैली के अनुरूप होते हैं। इस बात पर बहस छिड़ी हुई है कि क्या किताब सुनना "पढ़ना माना जाएगा"। रिकॉर्ड के लिए, ब्लूम्सबर्ग विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बेथ ए. रोगोव्स्की के नेतृत्व में 2016 में किए गए एक अध्ययन में पढ़ने के तरीके के आधार पर समझ और धारणा में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं पाया गया : "हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि औसत,

कॉलेज–शिक्षित, मातृभाषा अंग्रेजी पढ़ने वाले पाठक के लिए, प्रस्तुति के तरीके की परवाह किए बिना पाठ की तुलनीय समझ और धारणा होती है। अतिरिक्त विश्लेषण से पता चला है कि प्रत्येक स्थिति में पुरुषों और महिलाओं दोनों ने समान मात्रा में जानकारी याद की, चाहे उन्होंने ऑडियोबुक सुनी हो, इलेक्ट्रॉनिक टैबलेट से पढ़ा हो, या दोनों एक साथ सुने और पढ़े हों।"

मुद्रित पुस्तकों का आनंद : मुद्रित पुस्तकें, अपने स्पर्श और स्याही व कागज की विशिष्ट सुगंध के साथ, कई पाठकों के दिलों में एक विशेष स्थान रखती हैं। किसी भौतिक पुस्तक के पन्ने पलटने, छोटे–छोटे चिपचिपे टैग से अंशों को चिह्नित करने और किताबों की अलमारी में रखी अपनी पसंदीदा पुस्तकों को प्रदर्शित करने में एक स्वाभाविक संतुष्टि होती है। सौंदर्यपरक आकर्षण के अलावा, मुद्रित पुस्तकें स्क्रीन और डिजिटल विकर्षणों से एक विराम प्रदान करती हैं, जिससे पढ़ने का एक अधिक गहन और केंद्रित अनुभव प्राप्त होता है।

ई–पुस्तकों की सुविधा : अपनी सुवाह्यता और सुगमता के साथ, ई–पुस्तकों ने डिजिटल युग में हमारे पढ़ने के तरीके में क्रांति ला दी है। एक बटन के स्पर्श पर उपलब्ध शीर्षकों के विशाल चयन के साथ, ई–पुस्तकें उन पाठकों के लिए अद्वितीय सुविधा प्रदान करती हैं, जो अपनी पूरी लाइब्रेरी को अपनी हथेली में रखना पसंद करते हैं। इसके अलावा, समायोज्य अक्षरों के आकार, अंतर्निहित शब्दकोश और एकीकृत नोट लेने जैसी सुविधाएँ ई–पुस्तकों को विशेष रूप से उन छात्रों और उत्साही पाठकों के लिए आकर्षक बनाती हैं जो कार्यक्षमता और बहुमुखी प्रतिभा को महत्व देते हैं।

ऑडियोबुक के लाभ : हाल के वर्षों में ऑडियोबुक की लोकप्रियता में तेजी से वृद्धि हुई है, जिससे पाठकों को चलते–फिरते किताबें पढ़ने का एक सुविधाजनक तरीका मिल गया है। चाहे काम पर आना–जाना हो, जिम में कसरत करनी हो या घर के काम करने हों, ऑडियोबुक एक ऐसा हाथों से मुक्त, अनुभव प्रदान करती हैं जिससे श्रोता बिना अपना पूरा ध्यान पढ़ने पर लगाए, सामग्री से जुड़ सकते हैं। इसके अलावा, ऑडियोबुक दृष्टिबाधित या सीखने की अक्षमता वाले लोगों के लिए भी सुलभ हैं, जिससे साहित्य की दुनिया व्यापक दर्शकों के लिए खुलती है।



चित्र 3 : कम्प्यूटर एवं इंटरनेट के लाभार्थी

पढ़ने के सार्वभौमिक लाभ : पाठ का प्रारूप चाहे जो भी हो, पढ़ने का कार्य मनोरंजन से परे कई लाभ प्रदान करता है। पढ़ना मन को उत्तेजित करता है, संज्ञानात्मक कार्य में सुधार करता है और आलोचनात्मक सोच कौशल को बढ़ाता है। यह पाठकों को विविध दृष्टिकोणों, संस्कृतियों और विचारों से परिचित कराता है, जिससे सहानुभूति और समझ बढ़ती है। इसके अलावा, अध्ययनों से पता चला है कि नियमित रूप से पढ़ने से तनाव कम हो सकता है, नींद की गुणवत्ता में सुधार हो सकता है और यहाँ तक कि जीवनकाल भी बढ़ सकता है।

पढ़ना आपको अधिक सहानुभूतिपूर्ण बनाता है : न्यू स्कूल फॉर सोशल रिसर्च (न्यूयॉर्क) ने एक अध्ययन प्रकाशित किया जिसमें बताया गया कि साहित्यिक कथाएँ पढ़ने से सहानुभूति का स्तर बढ़ता है, जो एक दयालु इंसान के रूप में हमारे विकास का एक महत्वपूर्ण कारक है। एनईए की रेबेका ग्रॉस कहती हैं, 'जैसे–जैसे हम पात्रों के

व्यवहार और विचारों के बारे में पढ़ते हैं, हम उनके अनुभवों और आंतरिक जीवन को समझने और उसकी सराहना करने लगते हैं, भले ही वे हमारे अपने अनुभवों और आंतरिक जीवन से बिल्कुल अलग हों।'

मानसिक क्षीणता से बचाव में सहायक : शोध से पता चलता है कि पढ़ने जैसी बौद्धिक रूप से उत्तेजक गतिविधियों में आजीवन संलग्न रहने से उम्र बढ़ने के साथ स्मृति हानि और संज्ञानात्मक क्षमता में होने वाली गिरावट धीमी हो सकती है। शिकागो स्थित रश यूनिवर्सिटी मेडिकल सेंटर के एक अध्ययन में पाया गया कि पढ़ने से मनोभ्रंश/मानसिक क्षीणता की शुरुआत में पाँच साल तक की देरी हो सकती है। रिपोर्ट में यह भी पाया गया कि जो लोग 70 और 80 की उम्र में पढ़ना और अन्य मन को सक्रिय रखने वाली गतिविधियों में भाग लेना शुरू करते हैं, उन्हें भी इसके लाभ मिलते हैं : अपने मस्तिष्क को स्वस्थ रखने में मदद के लिए मन का व्यायाम किसी भी उम्र में किया जा सकता है। आप कब शुरू कर सकते हैं, इसकी कोई सीमा नहीं है। 80 की उम्र के लोग भी इस प्रकार के मन के व्यायाम से लाभ उठा सकते हैं

पढ़ना तनाव कम करता है : अमेरिकन साइकोलॉजिकल एसोसिएशन (एपीए) द्वारा 2022 में किए गए एक सर्वेक्षण में पाया गया कि :

- 27 प्रतिशत प्रतिभागियों ने कहा कि वे ज्यादातर दिन इतने तनाव में रहते हैं कि वे काम नहीं कर पाते।
- 18–34 वर्ष की महिलाओं में पुरुषों या उससे अधिक उम्र की महिलाओं की तुलना में अधिक तनाव की स्थिति पायी गयी।
- 76 प्रतिशत प्रतिभागियों ने बताया कि तनाव ने उनके शारीरिक स्वास्थ्य को प्रभावित किया।

ससेक्स विश्वविद्यालय में वर्ष 2009 में किए गए माइंडलैब इंटरनेशनल के एक अध्ययन के अनुसार, किताब पढ़ने के लाभ समुद्र तट पर छुट्टी मनाने के समान हैं पढ़ना तनाव के स्तर को 68 प्रतिशत तक कम करता है और यह टहलने, चाय पीने या वीडियो गेम खेलने की तुलना में अधिक प्रभावी विश्राम तकनीक है। संरचित कथाओं की बदौलत उपन्यास तनावपूर्ण और अव्यवस्थित मन को व्यवस्थित करने में मदद कर सकते हैं। उपन्यासकार जेसी बर्टन कहती हैं, "खुद को किसी ऐसे जटिल कथानक में शामिल कर लेना जिसे आप सुलझाने की कोशिश कर सकते हैं, अपने ही मन की हलचल से बाहर निकलने जैसा है।"

पढ़ना स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है : सोशल साइंस एंड मेडिसिन जर्नल के वर्ष 2016 के एक अध्ययन में पाया गया कि प्रतिदिन कम से कम 30 मिनट पढ़ने से प्रतिभागियों की आयु औसतन दो वर्ष बढ़ सकती है। जो लोग सप्ताह में तीन घंटे से अधिक पढ़ते हैं, उन्हें पत्रिकाएँ और समाचार पत्र पढ़ने वालों की तुलना में लाभ हुआ। ब्रिटेन की सबसे बड़ी पठन संस्था, बुकट्रस्ट ने 1500 वयस्कों पर एक सर्वेक्षण किया और पाया कि जो लोग नियमित रूप से किताबें पढ़ते हैं, वे जीवन से अधिक संतुष्ट, सामान्यतः अधिक खुश रहते हैं, और उन्हें यह महसूस होने की अधिक संभावना होती है कि उन्होंने जीवन में जो किया वह सार्थक था।

पढ़ने से आपकी नींद बेहतर होती है : सोने से पहले पढ़ने से आपको बेहतर नींद लेने में मदद मिल सकती है, खासकर अगर यह आपकी सोने से पहले की दिनचर्या का हिस्सा है। यह तनाव, चिंता और मांसपेशियों के तनाव को कम करने में मदद करता है, जिससे आप चिंताजनक विचारों को दूर करके आराम और तनावमुक्त हो सकते हैं। एक अध्ययन में पाया गया कि 22 प्रतिशत प्रतिभागियों ने सोने से पहले पढ़कर अपनी नींद में सुधार किया। एक नियमित शाम की दिनचर्या के हिस्से के रूप में, यह दिमाग को बिस्तर और पढ़ने को नींद से जोड़ने में मदद करता है। हालाँकि, अगर आप इस तरह से पढ़ते

हैं, तो सुनिश्चित करें कि आप एक मुद्रित पुस्तक या ई–रीडर का उपयोग करें जिसमें बैकलिट न हो। स्मार्टफोन और टैबलेट की नीली रोशनी मेलाटोनिन के उत्पादन को बाधित कर सकती है, जिससे नींद आने में कठिनाई हो सकती है।

पढ़ना आपको कम अकेला महसूस कराता है : पढ़ने से हमें अपनी जैसी परिस्थितियों में दूसरों के साथ जुड़ने का मौका मिलता है, जिससे हमें कम अकेलापन महसूस होता है। यह युवाओं के लिए खास तौर पर अच्छा है। बिब्लियोथेरेपिस्ट एला बर्थौड का कहना है कि लेखक बच्चों को "उन मुद्दों के बारे में बात करने में सबसे ज्यादा मददगार हो सकते हैं जो उनके जीवन में हो रहे हैं, लेकिन वे उन्हें व्यक्त नहीं कर पाए हैं। सच में लगता है कि एक किताब हमारे भीतर जमे हुए समुद्र को तोड़ने वाली कुल्हाड़ी हो सकती है, जैसा प्रसिद्ध विदेशी उपन्यासकार काफ्का ने कहा था, और यह किसी भी उम्र में सच है।

पढ़ने की आदत डालना : सोशल मीडिया पर 'डूमस्क्रॉलिंग' या नेटफ्लिक्स पर नए सीरीज देखने में खो जाना इतना आसान है कि पढ़ने की आदत डालना मुश्किल लग सकता है। इस आदत को विकसित करने के लिए दृढ़ संकल्प और अनुशासन की जरूरत होती है, इसलिए धीरे–धीरे शुरुआत करें। जिसमें से कुछ सुझाव निम्नवत् हैं।

- **अपने लिए उपयुक्त फॉर्मेट चुनें :** आपको अपनी परिस्थितियों के अनुसार अलग–अलग फॉर्मेट पसंद आ सकते हैं। अगर आप काम पर जाने के लिए सार्वजनिक परिवहन का इस्तेमाल करते हैं, तो आप बड़ी किताबें ढोने के बजाय ई–बुक्स पसंद कर सकते हैं। अगर आप हफ्ते में कई घंटे गाड़ी चलाते हैं तो सीडी पर ऑडियोबुक्स आजमाएँ या ऐसे ऐप्स का इस्तेमाल करें जिन्हें आप ब्लूटूथ तकनीक के जरिए अपने फोन पर एक्सेस कर सकते हैं। अगर आप ज्यादातर घर पर पढ़ते हैं, तो आपका पसंदीदा फॉर्मेट पुराने जमाने की छपी हुई किताबें हो सकती हैं।

- **उचित पढ़ने के लक्ष्य निर्धारित करें :** आकांक्षात्मक लक्ष्य निर्धारित करें, लेकिन उन्हें लगभग असंभव न बनाएँ। समझें कि आपके पास पढ़ने के लिए कितना समय है और लक्ष्य निर्धारण के लिए इसे थोड़ा बढ़ाएँ। याद रखें कि दिन में 10 मिनट भी समय के साथ जुड़ते हैं और अगर आप कम पढ़ते हैं तो यह एक सुधार है।

- **अपनी पढ़ने की आदत को समयबद्ध करें :** अन्य आदतों की तरह, समयबद्धता आपको इसे करने के लिए प्रेरित करती है। आपके लिए कौन सा समय और स्थान सबसे उपयुक्त है? कुछ लोग सुबह का समय पसंद करते हैं, इससे पहले कि सब कुछ अस्त–व्यस्त हो जाए। कुछ लोग अपने लंच ब्रेक के दौरान पढ़ सकते हैं। हम में से कई लोग दिन भर की थकान मिटाने के लिए रात में पढ़ते हैं। पता लगाएँ कि आपके लिए क्या सबसे उपयुक्त है और अपनी किताब को उसी स्थान पर रखना सुनिश्चित करें।

- **एक 'पढ़ने के लिए' सूची बनाएँ :** अगर आपने यह तय नहीं किया है कि आपकी पढ़ने की सूची में अगली किताब कौन–सी होगी, तो लंबे समय तक कुछ भी न पढ़ना बहुत आसान हो जाता है। आज इतनी अधिक किताबें उपलब्ध हैं और लगातार नई किताबें प्रकाशित हो रही हैं कि चयन करना कई बार कठिन और भारी लग सकता है। ऐसे में आप अपने दोस्तों और परिवार से पूछ सकते हैं कि वे क्या पढ़ रहे हैं, बेस्ट–सेलर सूचियाँ देख सकते हैं, और यह जानने की कोशिश कर सकते हैं कि आपको किस प्रकार की नई किताबें पसंद आ सकती हैं। साथ ही गुडरीड्स, विभिन्न पत्रिकाएँ और समाचार–पत्रों में प्रकाशित पुस्तक–समालोचनाओं का उपयोग करके अपनी पढ़ने की सूची तैयार कर सकते हैं।

- **पढ़ने में आने वाली बाधाओं को पहचानें और दूर करें :** सोचें कि अतीत में आपको पढ़ने की आदत डालने से किस वजह से रोका गया। पर्याप्त समय नहीं, आसानी से ध्यान भटक जाता है, परिवार की बहुत सारी जरूरतें, पता लगाएँ कि आपको क्या रोक रहा है ताकि आप समाधान ढूँढ सकें।

- **अपनी पढ़ने की प्रगति पर नजर रखें :** टीबीआर(टू बी रीड) सूची की तरह, आप इसे कई तरीकों से कर सकते हैं : ऐप्स, पेपर, जर्नल, नोटपैड, जो भी आपके लिए आसान हो। आप पढ़े गए पृष्ठों की संख्या, सुने या पढ़े गए मिनटों की संख्या, महीने में कितने दिन पढ़ते हैं, आदि पर नजर रख सकते हैं।

- **अन्य पाठका से जुड़ें :** सामुदायिक मंच, दोस्त, व्यक्तिगत या वर्चुअल बुक क्लब – इस डिजिटल युग में हमारे पास कई विकल्प उपलब्ध हैं। आपको #बुकटॉक और #बुकस्टाग्राम पर भी प्रेरणा और सौहार्द मिल सकता है, लेकिन इसे धीरे–धीरे करें क्योंकि ये अनुभवी पाठकों के लिए भी जानकारी का अतिभार पैदा कर सकते हैं।



चित्र 4 : सामूहिक अध्ययन

तो, आइए! हम सब मिलकर पढ़ाई करें, पढ़ने की आदत डालने का यह एक बेहतरीन समय है। याद रखें, दिन में बस कुछ मिनट ही बहुत बड़ा बदलाव ला सकते हैं, और किसी को भी यह न कहने दें कि 'ठीक से' पढ़ने का सिर्फ एक ही तरीका है। हालाँकि तकनीक ने हमें पढ़ने से दूर रखने के लिए कई तरह के विकर्षण पैदा किए हैं, लेकिन यह हमें वापस पढ़ने के लिए प्रेरित भी कर सकती है या पहली बार आनंद के लिए पढ़ना शुरू करने में भी मदद कर सकती है। यह स्कूल जैसा नहीं है, जहाँ आपको कुछ खास किताबें पढ़ने के लिए कहा जाता था। जो आपको पसंद है उसे पढ़ें और आप पाएंगे कि आपका तनाव कम हो रहा है, आपकी सामान्य सेहत में सुधार हो रहा है, और आपकी सहानुभूति बढ़ रही है। पढ़ने को पूरे दिल से अपनाएँ और इसके अनगिनत फायदों का आनंद लें।

20

प्रकृति मानव और कृषि

रचना देशमुख (तकनीकी अधिकारी),
ए. मणिकंडन (वरिष्ठ वैज्ञानिक), पूजा वर्मा (वरिष्ठ वैज्ञानिक)
अर्जुन तायडे (विभाग प्रमुख)
भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर, महाराष्ट्र–441108, भारत

हमारी वसुंधरा की उमर लगभग 4.5 अरब वर्ष है, और प्रकृति का जन्म पृथ्वी से भी पहले हुआ, हमारी धरा स्वयं प्रकृति का एक छोटा सा हिस्सा है। जैसा की सभी को ज्ञात है, इस सूर्य मंडल में कई अनगिनत ग्रह, नक्षत्र, तारे है जिस में पृथ्वी भी शामिल है और वह सोलार नेब्युला से निर्मित हुई है। वह एक तपता गोला थी, धीरे–धीरे सभी वायु ठंडे होते गये और भाप बनकर वातावरण में विलीन हो गये, जब तपता गोला ठंडा हुआ तब जाकर पृथ्वी का आज का रूप तैयार हुआ है।

प्रकृति के पहलु : क्या सिर्फ वसुंधरा ही प्रकृति है? प्रकृति पृथ्वी तक ही सीमित है? यह सृष्टि पांच तत्त्वों से बनी है। जल, अग्नि, वायु, आकाश और पृथ्वी। क्या प्रकृति हवा, पानी, धरती, मिट्टी, पेड–पौधे, जंगल, सौर मंडल, आकाशगंगा ये प्रकृति के घटक नही है? हां, सब मिलकर प्रकृति बनती है प्रकृति से हम है और हम से ही जीवन का आधार।

प्रकृति के पहलुओं में नदियाँ तालाब समंदर, झील, झरने सब जलप्रवाह तथा छोटे से छोटे पौधे से लेकर विशाल काय हजारों लाखों साल पुराने जंगल भी है और हमारी धरा का एक–एक जीव जंतु प्राणी पक्षी मानव प्रकृति है। ये सृष्टी प्रकृति के पाँच तत्वों से बनी है जैसे जल, वायु, अग्नि, आकाश और पृथ्वी। वातावरण या मौसम, सौर मंडल एवं हर जीवित वस्तु याने पशु, पक्षी, पेड़–भी उसके घटक है। इस धरती पर सब से पहले एक जीव अमीबा जन्मा और फिर वहीं से पृथ्वी पर जीवन निर्माण हुआ। धरती से ज्यादा समंदर की गहराई में विविध और अनेक जीव जंतु समाये है कई किस्म की मछलियाँ प्रवाल जो की बहुत ही सुंदर रंगी बिरंगी और आकर्षक लगती है। समुद्र की जीवसृष्टी धरती के उपर की जीवसृष्टी से कई अधिक जटिल है।



चित्र 1 : प्रकृति के पहलु

प्रकृति और मानव का संगम : प्रकृति से ही मानव का उद्‌गम हुआ है, जीवन की शुरुआत ही ऑक्सीजन से होती है, प्रकृति से मानव बना है मानव से प्रकृति नहीं, मानव प्रथम अन्न के लिए सृष्टि पर निर्भर है। शिकार करना, मछली पकड़ने से मानव का सम्बन्ध प्रकृति से शुरू हुआ। मनुष्य सदियों से जंगल, जंगली प्राणी के शिकार या मछली पकड़ने के लिये भटकता रहता था।

भटकने वाला मानव अब झोपड़ी बना के रहने लगा वह गांव बसाने लगा। जैसे–जैसे हमारी जरूरतें बढ़ती गयी हम आगे बढ़े घर, गांव शहर बसाने लगे, और फिर वही से शुरुआत हुई एक सुंदर जीवन कि, मानव अब एक जगह रुकना सीख गया था। उसे ठहरना आ गया। मानव किसी नदी या जल स्त्रोत के किनारे रहने लगा। इसी का कारण विश्व कि सबसे पुरानी नादियाँ जैसे, नाइल, अमेजन और सिंधू की किनारो पर सभ्यता का निर्माण हुआ।

सभ्यताएँ सबसे पहले मेसोपोटामिया (जो अब इराक है) और बाद में मिस्र में दिखाई दीं। सभ्यताएँ सिंधु घाटी में लगभग 2500 ईसा पूर्व, चीन में लगभग 1500 ईसा पूर्व और मध्य अमेरिका (जो अब मेक्सिको है) में लगभग 1200 ईसा पूर्व तक पनपी। सभ्यताएँ अंततः अंटार्कटिका को छोड़कर हर महाद्वीप पर विकसित हुईं। इसमें किसान, मछुआरे और व्यापारी शामिल हैं, जो नियमित रूप से शहरी निवासियों को अपने सामान और सेवाएँ बेचते हैं। उदाहरण के लिए, मेक्सिको में टियोतिहुआकन का विशाल शहरी केंद्र, 300 और 600 ई.पू. के बीच 200,000 निवासियों का था। सभी सभ्यताओं की कुछ विशेषताएं होती हैं। इनमें शामिल हैं बड़े जनसंख्या केंद्र; स्मारकीय वास्तुकला और अनूठी कला शैलियाँ; साझा संचार रणनीतियाँ; क्षेत्रों के प्रशासन के लिए प्रणालियाँ; श्रम का जटिल विभाजन और लोगों का सामाजिक एवं आर्थिक वर्गों में विभाजन। शहरी बस्तियों, शहरों का विकास सभ्यता की प्राथमिक विशेषता है। सभ्यता को परिभाषित करने वाली अन्य विशेषताएँ शहरीकरण के इर्द–गिर्द निर्मित होती हैं।



चित्र 2 : मानव एवं कृषि

हमारे जीवन का आधार प्रकृति है इसकी छवि हमें अपनी सभ्यताओं में दिखती है। मनुष्य प्रकृति को ही भगवान मानता था जैसे रोम और कई पश्चिमी देशों मे अग्नि की पूजा की जाती है या

सूर्य देवता को अपना भगवान माना जाता है। ठीक उसी प्रकार हमारी संस्कृती में प्रकृति का महत्त्व है। हम अपने हर भगवान को किसी प्राणी, पक्षी या प्रकृति से जोड़ते है, हमारे त्यौहार ऋतु के हिसाब से सजाये गये है वसंत ऋतु में वसंत पंचमी, बरसात में सावन, सूरज जब दक्षिण से उत्तर की और जाने लगता है तब मक र संक्रांति या उत्तरायण। इसी प्रकार हर देवता का कोई ना कोई वाहन पशु या प्राणी जैसे कार्तिक भगवान का मोर, दुर्गा माँ का शेर, और गणेश भगवान भी हाथी का रूप है। सदैव से प्रकृति और मानव एक दूसरे के साथ हाथ में हाथ मिलाकर चल रहे है और प्रकृति का हमारे दैनंदिन जीवन मे भी एक गहरा प्रभाव हैं। जैसे की इस लेख में बताया है की देवी–देवताऐं, त्यौहार, खान–पान, जीवनशैली यह सब प्रकृति से जुड़े है।

कृषि का विकास एवं व्यापार : इजिप्त या जिसे मिस्त्र के नाम से जाना जाता है वहा नाइल नदी के किनारे भारतीय उपखण्ड के सिंधु के खोरे में कृषि का विकास हुआ, और फिर खेती करते करते अलग–अलग जगह अलग–अलग संस्कृति या विभिन्न सभ्यताओं का उद्‌गम हुआ। भारतीय उप महाखंड मे कपास की खेती ने 5000 हजार साल पहले जन्म लिया, यहाँ के मसालों कि खुशबू से यूरोप के नाविक, व्यापारी भारत कि ओर खींचे चले आये और सारी दुनिया में अपने देश का कपास और मसाले फैला दिये। आज के इजिप्ति या पुरातन मिस्त्र देश से अरबी घोड़े, गधे और बकरी आदि जानवरों का भी व्यापार होता था। वहीं पश्चिमी देशों से एशिया खंड जिस में मुख्य तौर पर चीन, भारत और जपान जैसे देश शामिल है, उनकी चाय और रेशम का व्यापार पश्चिमी देशों कि औजारों और वहाँ उगाये जाने वाले फल एवं फूलों से होने लगा। धीरे–धीरे विज्ञान कृषि में भी प्रगति करता गया और खेती में नये–नये प्रयोग होते गये। हरितक्रांति की वजह से दुनिया भर में उत्पादकता बढ़ी अन्न सुरक्षा सुनिश्चित हुई, आज कृषि में भी डिजिटल क्रांति हुई है जैसे फसल को कितना खाद देना या रोग और कीटनाशक का छिड़काव करना ए.आय. की मदद से किया जा सकता है, अतः पूरे विश्व में कृषि की प्रगति होती गयी।

गाय, बैल, लकड़ी और लोहे के औजारों से शुरू हुई खेती आज डिजिटल हो गयी है। आज के युग में हम कृषि में डिजिटल तरीके अपनाने लग गये है इसका उदाहरण हाल ही में जगह–जगह भारत सरकार द्वारा किसानों की खेती मे ड्रोन का उपयोग करने का प्रात्यक्षिक दिया जाना और उसे प्रोत्साहन देना, भारत सरकार का मिशन के अंतर्गत है।

मिट्‌टी का स्वास्थ्य रासयनिक खाद और हर साल लागतार एक ही फसल लेने से खराब हो गया है। अतः यह ध्यान रखना है कि जितना लिया उतना वापस भी तो करना है। प्रकृति से हम है हमसे प्रकृति नहीं है और यह बात समझकर मानव को प्रकृति का सम्मान करना होगा, रासयनिक खेती से हुए विपरीत परिणामो को संतुलित करने हेतु सेंद्रिय और प्राकृतिक खेती का विकल्प अपनाना होगा।

सेंद्रिय खेती : जैसा की हम सभी कृषि में काम करने वाले और कृषि संबंधित किशोर कृषि संबंधित कार्य मे कार्यरत रहने वाले सभी को पता है की इसमें रासायनिक खाद जैसे यूरिया, डीएपी इत्यादी का उपयोग नहीं किया जाता। उसके बजाय सेंद्रिय पद्धती से बनाया गया खाद, केचुवा खाद या कम्पोस्ट इत्यादि का उपयोग होता है। ये पद्धतियाँ प्रकृति अनुकूल है।



चित्र 3 : सेंद्रिय खेती

प्राकृतिक खेती : खेत पर या किसान के घर मे जो सामान उपलब्ध है उसका इस्तेमाल कर बनाये गये साधनों एवं खाद का इस प्रकार कि खेती मे उपयोग होता है, जैसे जीवामृत, घनजीवामृत, दशपर्णी अर्क, ब्रम्हास्त्र इत्यादी। इसे बनाने कि विधि और उपयोग का विवरण पुस्तकों द्वारा या इन्टरनेट के माध्यम से अर्जित किया जा सकता है।



चित्र 4 प्राकृतिक खेती

प्रकृति का शोषण एवं दुष्परिणाम : प्रकृति हमारे यानी की मानव और अन्य जीव–जंतु, जंगल, पेड़–पौधे प्राणी इन मे कोई अंतर नहीं करती है, किंतु मनुष्य ने प्रकृति का ह्रास किया है और उसका अतिरिक्त शोषण भी किया है। उस वजह से प्रकृति अपना रौद्ररूप दिखाकर खुद संतुलन बनाये रखती है। जैसे हम सभी जानते है 2020 में आई हुई कोरोना महामारी उसी तरह हर सौ साल में पूरे विश्व में अलग अलग प्रकार के महामारियाँ, रोग या कोई ना कोई प्रलय आ चुके है यह सब हमे संकेत देती है कि हमे सृष्टि का सम्मान करना है।

दुनिया के बड़े प्रकृति के प्रकोप :

- 526 एंटिओक भूकंप बीजान्टिन साम्राज्य (अब हयात/तुर्की) मई
- 1139 गांजा भूकंप सेल्जुक साम्राज्य (वर्तमान अजरबैजान) 30 सितंबर
- 1737 कलकत्ता चक्रवात पश्चिम बंगाल और बांग्लादेश अक्टूबर
- 1839 कोरिंगा साइक्लोन आंध्र प्रदेश, भारत 25 नवंबर
- 1887 येलो रिवर फ्लड सितंबर
- 1920 हियुआन भूकंप चीन 16 दिसंबर
- 1931 चीन जुलाई
- 1970 भोला साइक्लोन ईस्ट पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) 13 नवंबर
- 1976 तांगशान भूकंप 28 जुलाई,
- 2010 हैती भूकंप हैती 12 जनवरी,
- 2001 गुजरात भूकंप, भारत 26 जनवरी।
- 2002 हिंदू कुश भूकंप अफगानिस्तान 25 मार्च।
- 2003 यूरोपीय हीट वेव यूरोप जुलाई – अगस्त।
- 2004 हिंद महासागर भूकंप और सुनामी इंडोनेशिया, श्रीलंका, भारत, थाईलैंड, मालदीव, सोमालिया भूकंप, 26 दिसंबर
- 2005 कश्मीर भूकंप भारत, पाकिस्तान भूकंप 8 अक्टूबर।
- 2006 योग्याकार्टा भूकंप इंडोनेशिया 26 मई।
- 2007 सिद्र चक्रवात बांग्लादेश, भारत उष्णकटिबंधीय चक्रवात 11–16 नवंबर ।
- 2008 साइक्लोन नरगिस म्यांमार 27 अप्रैल – 3 मई।
- 2009 सुमात्रा भूकंप इंडोनेशिया 30 सितंबर।
- 2010 हैती भूकंप हैती 12 जनवरी।
- 2011 तहोकू भूकंप और सुनामी जापान, 11 मार्च।
- 2012 टाइफून बोफा फिलीपींस उष्णकटिबंधीय चक्रवात 4 दिसंबर।
- 2013 टाइफून हैयान फिलीपींस, वियतनाम, चीन 8 नवंबर – 10।
- 2014 बदख्शान ने 2 मई को अफगानिस्तान भूस्खलन ।

- 2015 नेपाल भूकंप नेपाल, भारत भूकंप 25 अप्रैल।
- 2016 इंडियन हीट वेव इंडिया हीट वेव अप्रैल – मई।
- 2017 तूफान मारिया प्यूर्टो रिको, डोमिनिका ट्रॉपिकल साइक्लोन 19–21सितंबर
- सुलावेसी भूकंप और सुनामी इंडोनेशिया 28 सितंबर।
- 2019 यूरोपीय हीट वेव्स यूरोप जून – जुलाई।
- 2020 दक्षिण एशियाई बाढ़ अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भारत, नेपाल, पाकिस्तान, श्रीलंका मई – अक्टूबर।
- 2020 हैती भूकंप हैती 14 अगस्त।
- 2022 यूरोपीय हीटवेव्स यूरोप 12 जून – 12 सितंबर।
- 2023 तुर्की–सीरिया भूकंप तुर्की, सीरिया 6 फरवरी।
- 2024 भारत बाढ़ भारत 26 मई – 30 सितंबर।
- 2025 म्यांनमार भूकंप म्यांनमार, थाईलैंड 28 मार्च। (संदर्भ– गूगल. कॉम)

केवल यही नहीं तो मानव ने बड़ी–बड़ी कारखानों और शहरीकरण से पृथ्वी का जो मूल रूप है, उसके साथ छेडखानी कर जल, वायु और मिट्टी प्रदूषण फैलाया है। जल में रहने वाले जलचर प्राणी और सूक्ष्मजीवों को खतरा पहुँचा है। उसी प्रकार वह मिट्टी जिसे एक सेंटीमीटर बनने को हजारो साल लगते है उसे एक मिनिट मे बहा दिया जाता है। जंगल काटना, जमीन खनन करना इससे मिट्टी का बहाव होता है इसका विपरीत परिणाम हमारे भविष्य और आने वाले पीढियों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाला है। वक्त रहते ही मानव को अपनी गलतियाँ सुधारना जरुरी है जिसके लिए प्रकृति के हित और उसकी संरक्षण के लिये योजना बनाना अनिवार्य है।

रिपोर्ट

हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर में "हिन्दी दिवस" 16/09/2025 को बड़े उत्साहपूर्ण वातावरण में डॉ. विजय नामदेव वाघमारे, निदेशक भा.कृ.अनु.प.– के.क.अनु.सं. की अध्यक्षता में मनाया गया। इस अवसर पर डॉ. विजय नामदेव वाघमारे, निदेशक महोदय जी के साथ डॉ. जी. टी. बेहेरे, विभाग प्रमुख (फसल संरक्षण विभाग), डॉ. अर्जुन तायडे, विभाग प्रमुख (फसल उत्पादन विभाग), डॉ. विनीता गोतमारे, प्रभारी, विभाग प्रमुख (फसल सुधार विभाग), डॉ. के. महादेवा रेड्डी, प्रभारी (कृषि विज्ञान केंद्र), श्री राकेश जाटव (वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी), श्री आर. वी. सलामे, प्रभारी (प्रक्षेत्र विभाग), डॉ. मयूर मेश्राम, वरिष्ठ तकनीकी सहायक मंच पर सादर मंचासीन थे। इस कार्यक्रम का शुभारंभ मंचासीन महानुभावों द्वारा दीप प्रज्ज्वलन करके किया गया।



चित्र 1 : निदेशक महोदय डॉ. विजय नामदेव वाघमारे, एवं मंचासीन महानुभावों द्वारा दीप प्रज्ज्वलन

सभी मंचासीन मान्यवरों का स्वागत पुष्पकलिका देकर किया गया। इस कार्यक्रम में परिषद से प्राप्त माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार, श्री शिवराज सिंह चौहान जी का हिन्दी दिवस 2025 का संदेश संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य श्री भुमेश्वर फंदे जी द्वारा सभा में पढ़ा गया।

इस कार्यक्रम के अध्यक्ष डॉ. विजय नामदेव वाघमारे जी ने सभा को संबोधित करते हुए राजभाषा हिन्दी के महत्व पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि हिन्दी न केवल हमारी राजभाषा, बल्कि यह हमारे

सांस्कृतिक वैभव एवं जन–जन की भाषा है। हिन्दी को संविधान में राजभाषा का दर्जा प्राप्त है। जिसके प्रचार–प्रसार के लिए एक राजभाषा संसदीय समिति भी गठित है। हमे अपनी मातृभाषा के साथ–साथ राजभाषा को भी बढ़ावा देना चाहिए। राजभाषा के प्रचार प्रसार में मैथली शरण गुप्त, तुलसीदास जैसे कवि एवं हिन्दी साहित्यि प्रेमियों का बड़ा योगदान है। उनके योगदान ने हिन्दी भाषा को बढ़ावा देकर इसे समृद्ध बनाया है। साथ ही उन्होंने सभी अधिकारी एवं कर्मचारियों को अपना कार्य हिन्दी में करने के लिए प्रोत्साहित किया ।



चित्र 2 : निदेशक महोदय डॉ. विजय नामदेव वाघमारे सभा को हिन्दी दिवस के अवसर पर संबोधित करते हुए

इस समारोह के अंतर्गत एक हिन्दी कार्यशाला का भी आयोजन किया गया, जिसमें संस्थान के अधिकारी एवं कर्मचारियों ने अपनी सक्रिय भागीदारी दर्ज की। इस कार्यशाला के प्रमुख वक्ता डॉ. मयूर कुमार मेश्राम जी ने प्रकृति, जीवन और किसान किस तरह एक दूसरे से जुड़े है उसका गणित सभा को बताया। उन्होंने कहा की प्रकृति, जीवन और किसान तीनों मिलकर धरती को स्वर्ग बनाते है।

इस कार्यक्रम का कुशल संचालन श्रीमती रचना देशमुख, तकनीकी अधिकारी द्वारा किया गया तथा इसका समापन प्रशासनिक अधिकारी एवं सदस्य, संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति श्री पुनीत कुमार जी के धन्यवाद प्रस्ताव से हुआ।

वर्ष 2025 की कार्यशालाएं

'जैविक खेती के लिए केंचुआ खाद निर्माण एवं लाभ' विषय पर आयोजित 'एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला' रिपोर्ट

भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर कार्यालय में अत्यंत उत्साही वातावरण में एक दिवसीय (दिनांक 12 फरवरी, 2025) हिंदी कार्यशाला का आयोजन संस्थान में किया गया।



चित्र 1 : संबंधित वैज्ञानिक जानकारी देते हुए

इस कार्यशाला में उपस्थित विद्यार्थी एवं संस्थान के कर्मचारियों को प्रमुख वक्ता डॉ. ए. मनिकंडन, वरिष्ठ वैज्ञानिक, ने वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन एवं उसके कृषि महत्व विषय पर एक दिवसीय कार्यशाला आयोजित की। उन्होंने केंचुआ खाद की वैज्ञानिक विधि, आवश्यक कच्ची सामग्री, बेड निर्माण, नमी एवं तापमान प्रबंधन तथा गुणवत्ता बनाए रखने के उपायों पर विस्तार से जानकारी दी। प्रतिभागियों को जैविक खेती में वर्मीकम्पोस्ट के उपयोग, मिट्टी की उर्वरता सुधार एवं फसल उत्पादन वृद्धि के लाभ समझाए गए। व्यावहारिक सत्र में वर्मीकम्पोस्ट इकाई का प्रत्यक्ष प्रदर्शन किया गया, जिससे तैयार खाद की पहचान और उपयोग को सीखा। अंत में प्रश्नोत्तर सत्र आयोजित हुआ, जिसमें प्रतिभागियों की जिज्ञासाओं का समाधान किया गया तथा जैविक खेती अपनाने के लिए प्रेरित किया गया।



चित्र 2 : कार्यशाला का परिदृश्य

'प्रकृति, मानव और कृषि' विषय पर आयोजित 'एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला' रिपोर्ट

भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर कार्यालय में बड़े ही उत्साहपूर्ण वातावरण में एक दिवसीय (दिनांक 24 जून, 2025) हिंदी कार्यशाला का आयोजन संस्थान के सेमिनार हॉल में किया गया। यह कार्यशाला डॉ. वि. ना. वाघमारे, निदेशक, भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर की अध्यक्षता एवं संस्थान के अधिकारियों/कर्मचारियों की प्रमुख उपस्थिति में सम्पन्न हुई। इस कार्यशाला की प्रमुख वक्ता फसल उत्पादन विभाग की तकनीकी अधिकारी श्रीमती रचना देशमुख (मणिकंडन) थीं।



चित्र 1 : निदेशक महोदय का संबोधन

सर्वप्रथम अपने स्वागत भाषण में डॉ. दीपा लाल, विषय विशेषज्ञ एवं संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की सदस्या ने कार्यक्रमाध्यक्ष डॉ. वि. ना. वाघमारे, निदेशक, भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर एवं इस कार्यशाला में सहभागी समस्त हिंदी प्रेमी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का हार्दिक स्वागत करते हुए कार्यशाला के मुख्य उद्देश्य पर प्रकाश डाला तथा कार्यशाला की प्रमुख व्याख्याता श्रीमती रचना देशमुख (मणिकंडन) का परिचय देकर कार्यशाला शुरू करने के लिए आमंत्रित किया।



चित्र 2 : कार्यशाला का परिदृश्य

कार्यशाला की वक्ता श्रीमती रचना देशमुख (मणिकंडन) ने अपने कार्यशाला के विषय अनुरूप सभा में उपस्थित सभी श्रोताओं को प्रकृति के पहलुओं के बारे में बताया जिसमें उन्होने कहां की प्रकृति पर मानव का



चित्र 3 : वक्ता द्वारा संबोधन

ही नहीं बल्कि सभी पशु पक्षियों का अधिकार है। उन्होंने पाषाणकाल, सभ्यता, संस्कृति तथा संस्कृति में छिपे तथ्य, पहलुओं तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण को समझाया। कैसे पेड़, पौधे, फूल, पशु इत्यादि संस्कृति से जुड़े है। उदाहरण के तौर पर उन्होंने बरगद (वट वृक्ष) के पेड़ की पूजा के बारे में बताया जिसे महारष्ट्र में वटपोर्णिमा कहते है जिसमें उन्होंने पूजा के महत्व के साथ यह भी कहा की यह एक विशाल और दीर्घायु वृक्ष है जो पर्यावरण के लिए कई तरह से फायदेमंद है। वैज्ञानिक रूप से, बरगद का पेड़ अधिक मात्रा में ऑक्सीजन छोड़ता है, जिससे वातावरण शुद्ध होता है और आसपास के क्षेत्र में रहने वाले लोगों के स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है। उसी तरह फूल से जुड़े त्योहार केरल का ओणम और उत्तराखंड में मनाने वाले फूलों के त्योहार के बारे में बताया जिसे फुलदेयी त्योहार कहते है। उन्होंने नाईल नदी के किनारे कृषि सभ्यता की नींव रखने वाले मिस्त्र एवं मेसोपोटामिया की सभ्यता का उल्लेख किया तथा साथ ही प्राकृतिक खेती, जैविक खेती, हरित क्रांति, प्राकृतिक आपदा जैसे विभिन्न घटकों पर विस्तृत जानकारी दी।

डॉ. वि. ना. वाघमारे, निदेशक, भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में इस अवसर पर हिंदी की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए सभा को संबोधित करते हुए कहा की संस्थान में हिंदी को बढ़ावा देने तथा हिंदी पत्रिका को प्रकाशित करने में इस तरह की कार्यशाला फायदेमंद होगी। उन्होंने प्रमुख व्याख्याता श्रीमती रचना देशमुख (मणिकंडन) की सरहाना की, कि उन्होंने सभा के समक्ष बहुत अच्छे से अपने कार्यशाला के विषय को विस्तारित किया। तथा कहा की वह इसी विषय और जानकारी को लेख के रूप में तैयार कर हिंदी अनुभाग द्वारा प्रकाशित होने वाली पत्रिका के लिए दे सकती है।

इस हिंदी कार्यशाला का कुशल संचालन एवं धन्यवाद प्रस्ताव डॉ. दीपा लाल, विषय विशेषज्ञ एवं संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर ने किया।

'प्रकृति, जीवन और किसान' विषय पर आयोजित 'एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला' रिपोर्ट

भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर कार्यालय में उमंग और जोश से सराबोर वातावरण में डॉ. वि. ना. वाघमारे, निदेशक, भा.कृ.अनु.प.– के. क. अनु. सं., नागपुर की अध्यक्षता में 16 सितंबर, 2025 को प्रशिक्षण हॉल में संस्थान के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस अवसर पर प्रमुख वक्ता के रूप में डॉ. मयुर कुमार मेश्राम, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, सभी विभागों के विभाग प्रमुख एवं समिति के सदस्य प्रमुख रूप से उपस्थित थे।

सर्वप्रथम अपने स्वागत भाषण में श्रीमती रचना देशमुख, तकनीकी अधिकारी ने कार्यक्रमाध्यक्ष डॉ. वि. ना. वाघमारे निदेशक, भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर एवं इस कार्यशाला में सहभागी समस्त हिंदी प्रेमी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का हार्दिक स्वागत करते हुए कार्यशाला के मुख्य उद्देश्य पर प्रकाश डाला तथा कार्यशाला के प्रमुख वक्ता का परिचय देकर कार्यशाला शुरू करने के लिए बधाई दी।



चित्र 1 : डॉ. मयुर कुमार मेश्राम कार्यशाला में अपना विषय विस्तारित करते हुए

हिंदी कार्यशाला के प्रमुख वक्ता डॉ. मयुर कुमार मेश्राम ने अपने कार्यशाला के विषय अनुरूप सभा में उपस्थित सभी श्रोताओं को प्रकृति, जीवन और किसान किस तरह एक दूसरे से जुड़े है उसका गणित सभा को बताया, उन्होंने कहा की प्रकृति, जीवन और किसान तीनों मिलकर धरती को स्वर्ग बनाते है। प्रकृति हमारे अस्तित्व का मूल आधार है। प्राकृतिक संसाधनों के बिना जीवन की कल्पना, ऐसे कई पहलुओं के बारे में विभिन्न उदाहरण दिये। किसान अन्नदाता है। किसान सिर्फ मानव का ही नहीं बल्कि पशु–पक्षियों का भी पेट भरता है। हमें किसानों का सम्मान करना चाहिए। वह हर मौसम में खेती करता है। सरकार भी किसानों के हित में सोच रही है जैसे बहुत ज्यादा रसायनों का उपयोग ना करके जैविक खेती को बढ़ावा देना, उन्नत खेती, बीज और सिंचाई की सुविधा। उन्होंनें सरकार द्वारा चलाये जा रहे किसान परियोजनाओं के बारे में भी विस्तृत जानकारी दी।



चित्र 2 : कार्यशाला में उपस्थित अधिकारी/कर्मचारी एवं डॉ. वि. ना. वाघमारे, निदेशक अध्यक्षीय संबोधन करते हुए

डॉ. वी. एन. वाघमारे, निदेशक, भा.कृ.अनु.प.– – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में हिंदी के महत्व पर प्रकाश डालते हुए सभा को संबोधित किया। उन्होंने हिंदी अनुभाग एवं प्रमुख वक्ता श्री मयूर कुमार मेश्राम के प्रयास की सराहाना की, साथ ही संस्थान में राजभाषा हिंदी के कार्यालयीन उपयोग को बढ़ाने के लिए अधिकारियों एवं कर्मचारियों को प्रेरित किया।

इस हिंदी कार्यशाला का कुशल संचालन श्रीमती रचना देशमुख, तकनीकी अधिकारी एवं धन्यवाद प्रस्ताव श्री पुनीत कुमार, प्रशासनिक अधिकारी, एवं सदस्य, संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति, भा.कृ.अनु.प. – के.क.अनु.सं., नागपुर ने किया।

संविधान दिवस के उपलक्ष में 'संवैधानिक अधिकार एवं सामाजिक न्याय' विषय पर आयोजित 'एक दिवसीय हिंदी कार्यशाला' रिपोर्ट



चित्र 1 : निदेशक डॉ. विजय नामदेव वाघमारे, सभी प्रभागाध्यक्षों तथा कर्मचारियों के साथ प्रस्तावना वाचन करते

भा.कृ.अनु.प.– केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर द्वारा 26 नवम्बर 2025 को संविधान दिवस के अवसर पर "संवैधानिक अधिकार एवं सामाजिक न्याय" विषय पर एक विशेष व्याख्यान का आयोजन किया गया। इस व्याख्यान/कार्यशाला का उद्देश्य संविधान में निहित मूल अधिकारों, कर्तव्यों तथा सामाजिक न्याय की अवधारणा के प्रति अधिकारियों एवं कर्मचारियों में जागरूकता बढ़ाना था।

कार्यशाला का शुभारंभ भारत के संविधान की प्रस्तावना हिन्दी भाषा में सामूहिक वाचन से हुई, जिसे संस्थान के निदेशक महोदय डॉ. विजय नामदेव वाघमारे, सभी प्रभागाध्यक्षों तथा कर्मचारियों की गरिमामयी उपस्थिति में सम्पन्न किया गया। इसके उपरांत अतिथि वक्ता का परिचय कराया गया। साथ ही डॉ. विजय नामदेव वाघमारे, निदेशक महोदय द्वारा अध्यक्षीय सम्बोधन किया गया।



चित्र 2 : निदेशक महोदय, अध्यक्षीय सम्बोधन करते हुए एवं अधिवक्ता श्री रामटेके व्याख्यान करते हुए

इसके उपरांत इस अवसर पर मुख्य अतिथि एवं वक्ता अधिवक्ता श्री बोधी रामटेके, जो एक प्रतिष्ठित अधिवक्ता एवं शोधकर्ता हैं, ने विषय पर विस्तृत एवं विचारोत्तेजक व्याख्यान प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने संबोधन में भारतीय संविधान में प्रदत्त मूल अधिकारों, विशेषकर समानता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार तथा शोषण के विरुद्ध अधिकार पर प्रकाश डाला। साथ ही उन्होंने सामाजिक न्याय की अवधारणा, इसके संवैधानिक प्रावधानों तथा वंचित एवं हाशिए पर रहने वाले समुदायों के सशक्तिकरण में इसकी भूमिका को सरल उदाहरणों के माध्यम से समझाया।

अधिवक्ता श्री रामटेके जी ने यह भी बताया कि संवैधानिक अधिकार केवल कानूनी प्रावधान नहीं हैं, बल्कि एक न्यायपूर्ण, समतामूलक एवं समावेशी समाज के निर्माण का आधार हैं। उन्होंने युवाओं एवं शासकीय संस्थानों में कार्यरत कर्मचारियों से संविधान के मूल्यों को अपने कार्य और व्यवहार में अपनाने का आह्वान किया।

इस कार्यशाला का कुशल संचालन श्री चंद्रशेखर मुंडाफले, वरिष्ठ तकनीशियन द्वारा किया गया तथा धन्यवाद ज्ञापन डॉ. देबाशिष पॉल, वैज्ञानिक ने किया।

कार्य निरीक्षण एवं मार्गदर्शन

भा.कृ.अनु.प.-केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, सिरसा, हरियाणा में हिन्दी कार्य निरीक्षण एवं मार्गदर्शन समिति का दौरा

भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, सिरसा, हरियाणा में डॉ. वी. एन. वाघमारे, निदेशक, भा.कृ.अनु.प. – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर एवं समिति द्वारा दिनांक 10–10–2025 को हिन्दी कार्य निरीक्षण एवं मार्गदर्शन दौरा किया गया। समिति में डॉ. आर. राजा, प्रधान वैज्ञानिक, भा.कृ.अनु.प. – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, कोयंबटुर, तमिलनाडु; डॉ. जी. टी. बेहेरे, प्रधान वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, भा.कृ.अनु.प. – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर एवं डी. टी. नगराले, वरिष्ठ वैज्ञानिक, भा.कृ.अनु.प. – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर शामिल थे। कार्यक्रम के शुरुआत में डॉ. अमरप्रीत सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं नामित हिंदी कार्यकारी अधिकारी ने अपना स्वागती भाषण दिया। इसके उपरान्त डॉ. ऋषि कुमार, प्रधान वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष ने भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, सिरसा, हरियाणा द्वारा किये जा रहे हिंदी कार्यों का विवरण प्रस्तित किया। इसमें भा.कृ. अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, सिरसा, हरियाणा द्वारा किये जा रहे हिंदी कार्यों के बारे में विस्तृति रूप से जानकारी दी गई। डॉ. वी. एन. वाघमारे, निदेशक, भा.कृ.अनु.प. – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर ने प्रशासनिक कार्यों में हिंदी भाषा का उपयोग एवं हिंदी कार्यों की समीक्षा पर चर्चा की। संस्थान के निदेशक महोदय डॉ. वी. एन. वाघमारे एवं समिति द्वारा हिंदी कार्यों को और कुशलता पूर्वक करने के लिए सुझाव दिए गए। इसके उपरान्त डॉ. वी. एन. वाघमारे, निदेशक, भा.कृ.अनु.प. – केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर एवं समिति द्वारा हिंदी कर्शालाओं के दौरान आयोजित कि गयी विभिन्न पतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरित किये। इसके उपरान्त सभी प्रतिभागीओं ने हिंदी कार्यों पर



चित्र 1 : भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, सिरसा, हरियाणा में दिनांक 10–10–2025 को हिन्दी कार्यनिरीक्षण एवं मार्गदर्शन समिति का दौरा

विचार– विमर्श किया। इस कार्यक्रम में भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, सिरसा,

हरियाणा के वैज्ञानिक, प्रशासनिक एवं तकनीकी कर्मचारी व अधिकारी, कुशल सहायक कर्मचारी, वाई पी 1, 2 एवं दैनिक वेतनभोगी शामिल हुए। कार्यक्रम के समापन पर डॉ. सुभाष चंद्र, वैज्ञानिक ने धन्यवाद ज्ञापन किया।



चित्र 2 : भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, सिरसा, हरियाणा में दिनांक 10–10–2025 को हिन्दी कार्यनिरीक्षण एवं मार्गदर्शन समिति द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरण

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति



डॉ. विजय नामदेव वाघमारे
निदेशक
सभापति



डॉ. जी. टी. बेहेरे
विभागप्रमुख
फसल संरक्षण विभाग
सदस्य



डॉ. अर्जुन तायडे
विभागप्रमुख
फसल उत्पादन विभाग
सदस्य



डॉ. विनिता गोतमारे
विभागप्रमुख (प्रभारी)
फसल सुधार विभाग
सदस्य



डॉ. रचना पाण्डे
वरिष्ठ वैज्ञानिक
सदस्य



श्रीमती रमा अय्यर
निजी सचिव
सदस्य



श्रीमती चैताली रोडगे
तकनीकी अधिकारी
सदस्य



श्री भुमेश्वर फंदे
तकनीकी सहायक
सदस्य



श्री आशुतोष मिश्रा
तकनीशियन
सदस्य



श्रीमती स्वाती दीक्षित
प्रभारी, हिंदी अनुभाग एवं
मुख्य तकनीकी अधिकारी
सदस्य सचिव



भा.कृ.अनु.प–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर (महाराष्ट्र)

पोस्ट बैग नंबर 2, शंकर नगर पोस्ट ऑफिस, नागपुर–440010

दूरभाष: 07103-275536/38 | **फैक्स:** 07103-275529

ई मेल: cicrnagpur@gmail.com| **वेबसाईट:** www.cicr.org.in

प्रकाशन: दिसंबर 2025 | ISBN: 978-93-93826-54-1

ISBN: 978-93-93826-54-1

All rights reserved. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system, or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying or otherwise without the prior permission of the ICAR-CICR/ ICAR.